नवयुग का प्रभात

(The Edge of Tomorrow – by Thomas A. Dooley, M. D.)

मूल लेखक

थामस ए. डूली, एम्. डी.

अनुवादक

श्री प्रकाश

पर्ल पब्लिकेशन्स प्राइवेट लिमिटेड, बम्बई १

मूल्य : .७५ नये पैसे

आमुख

छः अमरीकी युवकों की इस सच्ची कहानी का घटना-स्थल सुदूरपूर्व में लाओस का शाही राज्य है। आँकड़े और तथ्य इस कहानी में प्रस्तुत नहीं किये गये हैं और न ऐतिहासिक विवरण ही दिया गया है। यह उन छः अमरीकियों की आपबीती है जिन्होंने लाओस की जनता के साथ और जैसा कि हम आगे देखेंगे, संसार भर के अगणित लोगों के साथ, आत्मीयता स्थापित की। पहले मैं इस आत्मीयता की विचारधारा तथा इस विचारधारा के जनक के विषय में कुछ बता दूँ।

अपनी डाक्टरी शिक्षा के प्रारम्भिक दिनों से डा. अल्बर्ट स्वित्जर का महान सेवा-कार्य मेरे जीवन में प्रेरणा का एक अजस्र स्रोत रहा है। उनसे पत्र-व्यवहार करके मैंने महान संतोष का अनुभव किया था और हाल में पहली बार उनसे भेंट करके मैंने अपने जीवन के महानतम हर्ष का अनुभव किया। अत्यन्त संवेदनशील और भव्य व्यक्तित्व है उनका।

"पीड़ा के मुक्तभोगियों की आत्मीयता" की धारणा डा. स्वित्जर की सबसे महत्त्वपूर्ण देन है। मैं और मेरे साथी जहाँ भी गये हैं वहीं हमने यह "आत्मीयता" पायी है। संसार के सभी व्यक्ति जो शारीरिक पीड़ा और दुख-दर्द का व्यक्तिगत अनुभव कर चुके हैं, वे इस "आत्मीयता" के सदस्य हैं। लेकिन जो लोग इस पीड़ा से मुक्त हो चुके हैं, वे भी इस "आत्मीयता" के बंधन से मुक्त नहीं हुए हैं; अपितु जो लोग पीड़ा झेल रहे हैं उनकी सहायता करने का कर्तव्य उनके कंधों पर आ गया है।

रोगी अथवा रोग से मुक्ति प्राप्त करने वाले व्यक्ति ही नहीं, बल्कि सेवा-सुश्रूषा के द्वारा उनकी पीड़ा में भाग लेने वाले व्यक्ति भी इस आत्मीयता के सदस्य हैं। इस वर्ग से बचा ही कौन है? जिन लोगों को डाक्टरी सहायता प्राप्त नहीं है, उन्हें सहायता पहुँचाने का मानवीय कार्य इस "आत्मीयता" के सदस्यों पर है। डा. स्वित्जर की मान्यता है कि डाक्टरी पेशे के लोगों को दूर-दूर के देशों में जाकर ईश्वर और मानव के नाम पर आवश्यक सेवा-कार्य करना चाहिए।

अपने पेशे के कारण मैं भी इस "आत्मीयता" में सम्मिलित हो सका हूँ। दुनिया के सैकड़ों आदमियों ने हमारी लाओस सम्बधी कार्रवाई की बात जानकर तरह-तरह से हमारी सहायता की। ये लोग भी इस "आत्मीयता" में सम्मिलित थे, यद्यपि इन्हें स्वयं यह ज्ञात न था।

लोगों ने तरह-तरह की चीजें हमें भेजीं, जिनमें अधिकांश की हमें बहुत सख्त जरूरत थी। इन सब लोगों के प्रति आभार प्रदर्शन के अतिरिक्त और मैं अपनी कृतज्ञता स्वीकार कर ही कैसे सकता हूँ?

दर्जनों स्कूलों के छात्रों ने हमें हमारी अवश्यकताओं की अनेक वस्तुएँ भेजीं। कई बच्चों ने हमें सैकड़ों पौंड साबुन भेजा। इसीलिए हम प्रत्येक चर्म-रोगी को दवा के साथ साबुन भी दे सके।

कई डाक्टरों और नर्सों से हमें वे दवाइयाँ प्राप्त हुई जो औषधि-निर्माता नमूनों के तौर पर उन्हें भेजते थे। अस्पतालों की नर्सों से भी हमें औषधियों और उपकरणों की बहुत सहायता मिली। इतनी दूर पर बसे हुए लोगों के प्रति व्यक्तिगत दिलचस्पी हमें याद दिलाती रहती थी कि अपने उद्देश्यों में हम नितांत एकाकी नहीं थे।

एक स्कूल के छात्रों ने हमें सैकड़ों डालर की रकम भेजी, जिससे आयोन नामक बालक (देखिए अध्याय ६) के इलाज का खर्च लगभग पूरा हो गया। उन छात्रों को हम आयोन की प्रगति से सूचित करते रहे। आयोन यद्यपि उस स्कूल के नाम का उच्चारण नहीं कर सकता था, तथापि उसे ज्ञात था कि सैकड़ों अमरीकी बच्चे उसके उपचार की व्यवस्था कर रहे हैं।

मेरा एक पुराना नाविक साथी, लैरी एगेंस डूली मिशन के लिए जगह-जगह भाषण करके धन जमा करता रहा। इंग्लैंड और अमरीका के कई डाक्टर मुझे चिकित्सा-विज्ञान की नवीनतम खोजों से परिचित रखने के उद्देश्य से नयी किताबें व पत्र-पत्रिकाएँ भेजते थे। कुछ साहित्यिक पत्रिकाएँ भी आती थीं। रक्षा-उपमंत्री ई. पार्किन्स मैक्गवायर ने सैकड़ों डालर की धनराशि खास तौर से खाँसी की दवा के लिए भेजी थी।

१९५६ के सितम्बर में लाओस आते हुए मेरे साथियों को हवाई द्वीप में तीन महिलाओं ने एक दिन भोजन कराया और उनका स्वागत–सत्कार किया। उनमें से एक महिला श्रीमती स्प्रिंग ने होनोलूलू का एक दैनिक पत्र हमें भेजने की व्यवस्था की।

बिल सी. व्हाइट से मैक्सिको की यात्रा में मेरी भेंट हुई थी। मैं जब तक लाओस में रहा वह बराबर हमें चाकलेट के डिब्बे भेजता रहा।

अमरीकियों की सद्भावना और उत्तरदायित्व का बोध अक्सर विदेशों में अधिक प्रकट होता है। इसके अनुसार उन्होंने लोगों में बाँटने के लिए कपड़े, पेंसिलें,

मिठाइयाँ आदि जो वस्तुएँ भेजीं, उनसे अमरीका के प्रति बहुत सद्भावना उत्पन्न हुई।

एक किंडरगार्टन स्कूल के नन्हे–मुन्ने बालकों ने हमें खिलौने भेजे। उनकी अध्यापिका कुमारी मिल्ड्रेड वाल्डन का विश्वास था कि अन्तर्राष्ट्रीय उत्तरदायित्व की भावना जगाने के लिए बालकों का ज्यादा बड़ा होना आवश्यक नहीं है। जहाँ ऐसी अध्यापिकाएँ हों, वहाँ बच्चों की शिक्षा के विषय में किसी प्रकार की चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं।

थाईलैंड से एक अंधी लड़की आरोरा ली ने कहीं से एक अमरीकी डालर प्राप्त करके हमें भेजा था। श्रीमती आइवा गोर्डन ने हम सबको दो-दो जोड़ी खाकी कपड़े भेजे थे। उनकी हमें बड़ी जरूरत थी।

हाँगकाँग और होनोलूलू के 'रोटेरियनों' ने हमें धन भेजा। हवाई नागरिक संघ ने ४७५ पौंड, घाव पर बाँधने की पट्टियाँ भेजीं, जिन्हें एडमिरल स्टम्प ने हमारे लिए सौगोन तक पहुँचाया। ये सब चीजें एशियावालों को बताती हैं कि अमरीकियों की स्वाभाविक उदारता और परोपकारी प्रवृत्ति उनके देश की सीमाओं के पार विदेशों तक भी पहुँचती है।

लास एंजेलस का एक कैथोलिक युवक-संघ प्रति सप्ताह अमरीकी 'पैनकेक' (एक प्रकार की मिठाई) और शरबत हमें भेजता रहा।

नाटर डेम विश्वविद्यालय की श्रीमती एर्मा कोयना हर महीने कुछ-न-कुछ भेजा करती थीं। यदि स्वयं खरीदकर नहीं भेज पातीं, तो दवाओं के जो सेल्समैन विश्वविद्यालय के दफ्तर में आते थे, उनसे भिजवाती थीं।

ऐसे मित्रों की मेहरबानी से ही मेरा धन बहुत दिन चल सका और मेरा दल आयोजित छः महीनों से कहीं अधिक समय तक लाओस में काम कर सका।

हमारे दल के लिए संसार भर के बहुत-से भाइयों, बहनों, मित्रों, अध्यापकों, हितचिन्तकों ने न जाने कुल मिला कर कितने घंटे ईश्वर से प्रार्थनाएँ की होंगी।

लाल चीन की कैद से (जहाँ उनके हाथ पत्थरों से कुचल दिये गये थे) किसी प्रकार मुक्ति पाकर लौटने वाले एक पादरी हमेशा प्रभु ईसा मसीह से हमारे लिए प्रार्थना किया करते थे। न्यू जर्सी में एक यहूदी लड़की भी हमारे लिए अक्सर प्रार्थना करती थी। न जाने कितने गिर्जाघरों में लोगों ने हमारे लिए मोमबतियाँ जलायीं। इन सब लोगों और भगवान के हम अत्यन्त आभारी हैं।

मैं चाहता तो बहुत हूँ कि हमारी सहायता करने वाले प्रत्येक व्यक्ति और संगठन के प्रति आभार प्रकट करूं; परन्तु इतना स्थान नहीं है। अतः केवल कुछ नाम उदाहरण के रूप में ही मैं यहाँ दे पाया हूँ। इतना ही कह सकता हूँ कि मैं उन सबकी सहायता के लिए उनका ऋणी हूँ। अन्त में मैं यहाँ वह स्तुति ही प्रस्तुत करता हूँ जो लाओस में हमें निरंतर प्रेरणा देती रही और जो इस पुस्तक के लिए समुचित रहेगी :

हम, जो तेरे योग्य बालक हैं,
उन्हें बुद्धिमानी और वाणी का वरदान दे,
सेवा करनेवाले हाथ व हृदय,
शिक्षा देने वाले होठ और जिह्वा दे!

थामस ए. डूली, एम्. डी.

बाक्स २,
टाइम्स स्क्वेयर
न्यू यार्क, एन. वाई.

अनुक्रमणिका

ची न
उत्तर वीट नाम
हनोई
नाम-था नदी
नाम-था
लाओस
वाँग वियेंग
वियंतियेन
१७°
थाईलेंड
कम्बोदिया
दक्षिन
वीट नाम
सैगोन
० मील २०० ४०० ६००

नवयुग का प्रभात

अध्याय १

वचनों का निर्वाह

प्रशान्त महासागर के ऊपर बड़े से आरामदेह हवाई जहाज में पश्चिम की ओर उड़ते हुए रात तेजी से गुज़रती है। यात्री अपनी किताबें और बस्ते रख देते हैं; पढ़ने की बत्तियाँ एक-एक करके बुझ जाती हैं। सैर के लिए होनोलूलू, और व्यापार के लिए टोकियो और मनीला जानेवाले यात्री इंजनों की अनवरत ध्वनि के ताल पर शान्तिपूर्वक सो जाते हैं।

परन्तु मैं वह यात्री हूँ, जिसकी आँखों में नींद नहीं; मेरे मस्तिष्क पर वे स्मृतियाँ छायी हुई हैं, जो स्वप्नों से अधिक सम्मोहक हैं। मैं आँखें बन्द करता हूँ और सन् १९५५ के बसन्त की, हैफोंग के दीन-हीन शरणार्थी शिविर की स्मृतियाँ मुझे घेर लेती हैं। नौसेना ने हमारा नाम रखा था "काकरोच (तिलचटा) कार्रवाई" जिसके सदस्य थे, नौसेना का एक युवक डाक्टर जिसको इस पेशे में अभी जुम्मा–जुम्मा चार दिन भी नहीं हुए थे; चार युवक सैनिक जिन्होंने कुछ महीने अस्पताली टुकड़ी के लिए तालीम पायी थी; और पाँच लाख मैल-कुचेले बीमार, क्षत–विक्षत एशियाई, जो साम्यवाद की अमानवीय क्रूरताओं से पनाह पाने के लिए भाग रहे थे।

यह था उत्तरी वियतनाम का वह दौर, जिसे "स्वतंत्रता की ओर" की विडम्बनापूर्ण संज्ञा दी गयी थी। डूली (स्वयं लेखक) वास्तव में वहीं बालिग़ हुआ।

कितनी बार मैं यह कहानी कह चुका हूँ? मैंने इसे "डिलीवर अस फ्राम ईवल" (लेखक की एक दूसरी किताब) में तो बयान किया ही है, लेकिन जहाँ कहीं और जब कभी अमरीकियों ने थोड़ी-सी भी उत्सुकता दिखाई, वहीं इसे सुनायी; परन्तु अहंकार की भावना से कभी नहीं। इसका कारण यह है कि मृतप्राय हैफोंग में हमने जो कुछ किया, उससे अधिक महत्व उसका था, जो हमने वहाँ सीखा।

हमने सरल-सहज, ममतामयी, प्रेमपूर्ण सेवा से—नवयुवकों के हाथों नौसिखुए ढग से किये गये प्रारम्भिक ढंग के उपचार—एक राष्ट्र के भय और घृणा को मैत्री और भाईचारे में बदलते देखा था। हमने डाक्टरी सहायता में एक राष्ट्र के हृदय और मानस में घर बना लेने की शक्ति देखी थी। हमने उसे मानव के भाईचारे के आदर्श को ऐसा मूर्त्त रूप प्रदान करते देखा था, जिसे सीधे-सादे लोग आसानी से समझ सकते थे।

मेरे लिए वह अनुभव प्रकाश की उजली किरण के समान था। उसके कारण मुझे अपने डाक्टर होने पर गर्व हुआ; वह अमरीकी डाक्टर, जिसे डाक्टरी सहायता की महान सम्भावनाओं और उसकी ईसा मसीह जैसी शक्ति और सादगी के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। क्या यही वह कारण था कि विदेश-सहायता के आयोजक अपनी अरबों डालर की योजनाओं के बावजूद इसे समझ नहीं पाते थे।

मैंने इतनी तीव्रता से उसका प्रचार किया कि मेरे हितैषी चिन्तित हो उठे। मेरे मित्रों ने कहा—"देखो डूली, यह सब बहुत हो चुका। अब तुम जम कर कब बैठोगे?" मेरी माँ ने मुझे उन चीजों की याद दिलाई जिनकी मुझे सदा से कामना थी और जिन्हें अब मैं आसानी से प्राप्त कर सकता था—घर, पत्नी, बच्चे, डाक्टरी की अच्छी प्रैक्टिस और सम्भवतया शिकार के कुछ बढ़िया घोड़े भी। मेरे पुराने विश्वसनीय डाक्टरी सलाहकार ने कहा कि अगर मुझे सफल विकलांगता—विशेषज्ञ बनना है, तो उत्तर-स्नातक शिक्षा प्रारम्भ करूँ।

मैं उन्हें कैसे समझाता कि मेरे लिए वे बातें सब बदल चुकी थीं?

मुझे राबर्ट फ्रास्ट की वे पंक्तियाँ याद हैं, जो उद्वेग के उन दिनों में मेरे मस्तिष्क में गूँजा करती थीं:

जंगल सुन्दर, घने और विशाल है,
परन्तु मुझे अपने वचनों का निर्वाह करना है,
और सोने से पहले मीलों जाना है।

मुझे अपने वचन याद थे। मुझे मालूम था कि उनका पालन करने के लिए मुझे मीलों जाना पड़ेगा, वापस दक्षिण-पूर्व एशिया को, आगामी कल के किनारे पर, जहाँ भविष्य बन भी सकता है और बिगड़ भी।

१९५६ की फ़रवरी में, एक दिन शाम को जब मुझे एशिया से घर लौटे कुछ महीने ही हुए थे, मैं वाशिंगटन, डी. सी., में वियतनाम के राजदूतावास में एक सहभोज में सम्मिलित हुआ। उस रात मेरा अन्तर कह रहा था कि उस सहभोज

में जो कुछ भी होगा, उसी पर डाक्टरी दल लेकर इंडो-चीन लौटने की मेरी कामना निर्भर रहेगी।

मुझे खेद था कि मैं वियतनाम नहीं लौट सकता था। उत्तरी प्रदेश अब 'बाँस के आवरण' के पीछे बन्द था, और दक्षिण में मेरी आवश्यकता नहीं थी। वहाँ "फ़िलिपिनोज़ भ्रातृत्व अभियान" (फ़िलिपिनोज़ आपरेशन ब्रदरहुड) के डाक्टरी दल आश्चर्यजनक कार्य कर रहे थे। तो मैं कहाँ काम करके अपने इंडो-चीन के ज्ञान का सदुपयोग कर सकता था? कम्बोदिया में? लाओस में? कठिन राजनीतिक परिस्थिति के कारण एक अमरीकी होने के नाते क्या वहाँ मेरा स्वागत होगा?

इन प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करने में मेरी सहायता करने के लिए मेरे मित्र, वियतनाम के राजदूत त्रान वान चुओंग ने इस सहभोज का आयोजन किया था, जिसमें कम्बोदिया और लाओस के अनेक कूटनीतिक अधिकारियों को उन्होंने निमंत्रित किया था। उसमें काफ़ी समय तक मैं अपने डाक्टरी दल के बारे में विचार और उससे सम्बन्धित अपनी योजना बताता रहा—छोटा-सा दल जिसके लिए सारी पूँजी खानगी होगी (अधिकांश मेरी व्यक्तिगत) और जिससे सरकार अथवा धार्मिक संस्थाओं का कोई सम्बन्ध नहीं होगा। दल में मैं स्वयं हूँगा और कुछ वे युवक अमरीकी होंगे, जो उत्तरी वियतनाम में मेरे साथ काम कर चुके थे।

हम अमरीका के नागरिक मात्र होंगे और खेतों या गाँवों में, जंगलों या पहाड़ों में, जहाँ भी हमारी आवश्यकता होगी, वहीं उस देश की सीधी-सादी जनता के बीच जाकर उनकी सेवा करेंगे। यदि हम कुछ कर सके, तो कदाचित् उससे दूसरे अमरीकियों को प्रेरणा मिलेगी कि जनता द्वारा जनता की सेवा के आधार पर अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के हमारे इस उदाहरण का अनुकरण करें।

कम्बोदिया के अधिकारी शिष्टता के नाते मेरी योजना सुनते रहे; कोई मत उन्होंने प्रकट नहीं किया। परन्तु मैंने देखा कि लाओस के राजदूत, माननीय औरोत सूवान्नावोंग मेरी बातों को बड़े ध्यान और दिलचस्पी से सुन रहे थे।

उन्होंने पूछा—"डाक्टर डूली, आप युवक हैं, नौसेना से अभी निवृत्त हुए हैं, भविष्य आपके सामने है। फिर क्यों आप यह त्याग करने को उत्सुक हैं? स्पष्टतया आप दे बहुत रहे हैं, परन्तु आपको मिलेगा क्या?"

एक बार फिर मैंने अपना यह निश्चित मत समझाने का प्रयत्न किया कि जनता द्वारा जनता की सेवा के आधार पर प्रस्तुत की गयी डाक्टरी सहायता पूर्व और पश्चिम को मैत्री के अटूट बंधन में बाँध सकती है; यदि यह सत्य है, तो हम अमरीकी डाक्टरों को इस दिशा में अपने कर्त्तव्य का पालन करना है। चूँकि मैं

दक्षिण-पूर्व एशिया में काम कर आया था और वहाँ की आवश्यकताओं को स्वयं देख आया था, इसलिए व्यक्तिगत रूप से मेरा कर्तव्य मेरे सामने स्पष्ट था, निश्चित था। इसके अतिरिक्त मैं युवक था, कोई बंधन मेरे लिए नहीं था; जहाँ आवश्यकता हो वहीं जाने के लिए मैं स्वतंत्र था। एकाएक मुझे बोटस्वेन जहाज़ के एक अफसर, नोर्मन बेकर के वे शब्द याद आ गये, जो उसने ऐसे ही किसी प्रश्न के उत्तर में कहे थे; मैंने उन्हें लाओस के राजदूत के समक्ष दोहरा दिया –

"जो लोग इतने भाग्यशाली नहीं हैं, उनके लिए जो कुछ हमसे बने हम करना चाहते हैं।"

कम्बोदियावालों ने ज़रा भौंहें ऊँची करके मुझे देखा और मुस्करा दिये बेकर के शब्द ठीक निशाने पर लगे थे। परन्तु राजदूत सूवान्नावोंग खिल उठे और उन्होंने जिस प्रशंसात्मक ढंग से सिर हिलाया उससे मैं उनके विचार को ताड़ गया। उन्होंने सोचा होगा कि ये अमरीकी कितने अजीब लोग हैं।

उन्होंने कहा – "डा. डूली, आपके दल का स्वागत करने में मेरा देश गौरव का ही अनुभव करेगा। क्या आप सुबह राजदूतावास में आकर मुझसे मिलेंगे?"

अगले दिन राजदूत ने अपने अध्ययन-कक्ष में मुझे लाओस की सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियाँ बतायीं। प्रारम्भ में उन्होंने बताया कि वहाँ मेरे दल जैसे डाक्टरी दलों की आवश्यकता क्यों थी। उन्होंने कहा कि लगभग बीस लाख की आबादी में पश्चिमी मापदंड के अनुसार वहाँ केवल एक ग्रेजुएट डाक्टर था। मेरा आश्चर्य देख कर एक दुख-भरी मुस्कान उनके ओठों पर आ गयी।

उन्होंने कहा–"हमारे यहाँ कुछ युवक हैं, जिन्हें हम 'इण्डोचीनी डाक्टर' कहते हैं। ये 'लाइसेइ' (लगभग हाईस्कूल की तरह शिक्षण-संस्था) के स्नातक हैं और इन्होंने कुछ डाक्टरी शिक्षा पायी है। परन्तु हमारे यहाँ के अधिकांश रोगियों के लिए तो जादू-टोने और झाड़-फूँक करनेवाले ओझा ही हैं।"

इसके बाद राजदूत ने बताया कि लाओस का एकमात्र डाक्टर मेरा भतीजा है, डा. औदोम सूवान्नावोंग। वे ही स्वास्थ्य मंत्री हैं। मुझे विश्वास है कि वे आपका स्वागत करेंगे और हर प्रकार से आपको सहायता देंगे। यह मैं आपको बता दूँ कि सहायता और निर्देशन की आवश्यकता आपको पड़ेगी। आपको मेरे देश में हर चीज कठिन मालूम होगी, सम्भवतया ख़तरनाक भी।

दीवार पर एक बड़ा-सा मानचित्र टँगा था। हम उसे देखने लगे। लाओस चारों ओर भूमि से घिरा हुआ है और इंडो-चीन प्रायद्वीप के बीच में बहुत दूर तक चला गया है। उँगली जैसा उसका आकार है। नक्शे में देख कर मुझे लगा जै

उस उँगली का ऊपरी सिरा चीन की लाल हथेली में जुड़ा हो और आगे का सिरा कम्बोदिया और दक्षिणी वियतनाम में घुसा हुआ हो।

राजदूत सूवान्नावोंग ने चीन और बर्मा से लगे हुए उत्तर-पश्चिमी प्रान्त की ओर इशारा किया। पहली बार मेरी नज़र उस नाम पर पड़ी, जो भविष्य में बार-बार मेरे मस्तिष्क में चक्कर काटनेवाला था। वह था एक प्रदेश का नाम–'नाम-था'।

उन्होंने कहा–"उसे आपकी सबसे ज्यादा जरूरत होगी; लेकिन आप वहाँ जायें, तो आपको काफी खतरा उठाना पड़ेगा। 'नाम-था' सबसे अलग पड़ता है। वहाँ के लोग गरीब हैं, रोगों का वहाँ राज है। राजनीतिक परिस्थिति नाजुक है; किसी भी पश्चिमवासी के लिए उसे समझना बहुत कठिन है।"

मैंने नक्शे को देखा और यह देख कर मुझे आश्चर्य हुआ कि 'नाम-था' उत्तरी वियतनाम के उस दर्दनाक शहर, हैफोंग से पश्चिम, लगभग एक सीध में है। दूरी होगी लगभग पाँच सौ मील। १९५४ के जिनीवा सम्मेलन द्वारा तय की गयी शर्तों के मातहत दोनों पड़ोसी प्रान्त 'पाथेत लाओ' का अस्थायी अड्डा बन गये थे। और 'पाथेत लाओ' का नेतृत्व साम्यवादियों के हाथ में था। इसी सम्मेलन ने वियतनाम का विभाजन किया था तथा कम्बोदिया और लाओस को इंडो-चीन में 'तटस्थ' बनाया था।

मैंने कहा कि हम खतरा उठाने को तैयार हैं, परन्तु साथ-ही-साथ सावधानी बरतने का वचन भी दिया। राजदूत सूवान्नावोंग ने बड़े तपाक से हाथ मिलाया और मुझे आश्वासन दिया कि उन्हें मुझ पर पूरा विश्वास है।

उन्होंने कहा–"पहले भी कई बार गोरे लोग हमारी सहायता करने आये हैं; परन्तु उसके पीछे हमेशा कुछ स्वार्थ छिपा रहता था–जैसे उपनिवेश क़ायम करना, व्यापार करना, लोगों का धर्म-परिवर्तन करना। परन्तु मुझे वास्तव में विश्वास है कि आपका उद्देश्य शुद्ध मानवतावादी है। इसीसे आपका दल मेरे देश में अनूठा रहेगा।" फिर उनकी आँखों में एक चमक दिखायी दी और वे बोले–"हाँ, मेरे कुछ देशवासियों को इस पर विश्वास करने में जरा कठिनाई अवश्य होगी।"

हमारे मिशन को क़ानूनी मान्यता दिलवाने के लिए इंटरनेशनल रेस्क्यु कमेटी (अन्तर्राष्ट्रीय उद्धार समिति) के अध्यक्ष, एंजियर बिडल ड्यूक ने हमें अपनी समिति के तत्त्वावधान में लेने की व्यवस्था की। सारे संसार में इस समिति का मान है। मैंने एक बार फिर बैंक के अपने खाते पर ग़ौर किया। अपनी पुस्तक और भाषण-अभियान की कमाई मैं जमा करता आ रहा था। फिर वियतनाम के अपने

अनुभव के आधार पर मैं हाथ में झोली लेकर औषधियों और शल्य-चिकित्सा के उपकरणों की कम्पनियों के चक्कर लगाने निकला ।

उनकी व्यापक दृष्टि और उदारता ने मुझे अभिभूत कर दिया । चार्ल्स फिजर कम्पनी ने मुझे एक लाख डालर से अधिक की एंटीबायोटिक औषधियाँ प्रदान कीं। जांसन एंड जांसन ने पट्टियाँ और शल्य-क्रिया-सम्बंधी मरहम-पट्टी के अन्य उपकरण दिये । सेंट लुई, मो., की ए. एस. एलो कम्पनी ने शल्य-क्रिया के सारे औजार और उपकरण प्रदान किये तथा एलो कम्पनी के कर्मचारियों ने चन्दा करके मुझे काफी बड़ी रकम का चेक दिया ।

मीड जांसन कम्पनी ने विटामिन और प्रोटीन-सार की बहुत बड़ी मात्रा के यातायात की व्यवस्था की ; और श्री जांसन ने व्यक्तिगत रूप से पाँच हजार डालर दिये । वाल्ट डिस्ने ने लाओस के बच्चों के लिए अपनी कई फिल्में तथा एक फिल्म दिखाने की मशीन प्रदान की । विलीस कम्पनी ने ऊबड़-खाबड़ देश में उपयोग के लिए एक जीप खास तौर से बनवा कर दी । (हमने बाद में उसका नाम मेरी माताजी पर 'एग्नेस' रखा ।)

न्यूयार्क में एबरकूम्बी एंड फिच के यहाँ जाकर मैंने स्टोव, लालटैनें, सोने के काम में आनेवाले थैले, इत्यादि कई आवश्यक वस्तुएँ खरीदीं । बिल काफी बड़ी रकम का बना । परन्तु दुकान के कर्मचारी को जैसे ही मेरे मिशन की वास्तविकता ज्ञात हुई, वह कम्पनी के उपाध्यक्ष के पास पहुँचा और जब लौट कर आया, तो बिल की राशि पहले की राशि का एक अंश मात्र रह गयी थी ।

एक दिन मैं वाशिंग्टन में ईंटरनेशनल रेस्क्यु (अन्तर्राष्ट्रीय उद्धार) कमेटी के सामने, एशिया में वियतनाम के महत्व पर बयान देने के लिए अपनी बारी आने की प्रतीक्षा कर रहा था । एक बड़ी उत्साही महिला, जिन्हें बहुत देर हो गयी थी, आकर अन्तिम पंक्ति में मेरे पास बैठ गयीं और उन्होंने धीरे से पूछा–" क्या डा. डूली भाषण दे चुके ? " मैंने मुस्करा कर कहा–" नहीं, पर आदमी शायद जबर्दस्त होगा । " सिर हिलाते हुए उन्होंने कहा–" मैं उन्हें पकड़ने के लिए उनके पीछे-पीछे आधे देश का सफ़र कर चुकी हूँ । " " क्यों ? " मैंने पूछा । " मुझे उन्हें पाँच हजार पौंड प्रोटीन देना है । " तभी भाषण के लिए मेरा नाम पुकारा गया । बाद में उस महिला से भेंट हुई और तब मालूम हुआ कि वे " मील्स फार मिलियंस " (लाखों को भोजन) संस्था की कार्यकारी मंत्री कुमारी फ्लोरेंस रोज़ थीं । उन्होंने मुझे पाँच हजार पौंड बहुगुणी खाद्य प्रदान किया । अगले साल मेरे पहाड़ी अस्पताल में उस खाद्य ने सैकड़ों जानें बचायीं ।

अमरीका की नौसेना ने भी मुझे निराश नहीं किया। यद्यपि मैं अब साधारण नागरिक था, तथापि मैंने जो टनों औषधियाँ, खाद्य-पदार्थ और उपकरण जुटाये थे, उनके यातायात की ज़िम्मेदारी नौसेना ने ले ली। उसने यह सारा सामान दक्षिण वियतनाम पहुँचाया, जिससे मेरे मिशन को बहुत बचत हुई।

मैंने वाशिंग्टन में कई सप्ताह, एशिया में हो रहे विविध कार्यों की अमरीकी एजेन्सियों से भेंट करने में गुज़ारे। अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग प्रशासन ने ईमानदारी के साथ मुझे सहायता का वचन दिया, परन्तु लाओस में उनके आदमियों से अन्त में मुझे बहुत कम सहयोग मिला। तथापि अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग प्रशासन ने मुझे आयोजन के प्रारम्भिक दौर में बहुत सहायता दी। अमरीकी सूचना एजेन्सी ने भी सहायता दी। उसने बैटरी से चलनेवाला एक टेप-रिकार्डर (ध्वनि-संग्राहक यंत्र) दिया।

इसी बीच मेरी भेंट श्रीमती रेमंड क्लैपर से हुई। उनके पति युद्ध के प्रसिद्ध सम्वाददाता थे और कोरिया में मारे गये थे। श्रीमती क्लैपर वाशिंग्टन में "केअर" (संसार के किसी भी देश को राहत पहुँचानेवाली एक अमरीकी संस्था) के कार्यालयों की अध्यक्ष हैं। मुझे परामर्श देकर, लोगों से मेरा परिचय कराके तथा मेरी मित्र बन कर उन्होंने इंटरनेशनल रेस्क्यु कमेटी की "लाओस कार्रवाई" के जन्म में बहुत हाथ बँटाया। ("केअर" ने प्रसूति के साज़-सामान का एक झोला बनाया है, जो देखने में वैसा ही लगता है जैसे कि अक्सर हवाई यात्री अपने साथ रखते हैं। यह श्रीमती क्लैपर का ही सुझाव था कि मैंने लाओस में दाइयों के प्रशिक्षण के लिए जो योजना बनायी थी, उसमें उत्तीर्ण होनेवाली दाइयों के लिए "केअर" लगभग पचास झोले प्रदान करे। इन झोलों से कितना काम लिया गया यह आगे मैं आपको बताऊँगा।)

परन्तु मैंने अपनी योजना का सबसे कठिन पहलू—आदमी जमा करने का काम—आख़िर के लिए छोड़ रखा था। मुझे नोर्मन बेकर, पीटर केसी और डेनिस शेपर्ड पर पूरा भरोसा था। जिन सैनिकों ने उत्तरी वियतनाम में मेरे साथ काम किया था, उनमें ये सबसे अधिक विश्वसनीय और लगनवाले लोग थे। आदमी जमा करने का काम आसान न था। डेनिस शेपर्ड ने हाल में विवाह किया था और ओरेगान विश्वविद्यालय में डाक्टरी की शिक्षा के लिए भर्ती हो गया था। पीटर केसी आस्टिन (टेक्सास) में औषधि-शास्त्र की शिक्षा ले रहा था। बेकर का भी विवाह हो गया था और वह अब तक नौसेना में ही था। क्या

ये लोग साधारण नागरिकों के रूप में फिर से एशिया के उस भाग में जाने को राज़ी होंगे, जहाँ इतनी मुसीबत और दुर्दशा वे देख आये थे ?

पीट और डेनी ने तुरन्त और उत्साहपूर्वक मेरा प्रस्ताव स्वीकार कर लिया बेकर का जहाज़ कहीं यात्रा पर गया हुआ था। उससे सम्पर्क स्थापित करने में कई सप्ताह बीत गये। तब एक दिन बेकर ने सान डायगो से मुझे वाशिंग्टन टेलिफ़ोन किया। जब मैंने उसे लाओस कार्रवाई की बात बतायी, तो वह इस जोर से गरजा कि मुझे लगा मानो उसकी बात सारी दुनिया में गूँज गयी होगी।

"क्या! वापस इंडो-चीन ? तुम पागल हो! परले सिरे के मूर्ख हो, तुम चाहे जो लालच दो, मैं उस नर्ककुंड में लौट कर नहीं जाऊँगा! फिर, मेरी पत्नी ही नहीं मानेगी! नहीं–कोई गुंजाइश ही नहीं है!"

एक अजीब चुप्पी छा गयी। मैंने उसे जरा ठंडे होने का मौक़ा दिया। फिर...

"हल्लो ... डाक्टर! अभी हो कि चले गये ? सुनो! तुम्हें क्या सचमुच मेरी ज़रूरत है ? तुमने कैसे समझ लिया कि वहाँ हम वास्तव में कुछ कर सकेंगे ? और लगता है, एक बात तो तुम भूल ही गये हो। (उन्मुक्त हँसी।) छोटा-सा बूढ़ा बेकर अब तक अंकल सैम (अमरीका) की नौसेना के लिए गर्व और आनन्द का विषय है!"

मैंने उसे विश्वास दिलाया कि मुझे उसकी ज़रूरत है और लाओस कार्रवाई एक ज़बर्दस्त चुनौती है। मुझे काफ़ी हद तक विश्वास था कि मैं उसे नौसेना से शीघ्र ही निवृत्त करवा लूँगा। उसका बुदबुदाना और आह-ऊह करना मुझे सुनाई पड़ रहा था।

"अब क्या कहूँ डाक्टर! लो, मैं अपनी सेवाएँ प्रस्तुत करता हूँ। लेकिन देख लेना, प्रिसिल्ला मुझे इस पर तलाक़ देकर ही रहेगी!"

(भला हो प्रिसिल्ला का, उसने तलाक़-वलाक़ कुछ नहीं दिया। मुझे तब मालूम भी नहीं था कि उसके बच्चा होनेवाला था।)

अमरीका में सात महीने की छोटी-सी अवधि बिता कर मैं जुलाई, १९५६ में एशिया को रवाना हुआ। हवाई द्वीप, जापान और हाँगकाँग में भाषण देकर मैं "आपरेशन ब्रदरहुड" के संस्थापकों से बातचीत करने के लिए हवाई जहाज़ से फ़िलिपाइन्स पहुँचा। उनसे मुझे अपने मिशन के लिए बहुत जानकारी मिल सकती थी; क्योंकि विदेशों को ग़ैर-सरकारी और वर्गभेद-हीन डाक्टरी सहायता देने की प्रेरणा हमने वास्तव में फ़िलिपाइन्स के इस प्रयास से ही प्राप्त की थी।

मेरे साथी मेरे बाद आनेवाले थे और फ़िलिपाइन्स में ही मेरा उनका साथ होनेवाला था।

अगस्त का महीना था। गर्मी बड़ी तेज़ थी। एक दिन मैं मनीला के हवाई अड्डे पर हवाई जहाज़ का इन्तज़ार कर रहा था। चमचमाती धूप में जहाज़ आखिर उतरा और उसमें से पहले निकला पीट केसी, दुबला-पतला जैसे खाना न मिला हो; उसके पीछे बेकर, दो सौ पौंड का हृष्ट-पुष्ट जवान; और अन्त में डेनी शेपर्ड, शान्त और गम्भीर। कितने कमउम्र दिखाई देते थे वे! पीट और डेनी की आयु पच्चीस वर्ष की थी और बेकर अभी इक्कीस ही वर्ष का था। परन्तु तीनों अपने से दुगनी आयु के भी अधिकांश व्यक्तियों से अधिक परिपक्व और विश्वसनीय थे।

सैगोन को रवाना होने में अभी एक घंटे की देर थी। वहीं से हमें अपने कार्यक्षेत्र को प्रस्थान करना था। मेरे साथियों ने सवालों की झड़ी लगा दी। कैसा साज-सामान हमारे पास था? चार टन सामान सैगोन पहुँचाने के लिए नौसेना को किस दबाव से राजी किया मैंने? आगे हमें कहाँ जाना था? लाओस जगह कैसी थी? (बेकर ने कहा—" ठीक है, मैं समझ गया, खाने को निम्न श्रेणी का भोजन और मरीजों को सम्हालने की ड्यूटी चौबीस घंटों की!")

हवाई जहाज में सवार होने के बाद बातचीत गम्भीर विषयों पर होने लगी। मैंने नक्शा निकाला और उन्हें बताया कि मेरी योजना यदि सफल हो गयी, तो उत्तर में 'नाम-था' प्रान्त हमारा कार्य-क्षेत्र बनेगा। डेनी चकित हो गया। उसने भी अखबारों की कतरनें और जानकारी जमा की थीं। लाओस के बारे में जितनी जानकारी मेरी थी उतनी ही उसकी थी।

मैंने उन्हें बताया कि मैं हॉंगकॉंग में ओडन मीकर से मिला था। ये उत्साही अमरीकी १९५४ के दुर्भिक्ष में " केअर " की तरफ़ से लाओस में काम कर चुके थे। वे भी 'नाम-था' में काम करने के पक्ष में थे। उन्होंने बताया था कि वह क्षेत्र बड़ा नाजुक है, लाओस में सबसे अलग पड़ता है और राजनीतिक दृष्टि से सबसे दुर्बल है। ओडन ने कहा था—" उन पहाड़ी लोगों ने गोरों की शक्ल भी भूले-भटके ही देखी है। केन्द्रीय सरकार के प्रति उन्हें निष्ठा नहीं है। साम्यवादी कार्रवाई के लिए वे सर्वथा उपयुक्त हैं।"

मेरे युवक साथी गम्भीरतापूर्वक सुनते रहे। फिर बेकर ने कहा—" देखो डाक्टर! हमें सब बातें साफ़-साफ़ बताओ। इस काम में खतरा कितना है? मैं अब शादी-शुदा आदमी हूँ और डेनी भी। प्रिसिला को बच्चा भी होनेवाला है। इसके अतिरिक्त, उन चीनी बन्दी-शिविरों से मुझे ज़रा भी लगाव नहीं है।"

मैंने कहा कि संसार के इस भाग में खतरा सभी जगह बराबर-सा ही है। न कम, न अधिक। कठिन परिस्थितियों से पहले भी हमारा सामना हुआ है; परन्तु हम अपने काम में लगे रहे और अन्त में सही-सलामत लौटे।

बेकर बोला—"बिल्कुल सही है; लेकिन तुम यह भूल गये कि तब अमरीकी नौसेना का हाथ हमारे सर पर था।"

मैंने इसका उत्तर नहीं दिया और यह बताने लगा कि हमें क्या और कैसा काम करना था। इस बार हमें अपने झंडे का इतना प्रदर्शन नहीं करना था जितना कि हैफोंग में किया था; हमें उस एशियाई जनता को अमरीकी जनता का सच्चा परिचय देना था, जिसे बताया गया था कि अमरीकी गोरों को उनकी रत्ती भर परवाह नहीं है। हमने हैफोंग में जो कुछ सीखा था, उसकी याद अपने साथियों को मैंने दिलाई और कहा कि वे ज़रा सोचें कि लाओस के गाँवों में जनता की सेवा करके हम कितनी सिद्धि प्राप्त कर सकते हैं।

पीट केसी ने कहा—"मुझे लगता है डाक्टर कि तुम थोड़े-से समय में बहुत-कुछ कर लेना चाहते हो। तुम जानते हो कि हम केवल छः महीनों के लिए आये हैं। क्या तुम्हारा खयाल है कि इतने ही समय में हम अपना काम कर लेंगे? और जब हम चले जायेंगे, तब तुम्हारा क्या होगा?"

योजना के इस भाग ने मुझे चिन्ता में डाल रखा था। परन्तु मैं इसे स्पष्टतया स्वीकार नहीं कर सकता था। मैंने कहा कि छः महीने के बाद मैं काम चला लूँगा। मैंने उन्हें "इंडो-चीनी डाक्टरों" के बारे में बताया। सम्भवतया मैं कुछ लाओ युवकों को सहायक का काम करने के लिए प्रशिक्षित कर लूँगा, और अमरीका से दूसरे व्यक्ति बुलवाने की योजना भी मेरे मस्तिष्क में थी।

उन्होंने ताड़ लिया कि मैं अंधेरे में हाथ-पाँव मार रहा था। बेकर ने कहा कि सारी योजना में यह भाग सबसे ज्यादा बेवकूफ़ी का था। पीट सिर्फ़ सर हिला कर रह गया। जब डेनी शेपर्ड ने बातचीत का यह क्रम तोड़ा तो मुझे बड़ी खुशी हुई।

उसने कहा—"घर लौटने की बातों के लिए क्या छाँट कर वक्त चुना है। अभी पहुँचे तो हैं ही नहीं।"

अध्याय २

लाओस में आगमन

हमारे चार टन सामान की पेटियों के लिए वियतनाम के माल ढोनेवाले विशाल विमान ने सैगोन से वियंतियेन तक तीन चक्कर लगाये। तीसरी बार हम भी साथ थे। हवाई जहाज़ काफ़ी खतरनाक ढंग से हवाई अड्डे पर उतरा और छः घंटे पेटियों पर बैठे-बैठे सफ़र करने के बाद जब हम उसमें से उतरे, तो हमारी हड्डी-हड्डी दुख रही थी। हमने अपना कुछ ज़रूरी सामान एक पुराने ज़माने की ट्रक पर लादा और शहर को चल दिये। 'एग्नेस' जीप सड़क से दस दिन की अजीबो-गरीब यात्रा में कम्बोदिया और थाइलैंड से गुजर कर लाओस पहुँची और फिर जल-यात्रा करके आखिर वियंतियेन पहुँची।

वियंतियेन को फ्रांसीसियों ने लाओस की औपनिवेशिक राजधानी के रूप मे बसाया था। उसमें बड़ी-बड़ी सड़कें हैं जिनके दोनों किनारों पर बबूल और सागवान के विशाल वृक्ष लगे हैं। परन्तु जब हम यहाँ आये, तब बरसात ने इन कच्ची सड़कों को कीचड़-पानी की नदियों में बदल दिया था; पुराने ढंग की मोटरों, बैलगाड़ियों, आदमियों, भैंसों और कुत्तों की उन पर भीड़ लगी थी। फ्रांसीसी औपनिवेशिक शासन की समाप्ति के चिन्ह चारों ओर दिखाई देते थे। इमारतों पर से रंग की पपड़ियाँ छूट-छूट कर गिर गयी थीं, राष्ट्रीय परिषद् भवन के उद्यान में भैंसों के नहाने की तलइयाँ बन गयीं थीं, और वहाँ के चौकीदार की पत्नी ने वृक्षों की सुन्दर पंक्तियों में कपड़े सूखने को डाल रखे थे।

हम जब नये सम्बौन होटल के सामने जाकर ठहरे, तो एक छोटी-सी परन्तु लाक्षणिक दुर्घटना हो गयी। कंक्रीट का नया बना हुआ फ़र्श ट्रक के बोझ से ज़मीन में धँस गया। ट्रक के दाहिने ओर के दोनों पहिये आधे-आधे खाई में धँस गये जिससे उसका सामान लुढ़क कर एक ओर को आ गया।

हमने उतर कर नुकसान का निरीक्षण किया। लाओस-वासी ड्राइवर ने कंधे मटका कर कहा—"बाउ पिन्ह यान्ह।" यह लाओस का आम मुहावरा है, यह हमें जल्द ही मालूम हो गया। इसका अर्थ कुछ यह होता है—"परवाह मत करो" और "मारो गोली।" दो दिन बाद भी वह ट्रक दाहिनी ओर को झुकी हुई वैसी-की-वैसी उसी जगह खड़ी थी।

होटल के पहले और दूसरे दर्जे के कमरे अभी ठहरने के योग्य नहीं हुए थे; इसलिए हमें नौकरों के कमरों में ठहराया गया। नौकरों के कमरे छोटे तो थे, परन्तु साफ़-सुथरे थे और यह भी सही है कि तब तक उनमें नौकर कभी रहे ही नहीं थे।

मेरे साथी सामान को ठिकाने से रखवाने में लगे और मैं राजदूत जे. ग्राहम पार्संस से भेंट करने अमरीकी दूतावास गया। भेंट औपचारिक ढंग से और थोड़ी-सी देर के लिए हुई। मुझे राजदूत पार्संस के तौर-तरीक़े में उत्साहहीनता-सी दिखाई दी। स्पष्ट था कि डूली का ग़ैर-सरकारी मिशन सरकारी क्षेत्रों का प्रेमभाजन नहीं था। यह तो मुझे बाद में ज्ञात हुआ कि वास्तव में अधिकांश अमरीकियों की निगाह में डूली " आगे नाथ न पीछे पगहा " जैसा था।

फिर मै स्वास्थ्य मंत्रालय गया और मैंने अपना नाम स्वागत-अधिकारी को बताया। कुछ ही क्षणों में लगभग पैंतीस वर्ष की आयु का एक सुन्दर और उत्साही व्यक्ति प्रतीक्षा-कक्ष में दाखिल हुआ और हाथ बढ़ाये हुए मेरी ओर बढ़ा। ये थे डा. औदोम सूवान्नावोंग, लाओस के एकमात्र डाक्टर और स्वास्थ्य मंत्री। ऐसा तनिक भी न जँचनेवाला मंत्री मैंने कभी नहीं देखा।

वे मुझे अपने दफ़्तर में ले गये, मेरी पुस्तक की उन्होंने बड़ी प्रशंसा की और मुझे बताया कि उनके चाचा जो अमरीका में राजदूत थे, मेरा कितना अधिक मान करते थे। इन छोटी–मोटी बातों के पूरा होने के बाद उनका तौर-तरीक़ा एकाएक बदल गया।

उन्होंने सन्देह की भावना से पूछा – " मुझे यह बताइये डाक्टर साहब! कि आप लाओस वास्तव में क्यों आये हैं?"

दस मिनट तक वे मुझसे सवाल पर सवाल पूछते रहे। अमरीका की सरकार से मेरा क्या सम्बंध था? क्या मैं अब भी नौसेना में अफ़सर हूँ? नौसेना ने मेरा सामान सैगोन क्यों पहुँचाया? क्या मैं किसी खुफ़िया दल का एजेंट हूँ? मेरा धर्म क्या है? क्या मैं किसी कैथालिक मिशनरी संस्था का प्रतिनिधि हूँ?

पहले तो मैं चकित रह गया। कोशिश करके मैंने अपने आयरिश मिजाज को काबू में रखा। (बहुत बाद में मुझे ज्ञात हुआ कि इस समय लाओस में सभी विदेशी सन्देह की दृष्टि से देखे जाते थे।) मैंने पूरी स्पष्टता के साथ उनके प्रश्नों के उत्तर दिये; शायद उनमें कुछ तेजी भी थी। अन्त में उनके मुख पर मुस्कान लौटी। स्पष्टतया उन्हें संतोष हो गया कि मैं न छद्मवेशी जासूस हूँ, न कट्टर क्रिश्चियन मिशनरी।

उन्हें ज्ञात था कि मेरी रूचि उत्तर की ओर जाने की है। मैंने इस पर ज्यादा ज़ोर दिया। मैंने उनसे कहा – " डाक्टरी की दृष्टि से पहाड़ी जातियों का स्वास्थ्य बहुत गया-गुज़रा है। राजनीतिक दृष्टि से वे लोग आपके देश की केन्द्रीय सरकार

के प्रति वास्तव में निष्ठावान नहीं हैं। मेरी व्यक्तिगत दृष्टि से वहाँ पर लोग बीमार हैं और इसके अतिरिक्त लाल चीन ने उन लोगों में पश्चिम-विरोधी प्रचार जोर से किया है।"

मैंने मंत्री महोदय को बताया कि अमरीका में उनके चाचा से बातचीत करते हुए हमने सोचा था कि उत्तर का 'नाम-था' प्रान्त सबसे ज्यादा जरूरतमन्द है। मैंने यह बात ज़ोर देकर स्पष्ट की कि मैं लाओस के लिए काम करना चाहता हूँ और अपने काम से जो भी निष्ठा मैं जगा पाऊँगा, वह लाओस की शाही सरकार के प्रति रहेगी। मैं उस सरकार के स्वास्थ्य मंत्रालय का एक अंग बनना चाहता हूँ।

डा. औदोम ने उत्तर दिया—"उत्तर जाने की आपकी इच्छा के विषय में मैंने सुना है। वहाँ खतरे बहुत हैं—सबसे अलगाव, सीमान्त प्रदेश के खतरे, साम्यवादियों की लूट-खसोट, बरसात में घनघोर वर्षा, यातायात के साधनों का अभाव, आदि।" उन्होंने मेरा ध्यान इस ओर भी आकर्षित किया कि वहाँ के लोग गोरों से कितने अपरिचित थे और हिमालय की निचली पहाड़ियों की इस दुनिया के लोग कितने अंध-विश्वासी और कभी-कभी द्वेषपूर्ण हो उठते थे। किन्तु इस प्रकार सभी तरह की चेतावनियाँ देकर मंत्री महोदय ने अपने मन को ही सन्तुष्ट किया कि बाद में कोई उन्हें किसी प्रकार का दोष नहीं दे सकेगा। इससे उन्होंने यह भी समझ लिया कि हमने खतरों की परवाह न करते हुए वहीं जाकर काम करने का संकल्प किया था, जहाँ हमारी सबसे ज्यादा जरूरत थी।

अन्त में उन्होंने कहा—"सच बात यह है डाक्टर साहब! कि मुझे इस बात की बड़ी खुशी है कि आप हमारे यहाँ की सबसे ज्यादा मुसीबतजदा जनता को अपनी डाक्टरी सहायता देने को उत्सुक हैं। हम अपनी ओर से पूर्ण सहमति आपको देते हैं, परन्तु इसके पहले मैं आपसे निवेदन करूँगा कि आप अमरीकी राजदूत की सहमति प्राप्त करें!"

मैं अपनी स्थिति के बारे में स्पष्टतया और जोर देकर यह बता चुका था कि हमारा दल किसी भी राजनीतिक अथवा धार्मिक संस्था से स्वतंत्र है। इसके बाद भी उन्होंने यह प्रस्ताव किया तो मुझे आश्चर्य हुआ। अनिच्छापूर्वक मैं अमरीकी दूतावास को रवाना हुआ, परन्तु मेरा मन कह रहा था कि अब कोई बाधा जरूर आयेगी।

राजदूत पार्संस ने 'नाम-था' जाने की मेरी योजना का जोर से विरोध किया। वे तो चाहते थे कि मेरा दल चीन की सीमा से ज्यादा से ज्यादा दूर रहे। लाओस की राजनीतिक परिस्थिति नाजुक थी; उत्तर की स्थिति कभी भी भीषण रूप धारण कर सकती थी। मैं चाहे कुछ भी करता, कहता या सिद्ध करता—उस

सबके उपरान्त भी लोग मुझ पर अमरीकी जासूस होने का सन्देह करते। (डा. औदोम से अपनी भेंट को याद करते हुए मैंने सोचा कि कितनी सचाई है इस बात में।) उत्तर में साम्यवादी तो निश्चय ही यह अफवाह उड़ाने की हर कोशिश करते कि मैं जासूस हूँ। उन्होंने यह स्वीकार किया कि लाओस सरकार की अनुमति से मुझे देश के किसी भी भाग में जाने का पूर्ण अधिकार है, परन्तु यदि मैं या मेरा कोई साथी किसी "मामले" में फॅस गया, तो लाओस में सारी अमरीकी स्थिति ही खतरे में पड़ जायगी।

उन्होंने ज़ोर देकर कहा—"इस समय उत्तर में जाना अत्यन्त अबुद्धिमत्ता का काम होगा, डा. डूली। मैं आपसे कहूँगा कि आप इस सम्बंध में फिर विचार करें।"

तो बात यह हुई! राजदूत पार्संस ने मुझे 'नाम-था' जाने की मनाई नहीं की, परंतु सहमति देने को वे हर्गिज़ तैयार न थे। डा. औदोम की शर्त के मुताबिक़ यह सहमति न मिलने से मेरी योजना ही खत्म हो गयी। मै राजदूत के विचारों से पूर्णतया असहमत था। अब सोचता हूँ, तो लगता है कि अपनी असहमति प्रकट करते हुए मैं आवेश मे आ गया था और कुछ धृष्टता भी मैंने दिखाई थी।

मैंने उनसे पूछा कि उनके विचार से मेरा दल कहाँ काम कर सकता है? एक क्षण भी आगा-पीछा किये बिना उन्होंने कहा कि लाओस का कोई भाग ऐसा न था, जिसे डाक्टरी सहायता की आवश्यकता न थी। हमने नक्शे पर नज़र दौड़ाई और वॅाग वियेंग के आसपास का क्षेत्र उन्होंने बताया। वॅाग वियेंग राजधानी से लगभग १२० मील उत्तर में होते हुए भी चीन की सीमा से बहुत दूर पड़ता था। उन्होंने बताया कि इंडो-चीन के युद्ध में वॅाग वियेंग पर साम्यवादियों ने अधिकार कर लिया था और हालत अब भी वहाँ बहुत खराब है।

उदास मन लेकर मैं वापस स्वास्थ्य-मंत्रालय गया और मैंने डा. औदोम से कहा कि 'नाम-था' जाने की बात, कम-से-कम फ़िलहाल तो, खत्म हुई। जब उन्होंने अमरीकी राजदूत से सहमति प्रकट की तो मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। वॅाग वियेंग के चुनाव का भी उन्होंने समर्थन किया। उन्होंने कहा कि स्वास्थ्य की दृष्टि से वहाँ की स्थिति दयनीय थी। नगर में एक चिकित्सा-केन्द्र तो था, परन्तु न वहाँ डाक्टर थे, न नर्सें, न दवाइयाँ, न साज-सामान। उन्होंने मुझे विश्वास दिलाया कि वॅाग वियेंग में हम वास्तविक सेवा कर सकेंगे।

वॅाग वियेंग का ही निश्चय हुआ। सम्बौन हाटेल के नौकरों के कमरों में मेरे साथियों ने दुःख के साथ यह समाचार सुना। मुझे और कई चिन्ताएँ थीं। मेरी छोटी-सी पूँजी का काफ़ी हिस्सा योजना के इस परिवर्तन के कारण कटा जा रहा

था। हमारा अधिकांश साज़-सामान उत्तर के पहाड़ी प्रदेश के लिए उपयोगी था, वाँग वियेंग के जंगली और निचाई वाले इलाके के लिए नहीं। हमारे पास औषधियाँ भी खास कर उन रोगों के लिए थीं, जिनका हमें उत्तर के पहाड़ी इलाकों में मुक़ाबला करना पड़ता।

बेकर ने मेरी कहानी सुन कर कहा—"खैर, डाक्टर—बाउ पिन्ह यान्ह! परवाह मत करो!" (जब अन्त में कई महीनों बाद हम 'नाम-था' पहुँचे, तो हमें वाँग वियेंग में रोकने के लिए मैंने वास्तव में राजदूत पार्सस और डा. औदोम का आभार माना।)

मैं अब ओडन मीकर के विषय में सोचने लगा। श्रीमती क्रैपर के ज़रिये मुझे हाँगकाँग में इस उत्साही युवक से मिलने का मौक़ा मिला था। इन्होंने लाओस के बारे में एक पुस्तक लिखी है, "दि लिटल वर्ल्ड आव लाओस।" मीकर लाओस में रह चुके हैं। १९५४ के दुर्भिक्ष में कुछ समय उन्होंने यहाँ गुज़ारा था। दुख-दर्द से वे अच्छी तरह परिचित हैं। "केअर" के द्वारा दुर्भिक्ष पीड़ित प्रदेश में हज़ारों पौंड चावल और नमक हवाई जहाज़ों से गिराया गया था, जिससे हज़ारों आदमियों को राहत मिली थी। ओडन के साथ भोजन करते समय 'नाम-था' की चर्चा हुई थी। ओडन उन थोड़े-से आदमियों में से थे, जो वहाँ जा चुके थे। उन्होंने भी राजदूत पार्सस की ही तरह कहा था कि गोरे लोग वहाँ कभी भूले-भटके ही पहुँचते थे, इससे अपने दल को 'नाम-था' ले जाने का मेरा संकल्प और भी दृढ़ हुआ था। हाँग-काँग से मैं फिलिफाइन्स आया था, जहाँ मेरी भेंट आस्कर एरिलानो और एमिलिटो म्यूटक से हुई। ये दोनों 'आपरेशन ब्रदरहुड' नामक फिलिपिनो डाक्टरी टुकड़ी के संस्थापक हैं। इस टुकड़ी के दल दक्षिणी वियतनाम में सब जगह फैले हुए हैं। यह समझना आसान है कि फिलिपाइंस-निवासी गर्व से सर उठा कर क्यों चलते हैं। उन्हें अपनी आज़ादी पर दोहरा नाज़ है। वे जनतंत्र के लिए लड़ रहे हैं। साम्यवादी हमारे बारे में जो कुछ कहते हैं, उसका वे खंडन करके ही संतोष नहीं कर लेते, बल्कि मैदान में आकर कुछ काम भी करते हैं। आस्कर एरिलानो कहते हैं कि उनके दलों के सदस्य "जनतंत्र के चलते-फिरते और बोलते-चालते" साधन हैं। एक दिन उन्होंने मुझसे कहा—"जब आदमी का मस्तिष्क और पेट खाली होता है, तब उसका जनतंत्र भी खोखला होता है।" आज़ादी की हवा में जन्मे हुए आदमियों की हैसियत से अपने एशियाई भाइयों के प्रति अपना कर्तव्य पूरा करने के लिए दक्षिण वियतनाम में एक व्यापक डाक्टरी सहायता-कार्यक्रम के रूप में "आपरेशन ब्रदरहुड" की स्थापना की गयी थी। एशिया के राष्ट्रों में फ़िलिपाइंस पहला राष्ट्र है, जो दूसरे राष्ट्रों की सहायता कर रहा है।

लाओस के सम्बौन होटल में मुझे पहली बार 'आपरेशन ब्रदरहुड' के इतिहास से सम्बंधित उस साहित्य को देखने का मौका मिला, जो आस्कर एरिलानो ने मुझे दिया था। उसमें मुझे एमेलिटो म्यूटक का यह अनूठा बयान मिला—"मैं उन सब नवयुवकों का संगठन करना चाहता हूँ, जिनमें जीवन के प्रति आस्था है। मैं जनता में नागरिक चेतना जगाना चाहता हूँ। सबके हित के लिए काम करने के उत्तरदायित्व की भावना मैं उनमें भरना चाहता हूँ; उन्हें द्वेष और पूर्वाग्रह से मुक्त करना चाहता हूँ; इतर मान्यताओं और निष्ठाओंवाले लोगों को समझने और उनसे सहयोग करने की वास्तविक इच्छा उनमें पैदा करना चाहता हूँ।...मुझे विश्वास है कि एशिया में कर्मठ युवक, बुद्धि और उत्साह का विशाल भंडार हैं। सेवा के प्रति, जाति, राष्ट्र और संसार के प्रति उनकी लगन और उत्सर्ग की भावना का मैं पूर्णतया उपयोग कर सकता हूँ।"

उस रात वियंतियेन में अपनी चिन्ताओं से छुटकारा पाने के लिए मैं और मेरे साथी सैर को निकले। नगर में घूमते हुए हम एक "प्रेम-सभा" में जा पहुँचे और दर्शकों के बीच ज़मीन पर बैठ गये। लाओस के इस अनोखे मनोरंजन के बारे में मैंने सुन रखा था। इसमें प्रेम के गीत गाये जाते हैं, जो तुरन्त वहीं-के-वहीं रचे जाते हैं। युवक प्रेमिका के सौन्दर्य, ज्ञान और गुणों का बखान करता है; युवती प्रेमी की शिष्टता, आकर्षण और वीरता के गुण गाती है। दर्शक एकाग्रचित्त होकर सुना करते हैं और सुन्दर रचनाओं पर बीच-बीच में वैसे ही उत्साह से हर्ष-ध्वनि करते हैं, जैसे हम अपने देश में किसी खेल में खिलाड़ियों के अनूठे प्रदर्शन पर करते हैं।

परन्तु मेरे मस्तिष्क में एक और चीज़ थी। हमें एक दुभाषिये की जरूरत थी। मैं और बेकर फ्रांसीसी भाषा धाराप्रवाह बोलते थे और पीट तथा डेनी को भी इस भाषा की काम चलाने-लायक़ जानकारी थी। हमें ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता थी, जो लाओस की बोलियों को समझता हो और उनका फ्रांसीसी भाषा में अनुवाद कर सके। मैंने वहाँ बैठे-बैठे उन दर्शकों से ही अपनी खोज शुरू करने का फैसला किया।

मैंने फ्रांसीसी भाषा में जोर से पूछा—"यह क्या कार्यक्रम है? इन शब्दों और संकेतों का क्या अर्थ है?"

लोग मुड़ कर मुझे घूर-घूर कर देखने लगे। तब एक व्यक्ति ने फ्रांसीसी भाषा में मुझे सम्बोधित किया। उसने अपना नाम बताया चई, और वह उन प्रेम-गीतों का मामूली फ्रांसीसी भाषा में अनुवाद करने लगा।

चई छोटे क़द और दोहरे बदन का नवयुवक था। उसके नाक-नक्श सुन्दर थे, दोनों आँखों के बीच काफी दूरी, काँसे-सी निर्मल त्वचा और घने काले बाल। उसने अपने देश की पोशाक, सारोंग कमर से बाँध रखा था और दूध जैसी सफेद क़मीज़ पहन रखी थी जिसके कफ फ्रांसीसी ढंग के थे। (यह औपनिवेशिक प्रभाव था।) पैरों में जूते नहीं थे। मुझे याद है कि मेरी दृष्टि उसकी छोटी और मोटी उंगलियों पर गयी थी। उस समय मैंने नहीं समझा था कि ये उंगलियाँ एक दिन आपरेशन की मेज़ पर सधे हुए ढंग से मेरी सहायता करेंगी।

प्रेम-सभा की समाप्ति पर हमने उसे अपना परिचय दिया। चई वियंतियेन 'लाईसेइ' का स्नातक था। भाषाएँ सीखने की शक्ति उसे कुदरत से मिली थी। मैंने उसे बताया कि मैं डाक्टर हूँ और हम लोग वाँग वियेंग जा रहे हैं। जब मैंने उससे कहा कि हमें एक दुभाषिये की जरूरत है, तो उसने यह काम करना उत्साहपूर्वक स्वीकार लिया। उसने कहा कि वाँग वियेंग के बारे में उसे सब-कुछ मालूम है, क्योंकि उसके कुछ रिश्तेदार वहीं रहते हैं।

कुछ दिन बाद हम लोग जीपों में बैठ कर जानकारी हासिल करने के उद्देश्य से वाँग वियेंग को रवाना हो गये, उत्तर की ओर १२० मील की यात्रा पर। मैंने चई से पूछा कि उसे रास्ता मालूम है या नहीं। उसने कहा—"जी हाँ, डाक्टर साहब।" मैंने पूछा कि रास्ता ठीक भी है या नहीं? उसने फिर जवाब दिया—"जी हां, डाक्टर साहब।" मुझे बाद में पता लगा कि चई झूठा नहीं था; ना कहना उसके लिए स्वभावतया सम्भव न था।

चिलचिलाती धूप में हम पाँच घंटों तक कहीं घने जंगल में, कहीं बरसात की कीचड़ में और कहीं धूल के घने बादल उड़ाते हुए चलते रहे। इस बीच हमने प्रकृति की कल्पनातीत छटा देखी। नाम लिक नदी पर पहुँच कर हमने जीपें रोकीं और कपड़े उतार कर फौरन उसकी ठंडी और तेज धारा में कूद पड़े और हरे-हरे पानी से खेलने लगे। केवल चई नदी में नहीं उतरा। हमने इधर-उधर देखा। वह किनारे पर एक पेड़ के नीचे अकेला बैठा था।

बेकर निकल कर उसके पास गया और उससे काफी बातचीत करके जब लौटा, तो हँसी उसके होंठों पर उमड़ी पड़ रही थी।

उसने कहा — "डाक्टर, हँसना मत। उसे तैरना तो खूब आता है, परन्तु इस नदी के प्रेत से उसने आज्ञा नहीं ली है!"

मैं समझा बेकर हँसी कर रहा है; लेकिन जब मैं बदन पोंछ कर और कपड़े पहन कर उसके पास गया और बैठ कर उससे बातें कीं, तो मुझे मालूम हुआ कि बेकर ने सच ही कहा था। लाओस में बौद्ध धर्म के साथ प्राचीन जड़ात्मवाद का ज़बर्दस्त मेल हो गया है, और चई जैसे लोगों के लिए लाओस प्रेतों और भूतों से भरा पड़ा है।

चई ने विश्वासपूर्वक मुझसे कहा – "नाम लिक नदी का प्रेत कई जानें ले चुका है। वियंतियेन लौटने पर मैं उसे भेंट चढ़ाऊँगा और फिर बिना किसी भय के नाम लिक में तैरूँगा।"

और निश्चय ही कुछ दिन बाद वह हम लोगों के साथ नदी में उतरा, तैरा और खेला। वियंतियेन के बौद्ध मन्दिर में जाकर उसने भेंट चढ़ायी थी और वहाँ के भिक्षु ने उसे नाम लिक में तैरने की अनुमति दी थी। इसके प्रमाण के रूप में उसे एक तावीज़ मिला था, जो उसने डोरे से अपनी कलाई पर बाँध रखा था।

हमें चई के बारे में और भी जानकारी मिली। वह किसी की हत्या नहीं करता था। बाद में जब रोगी मुझे आपरेशन के पारिश्रमिक के रूप में मुर्गियाँ या बत्तखें देते थे, तो वह उन्हें पकाने के लिए मारता न था।

परन्तु हर चीज़ का उपाय करना वह खूब जानता था और इस कठिनाई को हल करने के लिए किसी देहाती या "खा" क़बीले के आदमी या मूर्तिपूजक को ले आता था, जो कुछ पैसे लेकर मुर्गी की गर्दन खुशी-खुशी मरोड़ देता था! परन्तु मछली पकड़ने का चई को बड़ा शौक़ था। हमने उससे पूछा कि क्या यह हत्या नहीं है, तो उसने जवाब दिया – "बिल्कुल नहीं, डाक्टर साहब। मैं तो मछली को पानी से निकलता-भर हूँ। अगर वह मर जाती है, तो यह दोष मेरा नहीं है। मैंने उसे नहीं मारा।"

हम जानते थे कि लाओस के हिसाब से चई का रहन-सहन काफी ऊँचे स्तर का था। जन्म से वह किसान था, परन्तु उसने लाईसेइ में शिक्षा पायी थी। वह फ्रांसीसी भाषा ठीक बोल लेता था और सब तरह से समझदार था। जब उस जैसा व्यक्ति प्रेतों और भूतों के बंधन से मुक्त नहीं था, तो देश की अज्ञानी जनता तो इन धारणाओं में कितनी बुरी तरह जकड़ी हुई होगी? उपचार के हमारे काम में इससे कितनी बाधाएँ आयेंगी?

वह पहली रात हमने रास्ते में एक गाँव के मुखिया की झोंपड़ी में बितायी। एक गाँववाले के घर जाकर बातें करने का हमारे लिए यह पहला मौक़ा था। ये आदिवासी जिस दृढ़ता से अपनी प्रेतों की दुनिया से चिपके हुए थे, उससे हमें

आश्चर्य भी हुआ और भय भी। अच्छी और बुरी प्रेतात्माओं ने, जादू-टोने ने निरंकुश अधिकार उन पर कर रखा था।

अगले दिन हम रात पड़ने तक और भी घने और आश्चर्यों से भरे जंगल में आगे बढ़ते रहे।

कई घंटों तक रास्ते में हमें आबादी का कोई चिह्न नहीं मिला। उस उनींदे गाँव वाँग वियेंग को देख कर हमें बड़ी प्रसन्नता हुई।

वाँग वियेंग के लिए स्थान अवश्य ही किसी चोटी के कलाकार ने चुना होगा। बड़ा दर्शनीय है वह स्थान! गाँव चट्टानों की दैत्याकार दीवारों के तले बसा हुआ है। ये दो हजार और तीन हज़ार फुट ऊँची दीवारें आसमान से बातें करती हैं। इन पहाड़ों के नीचे न छोटी पहाड़ियाँ हैं और न इनमें उतार-चढ़ाव है। बिल्कुल चौरस मैदान है और उसमे बीचोबीच ये ऊँचे-ऊँचे पहाड़ नज़र आते है। इनके शिखरों पर देवदार के पेड़ छाये हुए है। पहाड़ों पर छोटे छोटे पेड़ आड़े-तिरछे उगे हुए हैं जिनकी डालियाँ प्रकाश की ओर ऊपर को बढ़ती है मिकोंग नदी की सहायक नदी नीची ज़मीन की खोज में पहाड़ों का चक्कर लगाती है। इस नदी के खतरों की कई कहानियाँ हैं, घातक जोंकों, परजीवी जन्तुओं, विशाल मछलियों और साँपों की कहानियाँ, और चई की प्रेतों और अजगरों की कहानियाँ।

यह चौड़ी नदी सड़क की ज़रा परवाह नहीं करती। रास्ते में कई जगहें ऐसी मिलीं, जहाँ बड़े पुलों की ज़रूरत थी; और पुलियों या छोटे पुलों की ज़रूरत जहाँ थी, ऐसी जगहें तो सैकड़ों मिलीं। जब बरसात नहीं रहती, तब तो तैरते हुए पुलों और लकड़ी के तख्तों से काम चल जाता है, परन्तु जब बरसात आती है तो इन सबको बहा ले जाती है। अतः सड़क साल में छः महीने काम नहीं देती। बरसात का मौसम, सितम्बर में शुरू होता है। उन दिनों बरसात नहीं थी, फिर भी वियंतियेन से वाँग वियेंग की १२० मील की हमारी यात्रा दो दिन में पूरी हुई।

अध्याय ३

वॉंग वियेंग में रोगियों की परिचर्या

" लाओस कार्रवाई " की ट्रकें और जीपें जब वॉंग वियेंग पहुँचीं तब क़स्बे की लगभग आधी जनता हमारी अगवानी को उपस्थित थी। यह काम मुख्यतया चई के एक सम्बंधी का था। हँसी-हँसी में मेरे साथियों ने उसका नाम रख दिया " ओजिसान "। (जापानी भाषा के इस शब्द का अर्थ है बूढ़ा आदमी।) ओजिसान ने यह खबर फैला दी थी कि हम दवा-दारू करनेवाले गौरांग हैं और जनता के लिए रामबाण औषधियाँ लेकर आ रहे हैं। अतः बहुत-सी औरतें और बच्चे फूल, ककड़ियाँ और नारंगियाँ भेंट करने को लाये थे।

औषधालय चौक के एक छोर पर था। (क़स्बे के कुएँ के चारों तरफ़ का क्षेत्र चौक कहलाता था।) चौक के पार, उसके ठीक सामने था चाओ मुओंग यानी मेयर का मकान।

औषधालय की इमारत कम ऊँची और सफ़ेद पुती हुई थी। उसमें कुल तीन कमरे थे। रहने के लिए कोई जगह उसमें नहीं थी। इसलिए ओजिसान ने क़स्बे के दक्षिणी छोर पर अपना एक घर हमें रहने को दिया। हमारा मुख्य शिल्पकार था नोर्मन बेकर; उसके निर्देश के अनुसार मेरे आदमी औषधालय को छोटा-सा अस्पताल बनाने के काम में जुट गये। उन्होंने उसे झाड़-बुहार कर धोया, फिर कृमि-नाशक दवाओं से उसे साफ़ किया और उस पर सफ़ेदी की। आधे दर्जन मजदूरों की सहायता से हमने उसके चारों ओर के आंगन का कूड़ा-करकट, गोबर और गंदी पट्टियों व रूई का ढेर साफ किया। (इसी आंगन को बाद में हमने रोगियों की जाँच करने की जगह बनाया।) फिर भैंसों की रोक-थाम के लिए हमने चारों तरफ़ बाड़ खींच दी।

उपचार के सामान और दवाओं की पेटियाँ खाली की गयीं और मेरे साथियों ने बड़ी चतुराई से उन खोखों से मेजें, बेंचें और दवाइयाँ रखने की अल्मारियाँ बना डालीं। लाओस की शाही सेना की स्थानीय टुकड़ी से हम कुछ खाटें माँग लाये। खाटों के पिस्सू और खटमल वगैरा निकाले गये और मरम्मत करने के बाद उन्हें एक कमरे में लगा दिया गया। यह हमारे अस्पताल का वार्ड बन गया।

रहने के लिए हमें जो झोंपड़ी मिली थी उसे ठीक करना अधिक टेढ़ी खीर थी। ओजिसान की झोंपड़ी ठेठ लाओ ढंग की थी। मजबूत बल्लियाँ लगा कर ज़मीन से छः फुट की ऊँचाई पर वह बनवायी गयी थी और उसके चारों तरफ़ बरामदा-सा था। उसमें जाने के लिए सीढ़ी लगी हुई थी। हमने ऊपर जाकर एक नजर उसके अन्दर डाली और घबरा कर लौट आये। गन्दगी से भरी हुई थी वह झोंपड़ी।

मेरे साथियों ने अन्दर की हर चीज निकाल डाली; दोनों कमरों के बीच बाँस का जो पर्दा खड़ा था उसे भी निकाल दिया। छत की कालिख और जाले साफ़ किये; चूहों के बिल तोड़ डाले और फिर दीवारों की सफ़ाई में लगे। एक ज़माने की गन्दगी जमा थी। उसे साफ़ करके बाल्टियाँ भर-भर के नदी से पानी लाये, साबुन का चूरा पेटियों से निकाला और फ़र्श को बिल्कुल नौसेना के तरीक़े से रगड़-रगड़ कर धोया।

फ़र्श पर बिछाने के लिए गाँववालों ने हमें बाँस की चटाइयाँ दीं। हमने अपने बिस्तर तथा मच्छरदानियाँ लगायीं। फिर खोखों की बनी हुई अलमारियाँ, बेंचें और मेजें लगायीं तथा दो खाटों को दीवार के सहारे लगा दिया। यह हमारा दीवानखाना बन गया।

पीट केसी का कहना था कि टेक्सास में गरीब से गरीब गौरांग भी ऐसी जगह में नहीं रहता। यह बात शायद सही होगी। परन्तु हमारी रहन-सहन से कम से कम कोई यह तो नहीं कह सकता था कि "लाओस कार्रवाई" के लोग स्थानीय जनता से अलग वायु-अनुकूलित "अमरीकी अहाते" में रहते थे।

हमने कभी मरीजों को देखने के समय की घोषणा नहीं की और न हमें प्रचार की आवश्यकता हुई। आने के कुछ दिन बाद ही एक रोज़ सुबह हमारी नींद कुछ तरह की आवाजों से खुली और फिर तो वे प्रत्येक प्रभात का सुपरिचित अंग बन गयीं। बीमार बच्चों के रोने और क्षय-पीड़ित माताओं के खाँसने की आवाजें। जब डाक्टर के दरवाजे पर ही जा बैठना सम्भव हो तो अस्पताल जाकर लाइन कौन लगाये!

वास्तव में वाँग वियेंग की स्वास्थ्य सम्बंधी भयंकर दुर्दशा देख कर मैं हैरान रह गया। चर्म-रोग, क्षय, न्यूमोनिया, मलेरिया, तथा अन्य कई दिल कँपा देनेवाली बीमारियों का साम्राज्य था वहाँ। कितनी ही औरतें प्रसूति में अपंग और मोहताज हो गयी थीं; कितने ही व्यक्तियों के चोट के घाव इलाज न होने से सड़ गये थे। इन्हें देख कर ही मैं व्याकुल हो गया।

भयानक चर्म-रोग "याज़" को तो हम "१-२-३ उपचार" यानी एक पेनिसिलिन का इंजेक्शन, दो लट्ठे साबुन और तीन दिनसे ठीक कर सकते थे। परन्तु क्षय का इलाज हमारे पास न था; खाँसी की दवा देकर खाँसी के दौरों को नियंत्रण में रखना ही हमारे लिए सम्भव था और यही हम करते थे; क्योंकि यह हड्डियाँ हिला देनेवाली खाँसी अक्सर न्यूमोनिया का कारण बनती है और रोगी की मृत्यु को नजदीक खींच लाती है।

हमारे सामने उपचार के लिए जो अत्यंत भयंकर रोग आये, उनमें एक था कोढ़। इसके रोगी मनुष्य नहीं, मनुष्यों के अवशेष मात्र थे, मनुष्य की आकृति से भिन्न, सड़े-गले और फूले हुए। इस घृणित रोग की देख-भाल करने में मुझे मिचली न हो जाय इस बात को बड़ा नियंत्रण करके ही मैं रोक पाता था।

हमारे रोगियों में पचास प्रतिशत से अधिक मलेरिया के शिकार थे। आम तौर से लोग कई-कई बार इस रोग से पीड़ित हो चुके थे और इस कारण उनमें उसका सामना करने की एक प्रकार की शक्ति आ गयी थी; परन्तु उनकी तिल्ली बहुत बढ़ी हुई थी। जब तिल्ली ख़राब हो जाती है, तब रक्त की बनने की शक्ति कुछ घट जाती है और ज़रा-सी कट-फट जाने से भी खून बहुत बह जाता है। इसलिए हम हर बीमार को भरपूर विटामिन देते थे।

एक दिन सुबह एक ग़रीब औरत ने बदबूदार चिथड़ों का एक बड़ा-सा पोटला मेरे हाथों में थमा दिया। कपड़ों की तहें हटाने के बाद उसमें लगभग सालभर का एक बच्चा निकला। देखने में बड़ा डरावना था वह। पेट ऐसा लगता था जैसे कोई बहुत फूला हुआ गुब्बारा हो और फटा ही चाहता हो, और छाती थी जैसे चिड़ियों का तीलियोंदार पिंजरा। छोटा-सा बंदर जैसा उसका मुँह था और उसमें अनियंत्रित दृष्टि-हीन आँखें। 'क्वाशिओरकोर'का रोग! इस रोग का यह पहला रोगी हमारे पास आया था। बाद में तो लाओस में इसके अगणित रोगी हमें देखने को मिले।

यह रोग गर्म क्षेत्र के पिछड़े हुए लोगों में काफी फैला हुआ है और संक्रामक नहीं है, बल्कि अज्ञान के कारण होता है। अपौष्टिक भोजन के परिणाम-स्वरूप यह भयंकर रोग होता है। भोजन जीवन के आवश्यक तत्त्वों में नहीं बदल पाता, माँसपेशियाँ क्षीण हो जाती हैं, जिगर और तिल्ली बढ़ जाते हैं, पेट सूज जाता है, और हृदय तथा रक्त-संचार-प्रणाली क्षतिग्रस्त हो जाती है। अन्तिम परिणाम होता है मृत्यु!

परन्तु यदि समय रहते रोग पकड़ लिया जाय तो उसका उपचार किया जा सकता है। उस बच्चे का रोग बहुत बढ़ चुका था। उसकी माँ बीमार पड़ गयी थी

और अपना दूध पिलाने में असमर्थ भी। इसलिए बच्चे को लगभग छः महीने की उम्र से ही केवल चावल और पानी मिल रहा था।

इस रोग के उपचार की सफलता भोजन के बारे में पूरी सावधानी बरतने पर निर्भर रहती है। भोजन इस तरह का देना चाहिए कि रोगी की दुर्बल काया पर किसी तरह का जोर न पड़े। हमने उसे विटामिनों के इंजेक्शन दिये और फिर "लाखों को भोजन" का बहुगुणी प्रोटीन खाद्य दिया। यह बहुगुणी खाद्य कई प्रकार से इस्तेमाल किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, दो औंस खाद्य का शोरवा उतना ही प्रोटीन दे सकता है जितना कि मांस का पूरा भोजन।

बच्चे को हमने बहुगुणी खाद्य के घोल और फलों के रस की खुराक पर रखा। इसका अदभुत परिणाम हुआ। दुर्भाग्य से दिल और आँखें तो इलाज की हद से बाहर हो चुकी थीं, परन्तु जान बच गयी।

उस रात मैंने अपने साथियों को बताया कि हम अपने भारी कार्यक्रम में एक योजना और शामिल करनेवाले थे। हम आहार, आरोग्यशास्त्र और ऐसे ही दूसरे विषयों के वर्ग शुरू करनेवाले थे जिनमें कोई भी आकर तालीम ले सकता था। "हमारे नगर" में अज्ञान से पैदा होने वाले रोगों का बहुत जोर था। तो हम क्यों न अभी से इस ओर ध्यान दें?

रोज प्रातःकाल से दोपहर तक हम अस्पताल में रोगियों को देखते थे। तीसरे पहर अपनी वफ़ादार 'एग्नेस' (जीप) में (जिस पर अब बुढ़ापा झलकने लगा था) ज़रूरी चीज़ें लाद कर आस-पास के देहात में मरीज देखने जाते थे। अक्सर मैं जब आपरेशन में लगा रहता, तो यह काम पीट और डेनी सम्हालते। फिर संध्या को लोग वाल्ट-डिस्ने के चित्र देखने के लिए हमारे घर के सामने जमा हो जाते। उसी समय हम अपने दुभाषिये चई के ज़रिये रहन-सहन के तथ्यों के बारे में लेक्चर देते।

चई ने सोचा कि वह अमरीकियों का दुभाषिया था, तो उसका रंग-ढंग भी उनके अनुरूप होना चाहिए। उसने वियंतियेन में अपने लिए एक जोड़ा जूता खरीदा। अब वह बड़ा आदमी था। लेकिन उसे चलने में इतनी तकलीफ़ होती थी कि जूते पहनने का सिलसिला कुछ दिन ही चला। फिर से उसके नंगे पाँव लाओस की मुलायम जमीन चूमने लगे। खास-खास मौक़ों पर जरूर वह जूते पहन लेता था, लेकिन ये मौक़े कभी-कभार आते थे और हमेशा ही उसके पैरों के लिए कष्टकर होते थे।

रोगियों की परीक्षा हमेशा ही बड़ी कठिन सिद्ध होती थी, क्योंकि हमें केवल रोगों और अज्ञान का ही नहीं, लोगों के विचित्र रीति-रिवाज का भी मुक़ाबला करना पड़ता था। कभी-कभी भीड़-भरे अहाते में रोगी दो कतारें लगा लेते थे और औषधालय के अन्दर पहुँच जाते थे। मैं एक कुर्सी पर बैठता था और चई मेरे बगल में। रोगी को मैं अपने सामने बेंच पर बैठाने की कोशिश करता था, लेकिन यह था बहुत मुश्किल काम।

जन साधारण के लिए अमरीकी डाक्टर का सामाजिक दर्जा तो बहुत ऊँचा होता है। (हमसे सम्पर्क होने मात्र से चई का भी दर्जा बढ़ गया था और लोग उसके लिए उस सम्बोधन का प्रयोग करते थे, जो अत्यन्त विशिष्ट व्यक्तियों के लिए ही काम में आता है।) कठिनाई यह थी कि प्राचीन परम्परा के अनुसार साधारण व्यक्ति का सर कुलीन व्यक्ति के सर से ऊँचा नहीं रह सकता। नतीजा यह होता था कि मैं मरीज़ की जाँच करने के लिए नीचे झुकता जाता था या कुर्सी से उतर कर नीचे बैठ जाता था। कभी-कभी तो मुझे रोगी के दिल की धड़कन सुनने के लिए गन्दा फ़र्श तक चूमना पड़ता था।

नर्सों की तालीम में भी हमारे सामने कठिनाइयाँ आयीं। तालीम पानेवाले लड़के और लड़कियाँ बुद्धिमान थीं, उनमें लगन थी और गन्दे से गन्दा काम करने में, शरीर के किसी भी और कैसे भी रोग से आक्रांत गन्दे अंग की देख-भाल करने में, उन्हें हिचकिचाहट नहीं होती थी। परन्तु प्रारम्भ में वे सर के ज़ख्म साफ़ करने को तैयार नहीं होते थे; दाँत निकालने या सर में टाँके लगाने के वक्त भी वे सर को पकड़ने से इन्कार करते थे। लाओस-वासी मानते हैं कि सर में बुद्ध की आत्मा का वास है, इसलिए उसे छूना भी मन्दिर को भ्रष्ट करने के समान है।

प्रसूति का काम जैसा भी हमसे हो सकता था, हम करते थे। शुरू से ही वह हमारी सबसे बड़ी समस्या रही। हमारा अनुमान था कि पचास फ़ीसदी बच्चे प्रसूति में या प्रसूति से पहले ही, काल के गाल में पहुँच जाते थे। पाँच पीछे एक माता प्रसव में ही मृत्यु की शिकार हो जाती थी, और जो बच जाती थीं, उनमें बहुत-सी अपाहिज या विकलांग हो जाती थीं।

लाओस में दाई का काम तो बच्चा पैदा होते ही समाप्त हो जाता है। बच्चे को कपड़े में लपेटकर टोकनी में लिटा दिया जाता है, उसके माथे पर राख मली जाती है और उसका दादा उसे बुद्धि प्रदान करने के लिए उसके कान में फूँक

मारता हैं। उधर माँ जो स्टूल पर सीधी बैठ कर बालक को जन्म देती है, यों ही उपेक्षित पड़ी रहती है और उसके रक्त-स्राव होता रहता है।

बालक की नाल काटने का दृश्य भी भयावह होता है। कैंची तो होती नहीं, इसलिए नाल बाँस के दो धारदार टुकड़ों से काटी जाती है। नाल कट तो साफ़ जाती है लेकिन बाँस के टुकड़े साधारणतया गन्दे होते हैं। फिर दाई नाल के मुँह में मिट्टी और राख का चूरा मलती है। लोगों का विश्वास है कि नाल में यह चूरा मलने से बालक वृक्षों की शक्ति और पृथ्वी में गड़े हुए अपने पूर्वजों की आत्मा प्राप्त करता है। विज्ञान की दृष्टि से यह क्रिया बड़ी भयावह है, परन्तु आश्चर्य की बात है कि हमने नाल के पकने या बिगड़ने का एक भी मामला नहीं देखा।

इन कारणों से हमने दाइयों के प्रशिक्षण के कार्यक्रम को प्राथमिकता दी। जब हम वाँग वियेंग आये तब वहाँ शायद चार दाइयाँ थीं और लगभग इतनी ही लड़कियाँ यह पेशा अपनाने को इच्छुक थीं। हमने इन सबको अपने पक्ष में किया; अस्पताल में उनसे सहायता लेने लगे और उनसे वादा करवा लिया कि हर प्रसूति में वे हमें बुलायेंगी। जहाँ कहीं भी हमें बुलाया जाता, एक-दो लड़कियों को हम साथ ले जाते। हर बार "केअर" का प्रसूति-उपकरणों का थैला हमारे साथ जरूर रहता। हर थैले में पच्चीस प्रसूतियों के लिए आवश्यक चोगे, दस्ताने, नाल बाँधने की डोरी, प्याले, मरहम-पट्टी का सामान, साबुन, तौलिये, वग़ैरा ज़रूरी चीज़ें रहती थीं।

हमने लड़कियों को आधुनिक निरापद प्रसूति के सिद्धान्त सिखाये तथा प्रसव के उपरान्त जच्चा की पूरी देख-भाल करने की महत्ता समझायी। नाल सम्बंधी क्रियाएँ भी इसमें शामिल थीं। जब कोई लड़की हमारी देख-भाल में पच्चीस प्रसव करवा देती थी और अपनी कुशलता तथा सेवा-भावना सिद्ध कर देती थी, तब उसे विधिवत् "स्नातिका" बनाया जाता था और "केअर" का थैला भेंट किया जाता था – वही थैला जो मैं खुद प्रसूति के समय अपने साथ ले जाता था। (मानरक्षा के लिए इस चीज का महत्व बहुत अधिक था।)

जैसे अमरीका में नर्सों को स्नातिका होने पर "टोपी" दी जाती है, वैसे ही वाँग वियेंग में हम अपनी दाइयों को थैले देते थे। यह चीज बहुत सफल रही। "केअर" के थैलों से सज्जित और निरापद प्रसव के आधुनिक सिद्धान्तों के प्रति थोड़ी-बहुत निष्ठा रखनेवाली उन नवयुवतियों ने लाओस के उस प्रदेश में प्रसूति के बहुत-से पुराने भयावह ख़तरों को दूर कर दिया है।

हम केवल आदमियों का ही इलाज नहीं करते थे। एक दिन एक आदमी पीट के पास आया और उसने अपने किसी मित्र के रोग के लक्षण बयान किये। वह मित्र अशक्त हो रहा था, अपना सर भी ऊँचा नहीं कर सकता था, उसके पैर खराब हो गये थे और दिन-ब-दिन उसका वज़न घटता जा रहा था। उस आदमी ने बताया कि उसके मित्र को बाघ ने घायल कर दिया था और इसके कुछ सप्ताह बाद ये लक्षण प्रकट हुए थे। पीटर को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने पूछा–"तुम्हारे मित्र की उम्र क्या है?" उस आदमी को उम्र का कुछ अन्दाज न था। उससे यह पूछना व्यर्थ था कि मित्र का वज़न कितना घटा था, क्योंकि लाओस में इस तरह की माप-जोख की व्यवस्था ही नहीं थी। पीटर ने कई बातें उससे पूछीं और अन्त में कहा कि उसे अपने मित्र को अस्पताल में लाना पड़ेगा। वह आदमी बोला कि मित्र को वह साथ लेकर ही आया है; वह अस्पताल के बाहर बँधा हुआ है। पीटर ने बाहर जाकर दोस्त को देखा। एक छोटा-सा तिब्बती टट्टू पेड़ से बँधा हुआ था। पीट ने मुझे बुलाया। मैं भी पहुँचा और हमने आपस में मशविरा किया। टट्टू की हालत वास्तव में खराब थी। बाघ ने उसके गले और सीने में जख्म कर दिये थे और मस्तक चीर दिया था। जहाँ-जहाँ बाघ के नाखून लगे थे, वहाँ–वहाँ कीड़े पड़ गये थे। मैंने साबुन और रूई की मदद से जख्मों को धोकर साफ किया और उन पर 'एंटिसेप्टिक' दवा लगायी। कीड़ों की रोक-थाम के लिए उसकी गर्दन में-बड़ी सी पट्टी भी बाँध दी। पीट ने टट्टू के बदन में जगह-जगह पेनिसिलिन के इंजेक्शन लगाये, हालाँकि यह हमें ठीक से मालूम न था कि घोड़ों को यह दवा कितनी देनी चाहिए। बीमार प्रति दिन आता रहा और उसकी हालत सुधरती गयी। वह अच्छा हो गया। लेकिन अब हमारे बचाव का कोई रास्ता न रहा। बात फैल चुकी थी और फिर शायद ही कोई ऐसा सप्ताह बीता होगा जिसमें कोई आदमी अपना घोड़ा या भैंस, उपचार के लिए हमारे पास न लाया हो। इन चौपायों के रोग भी उतने ही विभिन्न प्रकार के होते हैं जितने कि हमारे दोपाये रोगियों के–खराब आँखें, खाँसी, वज़न में कमी, बुखार या बुढ़ापा।

एक दिन सुबह हम अपने राशन और काफ़ी का नाश्ता कर रहे थे। मकान के सामने औरतें जमा थीं। मैं उन पर एक नज़र डाल कर पीट से उनके बारे में बात करने लगा। साधारणतया प्रति दिन प्रातःकाल लोग इसी तरह जमा हुआ करते थे; लेकिन उस दिन भीड़ इतनी ज्यादा थी कि सामने वाले 'लान'

तक पहुँच गयी थी। उसमें लगभग बारह साल का एक लड़का भी था। वह लाओ जाति का नहीं, बल्कि खा क़बीले का था। हालत सभी की खराब थी, लेकिन इस लड़के की सबसे ज्यादा खराब थी। सुबह की सर्दी में वह ज़मीन पर बैठा हुआ काँप रहा था। मैले-कुचैले चिथड़े उसने लपेट रखे थे। मैं जब घर से अस्पताल को रवाना हुआ, तो उसने उठ कर मुझसे कहा—"मेरी टाँग में तकलीफ़ है।"

मैंने उसकी टाँग देखी। कहीं वह ज़रा-सी कट गयी थी, परन्तु अब वहाँ बड़ा-सा ज़ख्म बन चुका था और वह बुरी तरह सड़ गया था। मुझे ताज्जुब तो यह हुआ कि वह चल भी कैसे पाता था। मैंने अपने दुभाषिये चई के द्वारा उससे पूछा कि वह हमारे पास पहुँचा कैसे? उसने बताया कि दो दिन और दो रात चल कर वह उसी दिन लगभग आधी रात को हमारे घर पहुँचा था। बुख़ार की हालत में उस लड़के ने वह सर्द और निर्जन रात मेरे घर के बाहर बैठ कर क्यों बितायी? "मैंने गोरे साहबों की नींद में ख़लल डालना उचित नहीं समझा।" उसका उत्तर था।

हमने तुरन्त ही इलाज शुरू कर दिया। उसे बेहोश करके हमने उसकी टाँग से मवाद के जमाव की जगहों को काट कर निकाल दिया और मवाद निकाला। हमने उसके ज़ख्म पर पट्टी नहीं बाँधी ताकि मवाद आप ही निकलता रहे और उसे साफ़-सुथरे बिस्तर पर सुला दिया। कई दिन बाद हम उसे यह विश्वास दिलाने में सफल हो गये कि नदी में स्नान करना बहुत फ़ायदेमन्द होगा और आनन्ददायक भी। नदी पास ही थी। बुख़ार की हालत में भी उसे नहलाना ज़रूरी था।

हमने उसे साबुन और ब्रश दिया। वह लंगड़ाता हुआ नदी पर गया और बदन को उसने इतना मला जितना जिन्दगी में कभी नहीं मला होगा। वह हमें खुश करना चाहता था। मेरे साथियों ने उसे एक साफ कमीज़ और एक खाकी पतलून इनाम में दी। "केअर" का एक बढ़िया नया कम्बल भी उसे हमेशा के लिए दे दिया। लड़के की खुशी का ठिकाना नहीं था। इससे अधिक खुश किसी बच्चे को मैंने कम ही देखा है। दस दिन और वह हमारे नये अस्पताल में रहा और हमने उसे 'एंटिबायोटिक' औषधियाँ व विटामिन तो दिये ही, उसे हमसे वह भी मिला, जिसे अमरीकी नर्सें "सहृदय प्रेमपूर्ण परिचर्या" कहती हैं। उसने सबसे अधिक इसी चीज़ को ग्रहण किया। किसी का प्यार पाना उसके लिए सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण था। उस लड़के ने बहुत कष्ट झेला था। अब थोड़ा-बहुत सुख और आराम उसे मिलना ही चाहिए था। हमने उसे जब इच्छा हो, तब हमारे पास

आने का अधिकार दिया और इस बात को उसे बार-बार समझाया। जब उसे अस्पताल से छुट्टी मिली, तब उसकी टाँग तो उस संक्रमण के विष से मुक्त हो ही चुकी थी, लेकिन वह स्वयं उससे भी खतरनाक विष, भय से मुक्त हो चुका था।

लाओस में मेरे पास बैटरी से चलने वाला टेप रिकार्डर (ध्वनि-संग्राहक यंत्र) था। हर हफ्ते मैं उससे 'टेप' पर रिकार्डिंग करके सेंट लुई के एक रेडियो स्टेशन "के एम ओ एक्स" को भेजा करता था। वहाँ से वह सेंट लुई में इस आशा से प्रसारित किया जाता था कि लोग हमारे कार्य और उद्देश्य को कुछ समझेंगे। मैं सुननेवालों को लाओस के छोटे-से राज्य की, उसके दुख-दर्द, अव्यवस्था और रोगों की जानकारी कराना चाहता था। मैंने सेंट लुई के लोगों को दुनिया के इस हिस्से के बालकों का परिचय देने की कोशिश की। मुझे मालूम है कि सेंट लुई के लोगों ने मेरी बातें सुनीं, क्योंकि मुझे उनके उत्तर प्राप्त हुए। एक बार मैंने कहा-"काश कि मेरे पास कुछ गर्म चाकलेट होता।" मुझे क्या पता था! डाक से, हवाई जहाज़ से और यातायात के हर साधन से मुझे जो प्रत्युत्तर मिला, उससे मैं चकित रह गया। गर्म चाकलेट के सैकड़ों ही डिब्बे हमारे पास आये। मेरे साथियों ने कहा कि मुझे कहना चाहिए था-"काश कि मेरे पास मांस की एक सैंडविच और कुछ फ्रांसीसी तरीके से तले हुए आलू होते।"

बेसिलियन क्लब हर हफ़्ते मुझे 'पैनकेक' के आटे के डिब्बे भेजने लगा। इससे हमारे जीवन-स्तर में तो कुछ सुधार हुआ, परन्तु पेट का स्तर गिरने लगा। पीटर ने सोचा कि मालिक को खिला-पिला कर मोटा कर दूँ। इससे मालिक का स्वभाव भी शायद कुछ सुधर जाये। इसलिए वह सुबह के नाश्ते के लिए 'पैनकेक' बनाने लगा। मुझे यक़ीन है कि अपनी ज़िन्दगी में उसने पहले कभी 'पैनकेक' नहीं बनाये थे। वह 'पैनकेक' चाहे छोटे बनाता था चाहे बड़े, उन्हें चाहे थोड़ी-सी देर पकाता था, चाहे बहुत देर, उनमें एक गुण बराबर विद्यमान रहा था—वे सब चमचिचड़े होते थे। एक दिन कुछ गुंधा हुआ आटा बच गया। उसने उसे अगले दिन के लिए उठा कर रख दिया। लेकिन अगले दिन सुबह देखा, तो वह काम का ही नहीं रहा था, जम कर पत्थर जैसा हो गया था।

लाओस के अपने इस मिशन का विचार और आयोजन करने में मैंने हज़ारों घंटे लगाये थे, परन्तु उस दुख-दर्द और कष्ट का मुझे अनुमान भी नहीं हुआ था जिसमें कि हमें काम करना और रहना पड़ा। वाशिंगटन में बातचीत के दौरान, लाओस के राजदूतावास या हाँगकाँग में अथवा वियतनाम के शरणार्थी-शिविरों में किसी ने हमें यह ठीक-ठीक नहीं बताया था कि लाओस के मध्य भाग के उष्णकटिबंध के जंगलों

में हम चार अमरीकियों की ज़िन्दगी कैसी होगी। मैंने लाओस के विषय में बहुत-सी जानकारी हासिल की थी; जिस देश को हमने अपना कार्य-क्षेत्र बनाने का फ़ैसला किया था, उसकी दशा और परिस्थितियों का परिचय प्राप्त करने के लिए मैंने अमरीका में सार्वजनिक पुस्तकालयों, राष्ट्रीय भौगोलिक संस्था (नेशनल ज्योग्राफ़िकल सोसायटी), विदेश विभाग और अमरीकी सूचना एजेन्सी को तथा और जिस स्रोत से भी कुछ जानकारी मिल सकती थी, उसे अच्छी तरह छान मारा था। इस तरह जो तथ्य मैंने जमा किये थे उन्हीं के आधार पर मैंने अपने मिशन का आयोजन किया था। परन्तु वाँग वियेंग की दशा देख कर मैं हैरान रह गया; ऐसी दशा की मैंने स्वप्न में भी कल्पना नहीं की थी।

लाओस में कुछ सप्ताह बीतने के बाद बीस वर्ष का एक नवयुवक, 'सी' हमारे दल में आ गया। घर को सम्हालने के अतिरिक्त छोटे-मोटे सब काम उसके जिम्मे कर दिये गये। वही हमारा रसोइया था और बोतलें धोने का काम भी उसे सौंपा गया। देखने से वह ग्यारह बरस का लगता था। उसके दो दाँत सोने के थे जिन पर उसे गर्व था। इन लोगों में सोने के दाँत समृद्धि की निशानी माने जाते हैं। वह अपने अमरीकी साहबों की सेवा बड़े मन से करता था। नौकर-चाकर, रसोइया और दुभाषिये रखना अमरीका में कुछ और अर्थ रखता है, लेकिन लाओस में कुछ और। हम इन लोगों को नौकर नहीं, अपने दल का अभिन्न अंग मानते थे। वे हमारे साथ भोजन करते थे, नहाते थे, तैरते थे, काम करते थे और रात को जब हम किसी रोगी को देखने जाते थे, तो हमारे साथ जाते थे। बाद में हमसे उनका सम्बन्ध बहुत घनिष्ट हो गया, हमारे जीवन के हर पहलू पर वे पूरा ध्यान देने लगे और जब भी उनसे हो सकता, वे हमारे बोझ को हल्का करने का प्रयत्न करते। हम भी उन सबको बहुत चाहने लगे थे।

हमारा घरेलू जीवन तो एक ढर्रे पर चल रहा था, पूर्णतया एकरस। रोज़ का वही क्रम था – अस्पताल में रोगियों की क़तारें, चिन्ताजनक बीमारियाँ, दुर्गंध और दुख–दर्द। भोजन भी रोज़ हमारा वैसा ही, एक ढंग का होता था। हमारी दिनचर्या में भोजन का समय सबसे कम उत्साहजनक होता था। उत्तरी वियतनाम में हमें कभी-कभी पेचिश की शिकायत तो ज़रूर हो जाती जाती थी, लेकिन सौभाग्य से, इसके अलावा हमें पेट की कभी कोई तकलीफ नहीं हुई। इसका कुछ श्रेय तो हमारी सावधानी को था और कुछ हमारे सौभाग्य को। इस वर्ष हमें अपने सौभाग्य पर इतना भरोसा नहीं था, इसलिए हमने दूनी सावधानी बरतने का फ़ैसला किया। नौसेना ने हमें बहुत काफी मात्रा में सी-राशन देकर हमारी भोजन सम्बंधी समस्या

को हल करने में बहुत सहायता दी थी। इस राशन पर किसी को पेचिश की शिकायत हो ही कैसे सकती है? भूख से बहुत परेशान होकर पहले दिन तो जरूर हमने चीनी शोरवा लिया था, बाक़ी लगातार कई महीने हम सिर्फ इस खाद्यान्न का भोज करते रहे। ओजिसान की पत्नी हमारा खाना बनाया करती थी और इसकी देख-भाल पीट के जिम्मे थी। पीट की कल्पना—शक्ति जबर्दस्त थी। उसने रसोई बनाना कभी सीखा नहीं था, फिर भी प्रत्येक बार भोजन के लिए वह एक बहुत बढ़िया व्यंजन तैयार करवा देता था। इसमें शिकायत सिर्फ यही थी कि वह व्यंजन सदा ही एक-सा होता था।

यह खाद्यान्न तरह-तरह के डिब्बों में आता था: अमरीका के बाजारों में मिलनेवाले रंग-बिरंगे सुन्दर डिब्बों में नहीं, बल्कि बेरौनक़ हरे, भूरे डिब्बों में, जिन्हें देखने से ही चिढ़ आती है। उनमें चीजें इस प्रकार होती थीं—डिब्बा नं० एक, फलियाँ और माँस; डिब्बा नं० दो, गाय के माँस का शोरवा: डिब्बा नं० तीन, सूअर के माँस के बिना मसाले के एक प्रकार के कबाब; डिब्बा नं० चार, गाय का माँस और मटर; डिब्बा नं० पाँच, मुर्गी और फलियाँ। पीटर इनको बारी-बारी से लेता था। इस भोजन को वह हमारे यहाँ पके हुए चावल में मिलाता था और इस अजीब खिचड़ी में बड़ी चतुराई से 'बी – १' भी ठीक मात्रा में मिला देता था। लेकिन यह 'बी – १' है क्या? यह भी सी – राशन की ही एक मुसीबत है। एक ऐसा पदार्थ, जो सख्त बिस्कुट, कोको और मुरब्बा मिला कर बनाया जाता है। हमारी तृप्ति के लिए पीटर यह भानमती का पिटारा तैयार करता था। पीटर स्वयं और उसकी पाकशास्त्र में प्रवीणता हमारे लिए पोर्ट आर्थर, टेक्सास का शानदार उपहार ही थे!

अपने भोजन के बारे में मजाक़ करना आसान था और बहुत ज़रूरी भी। रोज दोनों वक्त एक ही ढंग का भोजन और हाज्मे की नित्य की समस्याएँ मुसीबत बन गयीं। यह एक अजीब बात है कि आदमी जब अपनी दुनिया के छोर पर, कहीं जंगल में जा पहुँचता है, तो ये छोटी-छोटी चीजें भी कितना बड़ा और व्यापक रूप ले लेती हैं। अपने मस्तिष्क का संतुलन बनाये रखने के लिए ज़रूरी था कि हम अपनी हँसी-मजाक़ की प्रवृत्ति को कायम रखते।

जैसे-जैसे दिन बीतते गये, हमारी ख्याति उस प्रदेश में फैलती गयी। गाँव वालों से हमेशा हम यह आग्रह करते थे कि वे हमारी दवाइयों और इलाज का मूल्य हमें कुछ वस्तुएँ देकर चुकायें। यह उनकी आत्म-सम्मान की भावना को बनाये रखने के लिए और हमारे लिए भी जरूरी था। मिशन को चलाने का खर्च

बहुत था। मैंने अपनी सारी योजना उत्तरी लाओस के लिए बनायी थी और अधिकांश सामान हम ठंडे मौसम के लिए लाये थे। उत्तर में जाने की अनुमति मिली नहीं। परिणाम-स्वरूप मुझे बहुत-से ढंग के सामान खरीदने पड़े। मुझे हमेशा यह चिन्ता लगी रहती थी कि अपने गन्तव्य प्रदेश, उत्तरी लाओस पहुँचने से पहले ही मेरी सारी पूँजी उड़ जायगी। पैसे-पैसे की बचत करना हमारे लिए जरूरी हो गया। अतः यह सीधा-सा विचार कि हमारे रोगी चीजों के रूप में हमारा भुगतान करें, बहुत महत्त्वपूर्ण बन गया। इसके फलस्वरूप दिन-भर में दर्जनों अंडे, कई नारियल और कभी-कभी स्थानीय मदिरा की एक बोतल भी हमें मिल जाती थी, और जिस दिन भाग्य अच्छा होता, उस दिन कोई दुबली-पतली मुर्गी भी।

हर रोज सुबह हम अस्पताल में मरीजों को देखते थे। इसके बाद दोपहर का भोजन करके हम जीप में दवाइयाँ भर कर तीसरे पहर आस-पास के इलाक़े में रोगियों को देखने जाते। दल के दो सदस्य इस काम पर निकलते थे। वाँग वियेंग के आस-पास दर्जनों गाँव हैं। हमारी जीप जोर-जोर से हार्न बजाती हुई किसी एक गाँव में पहुँच जाती। जीप खड़ी करके उसका पिछला दरवाजा हम खोल देते थे और किसी से बाल्टी में पानी मँगवा कर अपने दवाइयों के बक्से खोलते थे। तुरन्त ही हमारे इस चलते-फिरते अस्पताल का काम जोर-शोर से चलने लगता था। दोपहर में इस तरह हम उन रोगियों को देखते थे, जो या तो भयंकर बीमारी के कारण लगभग चार घंटे चल कर वाँग वियेंग आने में असमर्थ होते थे या जिनका रोग इतना मामूली होता था कि वे चार घंटे चल कर आना पसन्द ही नहीं करते।

अस्पताल के कमरे की भीड़ में हमें दुख-दर्द के बोझ का और क़ैदखाने का सा अनुभव होता था। मानसिक संतुलन को हिला देनेवाले इस अनुभव से हम इन दौरों में बच जाते थे। हमें कम-से-कम हिलने-डुलने की सुविधा रहती थी और ताजी हवा मिलती थी। उन लोगों की झोंपड़ियों में जाने की महत्ता हमें मालूम थी। उन्होंने पहले कभी किसी अमरीकी को नहीं देखा था, अपने घर में कभी किसी गौरांग का स्वागत-सत्कार नहीं किया था। और अपने घरों पर उन्हें भी उतना ही गर्व था जितना हमें होता है। मेरा अनुमान है कि हम तीन हजार से ज्यादा एशियाई घरों में जा चुके हैं। अक्सर उन झोंपड़ियों के अन्दर बहुत अधिक गर्मी और उमस रहती थी। हमारे दृष्टिकोण से अधिकांश झोंपड़ियाँ बहुत ही गन्दी होती थीं और जुओं, पिस्सुओं, मच्छरों और कीड़े-मकोड़ों से भरी रहती थीं। हर झोंपड़ी के अंधेरे कोनों में वही दृश्य दिखाई पड़ता—पेट निकले हुए बच्चे, अपर्याप्त और अपुष्टिकर भोजन के शिकार, रोगी।

हम हमेशा अपने साथ एक काला बैग रखते थे। अमरीका में तो डाक्टरों के लिए यह बैग साथ रखना अनिवार्य है। लाओस में भी लाभप्रद था। जीप में हम विभिन्न दवाइयों, बहुगुणी खाद्य इत्यादि के अतिरिक्त डिब्बे, और बच्चों व बूढ़ों को बहलाने-फुसलाने के लिए कमीजें और कभी-कभी खट्टी-मीठी गोलियाँ, आदि भी साथ लाते थे। अमरीका से एक मित्र ने एक बक्स भर छोटे-छोटे अमरीकी झंडे भेजे थे। एक बड़ा झंडा तो हमने अपने घर पर लगा दिया था और बाक़ी अपने डाक्टरी थैलों, सामान और बक्सों पर चिपका दिये थे। हमारे देश का यह भव्य निशान डेनी ने जीप पर भी लगा दिया था। जंगली रास्तों में कई बार वह फट-सा गया; फिर भी हमारे देश के प्रतीक के रूप में वह सर ऊँचा किये रहा।

हमने अमरीकी घरों की पानी की व्यवस्था की अच्छाइयों का बखान वहाँ नहीं किया, माउंट वर्नोन की सुन्दरता के बारे में एक शब्द भी नहीं कहा, न जनतांत्रिक प्रणाली के गुण गाये। धर्म-परिवर्तन का तो नाम भी नहीं लिया। हमने सिर्फ़ दो बातें अपने साथ रखीं—अमरीकी ध्वज और वे शब्द जो हम अपनी हर बात के पहले दुभाषिये से कहलवाते थे। वे शब्द थे—"अमरीकी डाक्टर कहते हैं......" हमें शब्दों का आसरा नहीं लेना था, हमें तो कुछ करके दिखना था।

सर्दियों में मुझे एक पत्र मिला। उसे पढ़ कर मुझे ऐसा लगा मानो कोई गाँव का पुरोहित महन्त बना दिया गया हो। पत्र के द्वारा मुझे सूचित किया गया था कि अमरीका के जूनियर चेम्बर आफ़ कामर्स ने १९५६ के दस विशिष्ट युवकों में मुझे भी चुना है। इसके कई लाभ हुए। उनमें एक यह भी था कि मुझसे लाओस के जेसीज़ दल का सम्मान्य सदस्य बनने का अनुरोध किया गया। यह दल अभी क़ायम ही हुआ था और राजधानी के प्रमुख युवक इसके सदस्य थे। मैं उसमें शामिल हो गया, लेकिन उसकी केवल एक बैठक में ही मैं भाग ले सका। तभी अन्य सदस्यों ने मुझसे पूछा था कि वे मेरे मिशन की क्या सहायता कर सकते हैं। मैं आया था लाओ लोगों की सहायता करने और यहाँ लाओ लोग स्वयं भी मेरी मदद करने को तैयार थे।

हर पखवाड़े मेरे दल के दो सदस्य जीप से जंगल पार करके वियंतियेन जाते थे। आयी हुई डाक को लाने और भेजने की डाक को डाकखाने में देने के अतिरिक्त ज़रूरत का सामान खरीदना भी उनके जिम्मे था। सामान को जीप के ट्रेलर में लाद कर वे अगले दिन वाँग वियेंग लौटते थे। हर महीने हमें पेट्रोल का ड्रम भी खरीदना पड़ता था, जिसे लाद कर बड़ी सावधानी से वाँग वियेंग लाया जाता था।

अस्पताल से छुट्टी मिलने का कोई भी अवसर होता तो आनन्ददायक भी, परन्तु जीप की लम्बी यात्रा में हमेशा भय और शंका बनी रहती थी। अगर कहीं जीप बिगड़ जाती तो दोनों व्यक्ति कई दिन पैदल चल कर ही राजधानी पहुँच पाते। उन महीनों में सड़क पर यातायात नाम को भी शायद ही होता था। बेकर 'ऐग्नेस' की बराबर देखभाल करता रहता था; फिर भी रोज़-रोज़ की गाँवों की यात्राओं ने उसके अंजर-पंजर ढीले कर दिये थे।

वियंतियेन पहुँचने के बाद हमारी उमंग का ठिकाना नहीं रहता था। मेरे जैसे काम करने वाले लोगों के लिए जिन्दादिल होना बहुत आवश्यक है। वियंतियेन में हमारे लिए सबसे अच्छा स्थान था हावर्ड और मार्था काफ़मैन का घर। लाओस में हावर्ड निश्चय ही हमारा सबसे बड़ा दोस्त था। वह मानव शरीर-रचना-विज्ञान का शास्त्री है और लाओस में अमरीकी सरकार के कर्मचारियों में केवल एक ही है, जिसने लाओस की भाषा बोलने का अभ्यास किया है। 'यूनाइटेड स्टेट्स आपरेशंस मिशन' के सामूहिक विकास-कार्यक्रम में वह नियुक्त है; परन्तु दुर्भाग्य से "एक बड़े मिशन की आवश्यकताओं" के कारण उसे राजधानी से बाहर जाकर जन-साधारण से मिलने का अवसर नहीं मिलता। उसकी पत्नी मार्था उस समय थी तो सिर्फ़ लगभग पच्चीस वर्ष की, परन्तु हम सबके लिए माता के समान थी। कई घंटे जीप से सफर करके हम धूल में नहाये हुए ठीक भोजन के समय उनके यहाँ पहुँचते थे, फिर भी उसे ज़रा भी परेशानी या घबराहट नहीं होती थी। गरम पानी तैयार मिलता था और हम नहा लेते थे। हम अपने कुछ धुले हुए कपड़े वहीं रखते थे। मार्था इतने में और खाना बनवा लेती थी और हम सब एक मेज के चारों ओर कुर्सियों पर बैठ कर भोजन करते थे। (खोखे के चारों ओर फर्श पर बैठ कर सी-राशन के खाद्यान्न से पेट भरने से यहीं मुक्ति मिलती थी।)

कुछ महीनों के बाद जब मेरे अपने ही विश्वविद्यालय (नाटरडेम विश्वविद्यालय) के कुछ व्यक्ति मेरे दल में आये, तो हम सब रात को जोर-जोर से अपने धर्म की माला जपा करते थे। एक दिन मैंने पीट केसी को, जो प्रोटेस्टेंट मतावलम्बी था, हावर्ड से यह कहते सुना कि रात को यहाँ जंगल में सोना भी मुश्किल है; ये कैथोलिक लोग हर वक्त जोर-जोर से माला के मनके ही फिराया करते हैं!

मैं अपने इन तीनों साथियों की और जो दो साथी बाद में आये, उनकी कहाँ तक प्रशंसा करूँ! ये लोग सभी प्रकार के गन्दे काम करते थे, पर उनके माथ पर कभी शिकन

तक नहीं आयी। आम तौर से वे आपस में हँसी-मज़ाक़ ही करते रहते थे। हर तरह से वे लोग बड़े अच्छे आदमी थे। पीट हर काम करने को तैयार रहता था और उसका हाथ बड़ा हल्का था। उसका बोलने का ढंग अपना टेक्सास-अमरीकी ही था, लेकिन लगता था कि सब लोग किसी तरह उसकी बात हमेशा ही समझ लेते थे। फ्रांसीसी-भाषी नोर्मन बेकर हमारा मैकेनिक था, और हर छोटा-मोटा काम उसीके ज़िम्मे था। वह ऐसी पट्टी बाँधता था जो हर्गिज़ उतर नहीं सकती थी। चाहे जैसी पट्टी हो वह अपनी पूरी कोशिश करके उसे बाँध देता था और फिर वह सरक भी नहीं सकती थी। डेनी शेपर्ड, जो डाक्टरी पढ़ने को जानेवाला था, मेधावी व्यक्ति था और ऊँचे दर्जे का इलाज करता था। मुझे मानना पड़ेगा कि डा. डूली (लेखक स्वयं) कस कर काम लेता था। अक्सर मैं बिगड़ जाता था, लेकिन मेरे साथी हार नहीं मानते थे। मैं मानता हूँ कि मेरे साथियों ने किसी एक महान नाटकीय संदर्भ में नहीं, अपितु निरंतर, नित्य प्रति के आचरण में शौर्य, त्याग की भावना और साहस का प्रदर्शन किया।

अध्याय ४

प्रस्थान की तैयारी

अपने निवास-स्थान की दीवार पर बीस डालर का एक नोट हमने इसलिए टाँग रखा था कि अगर हममें से कोई क्रोध से पागल हो जाये या जिसे घर की याद सताने लगे या इस काम से ही ऊब जाये, तो वह यह नोट उठाये और घर का रास्ता पकड़े। किसी ने इस नोट को छुआ तक नहीं। परन्तु मुझे विश्वास है कि दुख-दर्द, गन्दगी और बीमारी से लड़ने की उन लम्बी रातों और दिनों में कई बार मेरे साथियों के मन में इस नोट को उठा कर चल देने का लोभ अवश्य पैदा हुआ होगा।

डेनी ने नयी-नयी शादी की थी और उसे अपनी पत्नी बहुत याद आती थी। फ़ुर्सत के समय वह लम्बी-लम्बी चिट्ठियाँ लिखा करता था। नोर्मन बेकर की पत्नी गर्भवती थी। ज्यों-ज्यों उसके प्रसव का समय निकट आता था, बेकर की परेशानी बढ़ती गयी। (सौभाग्य से मेरी माँ ने उसकी पत्नी प्रिसिल्ला से बराबर सम्पर्क कायम रखा। नवम्बर में एक दिन मास्टर टामस बेकर, उसके पुत्र, का जन्म

हुआ और उसके पिता को इसकी सूचना वियंतियेन के हमारे राजदूतावास के द्वारा बहत्तर घंटों से भी कम समय में मिल गयी।)

छूत लगने का डर हमारे मन में घर कर गया था। हमें हमेशा यह भान रहता था कि जिस चीज़ को भी हम छूते हैं, उसी में छूत का ख़तरा है। दिन में न जाने कितनी बार रगड़-रगड़ कर हम अपने हाथ धोते थे, 'अल्कोहोल' (मद्यसार) से अपने हाथ साफ़ करते थे, यहाँ तक कि त्वचा ख़ुश्क होकर फटने जैसी हो जाती थी। फिर भी संध्या के समय यही इच्छा होती थी कि अपने कपड़े जला डालें और 'अल्कोहोल' से स्नान करें।

जब कभी हममें से कोई आवाज़ लगाता—"चलो, नदी पर चलें!" तभी हम सब-के-सब किनारे पर पहुँच कर अपने कपड़े उतार फेंकते और पानी में कूद पड़ते। आधे घंटे तक हम ख़ूब साबुन मल-मल कर नहाते। फिर भी हमें यह नहीं लगता था कि अब हम पूर्णतया स्वच्छ और निर्मल हैं।

इसी से पीट को स्नान के लिए फ़व्वारा लगाने की सूझी। उसके पास फ़व्वारा तो था। यह वह वियंतियेन के होटल से उखाड़ लाया था। उसने फ़व्वारा लगाने की बड़ी अजीबो-ग़रीब तरकीब सोची। इसके लिए पेट्रोल का पचपन गैलन का ड्रम अट्ठारह फ़ीट ऊँची तिपाई पर खड़ा करना था। ओजिसान और कुछ कुलियों के साथ वह इमारती लकड़ी की तलाश में निकला। इस काम के लिए वहाँ लकड़ी केवल सागवान की उपलब्ध थी। उसका पाँच फ़ीट का लट्ठा उठाने के लिए चार मज़बूत आदमी लगते थे। लेकिन पीट घबराया नहीं।

दो हफ़्तों की जी-तोड़ मेहनत और बक-झक के बाद फ़व्वारा बन कर तैयार हो गया। फ़व्वारा क्या था मानो टेक्सास की तेल का कुआँ खोदने की मशीन और पीसा की टेढ़ी मीनार के बीच की कोई चीज़ हो। वह विशाल ड्रम एक रस्सी के सहारे नीचे उतारा जाता था और उसमें पानी भरने के बाद उसकी रस्सी 'एग्नेस' से बाँध दी जाती थी। जीप को फिर चलाया जाता था और चार सौ पौंड का ड्रम हवा में झूलने लगता था। आख़िर जब वह अपनी तिपाई में बैठ जाता था, तो कोई ऊपर चढ़ कर वह मिट्टी के तेल की बत्ती जला देता था, जो ड्रम के नीचे एक तख़्ते पर लगा दी गयी थी।

पचपन गैलन पानी लगभग दो घंटे में गरम होता था। यह सारा इंतज़ाम लगता तो बहुत अजीब था, परन्तु फ़व्वारे के गरमागरम पानी से नहाने के बाद सबको यह मानना पड़ता था कि पीट का फ़व्वारा था कामयाब। कम से कम उससे नहाने के बाद हम लोगों को कुछ ज्यादा सफ़ाई का अनुभव होता था।

एक दिन नवम्बर में हम हमेशा की तरह काम में व्यस्त थे। दोपहर में हमने जल्दी-जल्दी खाना खाया और फिर काम में लग गये। मुँह से किसी ने कुछ नहीं कहा, लेकिन जानते हम सब थे कि वह "थैंक्स गिविंग" (ईश्वर के प्रति आभार प्रकट करने का एक त्यौहार) का दिन था। उस दिन हमें घर की याद हमेशा से कुछ ज्यादा सता रही थी। सन्ध्या के समय हमें एक जीप की कर्कश आवाज़ सुनायी दी। धूल का एक बादल सड़क पर उड़ता हुआ हमारे मकान तक आया और उसमें से अपने गोल-मटोल मुँह पर मनमोहक मुस्कान लिये हुए उतरा एक युवक, टेक्सास का जेफ़रसन डेविस चीक।

जेफ़ चीक वियंतियेन में 'यूनाइटेड स्टेट्स आपरेशंस मिशन' में नियुक्त था। वह उन थोड़े-से व्यक्तियों में था, जो कभी-कभी हमारे यहाँ आ जाया करते थे। उसने आते ही कहा कि वियंतियेन के लम्बे रास्ते की यात्रा से वह तमाम गन्दा हो गया है, थक गया है और भूख भी जोर से उसे लग आयी है। उसने सबसे पहले यही प्रश्न किया कि खाने को क्या बना है?

"वही मामूली दर्जे का खाना, भइया!" पीट ने जवाब दिया—"आज चावल के साथ गाय का माँस और मटर पके हैं।" जेफ़ ने हँस कर जीप से एक धूल-धूसरित थैला निकाला। "थैंक्स गिविंग" का पूरा भोजन उसमें भरा था—भुनी हुई टर्की (एक प्रकार की मुर्गी), चटनी, आलू, इत्यादि। साथ में थोड़ी-सी शराब भी थी। अस्पताल की अंगीठी पर जितनी देर खाना गर्म हुआ, उतनी देर हमने आनन्द से शराब पी।

ठाठ से भोजन करने के बाद हम बरामदे में बैठ कर सेवंग के बारे में बातें करने लगे। सेवंग उस लड़की का नाम था, जिसे जेफ़ एक बार बान सियेंग से हमारे पास लाया था।

हमें वँाग वियेंग आये कुछ सप्ताह ही हुए थे। जेफ़ पहली बार हमसे मिलने आ रहा था। जंगल के रास्ते में वहाँ के कुछ निवासियों ने उसकी जीप रोक कर मदद माँगी। उन्होंने एक लड़की उसे दिखायी। चटाई पर वह बेहोश-सी पड़ी थी और थोड़ी ही देर की मेहमान दिखायी देती थी। उसकी आयु थी लगभग चौदह वर्ष।

यही सेवंग थी। कब और कहाँ इसका तो किसी को पता न था, लेकिन कभी और कहीं जंगल में, उसकी टाँग में खरौंच आ गयी थी और वह खरौंच पक गयी थी। उसके अज्ञानी और बेबस सम्बंधियों ने उसे झोंपड़ी में लिटाये रखा। धीरे-

धीरे सेवंग की टाँग बुरी तरह सूज गयी और उसका ज़हर पेड़ू तक जा पहुँचा। जेफ़ को वह इसी हालत में मिली थी।

उसने बहुत सम्हाल कर उसे जीप में पिछली तरफ़ लिटाया और जंगल में बड़ी सावधानी से गाड़ी को धीरे-धीरे हाँकता हुआ, वह अंधेरा पड़ने पर वाँग वियेंग पहुँचा था। हमने तुरन्त अस्पताल खोला, लेकिन सेवंग को देखते ही मुझे लगा कि हम उसे बचा नहीं सकेंगे। परन्तु उस लड़की में न जाने क्या बात थी जिसने हमें द्रवीभूत कर दिया। हमें वह लाओस के तमाम पीड़ित और उपेक्षित बालकों का प्रतीक प्रतीत हुई। दक्षिण-पूर्व एशिया सेवंगों से भरा हुआ है। हमने उसे बचाने का संकल्प कर लिया।

इतने समय तक देख-भाल न होने के कारण वह गन्दी बहुत हो गयी थी। इलाज शुरू करने से पहले हमें उसके बेजान-से शरीर को साबुन और ब्रश से खूब रगड़-रगड़ कर साफ़ करना पड़ा। सफ़ाई करने के बाद कम-से-कम मात्रा में दवा देकर हमने उसे बेहोश किया और मैंने टाँग का आपरेशन शुरू किया।

सूजी हुई टाँग को मुझे घुटने से पेड़ू तक चीरना पड़ा। जगह-जगह उसमें हरे-हरे मवाद के कुंड से भरे हुए थे। मवाद निकलना बन्द होने के बाद मुझे उसकी माँसपेशियों में ज़ख़्म ही ज़ख़्म दिखायी दिये। आपरेशन जब ख़त्म हुआ, तो टाँग के नाम पर उसकी हड्डी और थोड़ा-सा माँस ही शेष रहा था।

इतने लम्बे समय तक वह एक ही बगल लेटी रही थी कि बदन के उस हिस्से में बड़े-बड़े फफोले पड़ गये थे जो रिसा करते थे। हमने उन्हें भी साफ़ करके पट्टी बाँधी। फिर उसे हम होश में लाये और उसके शरीर में सेलाइन और ग्लूकोज़ पहुँचाने लगे।

उस रात और अगले दिन भी पीट, डेनी, बेकर और चई ने बारी-बारी से उसके पास बैठ कर उसकी तीमारदारी की। उसका बुख़ार हल्का हुआ और उसकी हालत कुछ सुधरी। फिर वह रोने लगी। यह रोना दर्द का नहीं था, बल्कि इस कारण था कि उसका दर्द मिट गया था। सुबकियों के बीच बार-बार उसके मुँह से यही सुनाई दे रहा था—"धन्यवाद आपको, धन्यवाद आपको, धन्यवाद आपको!"

सप्ताह बीतने के साथ उसके शरीर में शक्ति आती गयी। पहले वह उठ कर बैठने लगी, फिर कुछ क़दम चलने लायक़ हुई। मेरे साथियों ने उसके बालों को कतर कर कुछ ठीक किया। फिर उन्होंने उसे एक टूथ-ब्रश दिया और उसे दाँत साफ़ करना सिखाया। कहीं से ज़नाने कपड़े भी वे उसके लिए ले आये। जेफ़

उसके लिए बालों में डालने के रिबन और कंघे लाया। अब सेवंग सचमुच सुन्दर दीखने लगी थी।

कई महीनों बाद हमने उसे अस्पताल से छुट्टी दी। अब वह स्वस्थ और पुष्ट थी, यद्यपि उसकी खराब टाँग कुछ पतली पड़ गयी थी और लँगड़ाती थी। उसके घरवाले उसे बान सियेंग वापस ले जाने को आ गये।

उसे विदा करने से पहले उसकी एक तस्वीर हमने उतारी। तस्वीर की एक प्रति हमने जेफ़ को भी दी, क्योंकि हम उसे मज़ाक़ में चिढ़ाया करते थे कि सेवंग उसकी "प्रियतमा" है। चित्र की दूसरी प्रति हमने अपने पास रखी। जब भी हमें घर की याद सताती थी, हम हतोत्साह होते, हम सेवंग की तस्वीर देखते। वह हमें याद दिलाती थी कि यदि हम आराम से स्वदेश में ही बैठे रहते, तो यहाँ कुछ लोगों की हालत कुछ और ही होती।

दिसम्बर के शुरू में एक रोज़ शाम को लोग सिनेमा देखने के लिए हमारे घर के सामने जमा हो रहे थे। पीटर और डेनी ने लाकर पर्दा लगाया। बेकर ऐन मौक़े पर दाख़िल हुआ। उसने एक सौ तीस पौंड वज़नी जेनरेटर को उठाया और भीड़ को चीरता हुआ प्रोजेक्टर (फ़िल्में दिखाने की मशीन) के पास पहुँचा। वहाँ उसने जेनरेटर लगा दिया। उसका यह ताक़त का प्रदर्शन फ़िल्मों के हर प्रोग्राम में बड़ा प्रभावशाली रहता था।

जब फ़िल्म चलने लगी, तब मैं हमेशा की तरह पर्दे के पिछवाड़े बराम्दे में ऊँची जगह पर बैठा। वहाँ से मुझे फ़िल्म की रोशनी में बच्चों, बूढ़ों और जवानों के आश्चर्यचकित चेहरे साफ़ दिखायी देते थे। वाल्ट डिस्ने के रंगीन चित्र "फ़ैंटासिया" के जादू ने उन्हें सम्मोहित कर रखा था। मुझे याद आया कि एक बार हमने सोचा था कि इन चित्रों में लाओ भाषा में ध्वनि-आलेखन करें, परन्तु इस पर ख़र्च बहुत बैठता; इसलिए यह विचार त्याग दिया गया था। आज मुझे इस बात पर ख़ुशी हो रही थी कि हमने इस योजना को त्याग कर चित्रों को ज्यों-का-त्यों रहने दिया। वाल्ट डिस्ने के चित्रों की तो अपनी ही एक विश्व-व्यापी भाषा है।

मैं सोचने लगा—मुझसे कितनी बार कहा गया था कि लाओस के लोग सुस्त, आलसी और पिछड़े हुए हैं; अपने सुधार और विकास के प्रति उदासीन हैं! कितनी बार छिद्रान्वेषी पश्चिमवालों ने उपहास के स्वर में हर जगह के उन उपेक्षित लोगों पर, जिन्हें कभी कोई अवसर ही नहीं मिला, यह आक्षेप लगाया है! यहाँ वाँग वियेंग में मुझे इस आक्षेप की असत्यता का जीता-जागता प्रमाण मिला।

मैंने कहीं भी लोगों को प्रोत्साहन पाकर इतने मन से प्रयास करते या इतनी थोड़ी-सी सहायता से इतना अधिक लाभ उठाते नहीं देखा है।

साफ़-सफ़ाई, आरोग्य-शास्त्र, भोजन और पौष्टिक तत्त्व, तथा बालकों और शिशुओं की देख-भाल की तालीम खूब चल रही थी और उसके बड़े अच्छे परिणाम हो रहे थे। हमने कई लड़कियों को दाई का काम सिखा दिया था। उन्होंने अपने काम से अपने प्रति सम्मान की ऐसी भावना पैदा की कि दाईगीरी गौरव की चीज़ बन गयी। इससे और भी लड़कियाँ इस पेशे के प्रति आकर्षित हुईं। लाओ नर्सों की संख्या और कुशलता भी बढ़ रही थी। हर पखवाड़े जब मेरे साथी डाक और सामान के लिए वियंतियेन जाते थे, तो लाईसेइ के एक ऊँचे दर्जे के छात्र को एक सप्ताह के लिए अपने साथ ले आते थे। हम इन नवयुवकों में डाक्टरी पढ़ने की प्रेरणा जगाना चाहते थे। हम दर्जन-भर लड़कों को तालीम देकर कार्य-कुशल परिचारक बना चुके थे। वाँग वियेंग में इतनों की जरूरत भी न थी।

मैं जानता था कि अब वाँग वियेंग से प्रस्थान की तैयारी करने का समय निकट आने लगा था। मेरा उद्देश्य यहाँ स्थायी अमरीकी चौकी क़ायम करने का नहीं था; मैं तो कुछ ऐसी चीज़ क़ायम करना चाहता था, जिसे लाओ लोग खुद चला सकें। यह सही है कि वह पश्चिमी मापदंड से बिलकुल प्राथमिक ढंग की होती; परन्तु लोगों को अब तक जो कुछ उपलब्ध था उससे तो श्रेष्ठ ही होती।

मेरी मान्यता है कि हममें जो लोग विदेशियों की कुछ सहायता करने वहाँ जाते हैं, उन्हें छोटी-मोटी सफलताओं से ही संतोष करना चाहिए। राजधानी में रहनेवाले अमरीकी कहते थे कि मैं उन्नीसवीं सदी की डाक्टरी करता था। उनका कहना सही था; मैं उन्नीसवीं सदी की डाक्टरी करता था, परन्तु वही बहुत बढ़िया थी। मेरे चले जाने के बाद मेरे दल के स्थानीय व्यक्ति अट्ठारहवीं सदी की डाक्टरी ही करनेवाले थे। फिर भी यह बहुत अच्छी बात थी; यही प्रगति है; क्योंकि अधिकांश ग्रामीण तो अभी पन्द्रहवीं सदी में ही रह रहे थे।

इस प्रकार अपनी योजना के इस पहलू के बारे में मैंने फ़ैसला कर रखा था। मैं नर्स-दल का प्रमुख काम लाक को बनाना था। काम लाक बहुत बुद्धिमान, ईमानदार और आत्मनिष्ठ युवक था। छोटे-मोटे आपरेशन भी वह कर सकता था। उसकी पत्नी, काम बा शायद हमारी सर्वश्रेष्ठ दाई थी। वह उसकी सहायक का काम सम्हाल सकती थी। हमने शल्यक्रिया के कुछ उपकरण और लगभग दस

हज़ार डालर की औषधियाँ उन्हें दीं। मंत्रालय ने उन्हें आगे के वास्ते जरूरी चीजें देने का वचन दिया।

मेरे साथी अगले महीने या उसके आस-पास ही स्वदेश लौटनेवाले थे। बेकर अपनी पत्नी और बच्चे के पास जा पहुँचने को उत्सुक था। डेनी शेपर्ड भी अपनी पत्नी को छोड़ कर आया था। उसे अपने विश्वविद्यालय जाना था और पीट केसी को भी। मैंने उनकी जगह दो व्यक्तियों की व्यवस्था कर ली थी; मुझे साउथ बेंड, इंडियाना से एक और पत्र का इंतजार था। उसी से सब बात पक्की होनेवाली थी। फिर ......

फ़िल्म खत्म हो गयी और भीड़ छँटने लगी। मेरी साथियों ने पर्दा उतारा और सामान ठिकाने से रखने के बाद, सोने से पहले दीवानखाने में आ बैठे।

मैंने उनसे कहा—"सज्जनो, मुझे आप लोगों को एक समाचार देना है।" बेकर ने एक आह-सी भरी और जाकर खाट पर लेट गया। (उसका कहना था कि जब भी मैं इस तरीक़े से बात शुरू करता था, तो उसका अर्थ होता था कि कोई और मुसीबत का काम सामने था।) "आप लोगों ने जो बढ़िया काम किया है, उसके बदले आप लोगों को छुट्टी मिलेगी। मेरे ख़याल से २२ दिसम्बर से। २ जनवरी, १९५२ को आपको वापस वियंतियेन पहुँचना होगा। छुट्टी मनाने के लिए उचित ख़र्चा मेरी तरफ़ से मिलेगा। मेरी सलाह है कि ये छुट्टी आप हाँगकाँग में मनायें।"

इससे उन्हें ख़ुशी तो होनी ही थी। परन्तु मैं अनुभव कर रहा था कि जितना-कुछ उन्होंने किया था, उसके लिए यह पुरस्कार तुच्छ था। मेरे साथ काम करने में उन्हें न शनिवार की छुट्टी मिलती थी, न रविवार की। डेनी ने पूछा कि उन दिनों मैं कहाँ जाऊँगा?

मैंने बताया—"मैं मनीला जा रहा हूँ। परन्तु नव वर्ष के अगले दिन वियंतियेन पहुँच जाऊँगा। अब मुझे अधिकारियों से मिलना ही होगा और यह पता लगाना होगा कि स्थिति कैसी है।"

मैंने छुट्टियाँ मनीला में बितायीं और कुछ लेक्चर भी वहाँ दिये। २ जनवरी को मैं वियंतियेन आया और सीधा डा. औदोम से मिलने स्वास्थ्य-मंत्रालय में पहुँचा। उन्होंने बड़ी उमंग से मेरा स्वागत किया और कहा कि प्रधान मंत्री मुझसे मिलना चाहते हैं। इसकी मुझे कल्पना भी नहीं थी, परन्तु डा. औदोम मुस्करा भर दिये; कुछ भी बताने से उन्होंने इन्कार कर दिया। हम प्रधान मंत्री के दफ़्तर जा पहुँचे और कुछ ही देर के बाद उन्होंने हमें अन्दर बुलवा लिया।

राजकुमार सूवान्नाफूमा ने वाँग विर्येंग के मेरे काम की बड़ी तारीफ़ की। मुझे इस पर बड़ा आश्चर्य हुआ कि हमारे कार्य के हर पहलू से, नर्सों और दाइयों की तालीम के कार्यक्रम, आरोग्यशास्त्र और साफ़-सफ़ाई की तालीम, जीप के द्वारा गाँव-गाँव जाकर रोगियों को देखने की व्यवस्था, आदि से वे पूर्णतया परिचित थे। उन्होंने मुझसे पूछा कि आगे के लिए मैंने क्या योजना बनायी है।

जब मैंने उन्हें बताया कि मेरे पूँजी ख़त्म हो रही है और मैं अब लगभग चार महीने ही लाओस में ठहर सकता हूँ, तो उन्हें आश्चर्य हुआ। स्पष्टतया उन्होंने इस तथ्य को अच्छी तरह नहीं समझा था कि यह सारा ख़र्च धन-कुबेर 'अंकल सैम' (अमरीका) नहीं, डूली खुद उठा रहा था!

तब उन्होंने एक अत्यन्त उदारतापूर्ण प्रस्ताव मेरी सामने रखा। उन्होंने कहा कि इसी समय से शाही लाओ सरकार हमें सब सुविधाएँ देगी। सामान और यातायात की व्यवस्था सेना करेगी। तालीम-कार्यक्रमों के बारे में मेरी आवश्यकताओं की पूर्ति शिक्षा-मंत्रालय करेगा। मैं उपचार का सरकारी सामान भी प्राप्त कर सकूँगा। मेरे लाओ कर्मचारियों का वेतन भी सरकार देगी।

इतनी सुविधाएँ! एकाएक विश्वास करना कठिन था। मैंने फ़ैसला किया कि लगे हाथों तारे तोड़ लाने का भी प्रयास कर देखूँ।

मैंने कहा—"महामहिम, इस बारे में आपका क्या खयाल है कि अगर आप मुझे किसी उत्तरी प्रान्त में भेज दें, तो मेरा डाक्टरी दल शाही सरकार की अधिक सेवा कर सकेगा?"

"बेशक, मेरा यही ख़याल है!" उन्होंने ज़ोर देकर कहा। मैंने डा. औदोम की तरफ़ देखा; उनके मुख पर मुस्कान खेल रही थी।

प्रधान मंत्री ने दो सम्भाव्य क्षेत्रों के नाम लिये। एक था बर्मा सीमा के निकट का क़स्बा मुओंग सिंग और दूसरा—'नाम था'! उन्होंने बताया कि दोनों जगहों पर हवाई जहाज़ों के उतरने की व्यवस्था है। उन्होंने बताया कि एक विमान वे मेरे जिम्मे कर देंगे और सामान पहुँचाने की व्यवस्था करवा देंगे। उन्होंने यह भी कहा कि उत्तर में कुछ ख़तरे तो अब भी मौजूद हैं, परन्तु वहाँ पर पुलिस और सैनिकों की टुकड़ियाँ नियुक्त हैं। उनमें से कुछ मेरे लिए अंगरक्षक के रूप में तैनात कर दिये जायेंगे।

मैंने उन्हें हार्दिक धन्यवाद दिया। इस शुभ समाचार से खुश होता हुआ मैं अमरीकी दूतावास गया और राजदूत पार्सन्स से मुलाक़ात माँगी। यहाँ भी मुझे अचानक प्रसन्नता प्राप्त हुई। इस बार राजदूत ने उमंग से मेरा स्वागत किया और

वँाग विर्येग में हम जो कुछ कर रहे थे उसके लिए मुबारकबाद दिये। जब मैंने उन्हें प्रधान मंत्री से अपनी बातचीत का ब्योरा सुनाया, तब वे और भी खुश हुए।

उन्होंने कहा—" हाँ, डा. डूली, मैं भी वास्तव में यही समझता हूँ कि अब आपका उत्तर में जाना बहुत उत्तम रहेगा।"

राजदूत पार्सन्स ने बताया कि लाओस में अब परिस्थिति अधिक सुदृढ़ थी। सीमा पर दुर्घटनाओं की आशंका घट गयी थी। 'नाम-था' में विमानों के उतरने की व्यवस्था हो जाने से अब कम समय में और ज्यादा निकट का सम्पर्क स्थापित करना सम्भव हो गया था। उन्होंने कहा कि इसके अतिरिक्त वँाग विर्येग के हमारे काम ने लाओ सरकार के मन में हमारे प्रति विश्वास पैदा कर दिया था। अब हमें जासूस या असंतोष फैलानेवाले तत्त्व समझने की सम्भावना कम थी।

अब वँाग विर्येग से अपना काम बढ़ाने का कठिन कार्य मेरे सामने था। सौभाग्य से मेरे तीनों पुराने साथी, बेकर, पीट और डेनी मेरी सहायता करने को मौजूद थे। मैं उनसे सम्बौम होटल में मिला। मेरा शुभ समाचार सुन कर उन्हें प्रसन्नता भी हुई और दुःख भी।

बेकर ने मध्य-जनवरी में प्रस्थान करने के लिए हवाई टिकट ले लिया था। डेनी शेपर्ड ने काम जम जाने तक कुछ सप्ताह के लिए मेरे साथ 'नाम-था' जाने का फ़ैसला किया। तीनों में पीट केसी ही अकेला अविवाहित था। वह सिर खुजलाने लगा। उसे औषधि-शास्त्र के अध्ययन के लिए बसंत तक आस्टिन पहुँचना था। उसने कहा—" छोड़ो भी; स्कूल तो मेरे बिना चल ही सकता है, डाक्टर। मेरा ख़याल है कि और कुछ महीने आपके ही साथ लगा रहूँ।"

हमने अपना सामान जीप में डाला और 'एग्नेस' अन्तिम बार जंगल के उस ऊबड़-खाबड़ रास्ते से वँाग विर्येग को रवाना हुई। बेचारी एग्नेस! उत्तर में उसे हमारे साथ नहीं जाना था। प्रधान मंत्री और डा. औदोम ने पहले ही हमें बता दिया था कि 'नाम-था' में सड़कें नहीं हैं।

वँाग विर्येग में हमने चई और सी को बताया कि हम जल्द ही उत्तर में जाने वाले हैं और हमारी इच्छा है कि वे हमारे साथ चलें। उनके मुँह से एक हल्की कराह-सी निकल कर रह गयी। परन्तु जब हमने उनसे कहा कि यदि उत्तर का उन्हें कुछ भय हो तो न चलें, तब उन्हें लगा जैसे उनका अपमान किया जा रहा है। उन्होंने कहा—" आप जहाँ भी जायेंगे, हम हमेशा साथ चलेंगे।"

ओजिसान से हमारी अच्छी दोस्ती हो गयी थी। उसे हमारे जाने की बात से बड़ा दुःख हुआ। हमने उसे विश्वास दिलाया कि वॅांग वियेंग को हम कभी भूल नहीं सकते और वहाँ के लोगों ने हमें कई बातें सिखायी हैं। अपने पड़ोसियों की देख-भाल करना और उनके प्रति अपने उत्तरदायित्व का पालन करना, उन्हीं बातों में से एक थी। जीप से हम आस-पास के गाँवों के जो दौरे किया करते थे, उनकी महत्ता स्वयं ओजिसान ने कई बार हमें बतायी थी। अब भी हम यही काम करनेवाले थे; अन्तर इतना ही था कि इस बार हमें बहुत दूर जाना था। हमने उससे यह भी कहा कि हमें आशा है कि 'यूनाइटेड स्टेट्स आपरेशंस मिशन' शिक्षा के या शायद डाक्टरी इलाज के या कृषि के कुछ कार्यक्रम लेकर वॅांग वियेंग पहुँचेगा। ओजिसान भी यह कामना करता था। बाद में मिशन वहाँ पहुँचा भी।

स्थानीय स्कूल में हमने अन्तिम बार क्लास ली। बच्चों से हमने कहा कि हमारी सिखायी हुई बातें वे हमेशा याद रखें। उन्होंने उत्तर दिया कि वे अपने अमरीकी शुभचिन्तकों को कभी नहीं भूलेंगे। दाइगीरी की कुछ और छात्राओं को हमने स्नातिका बनाया और उन्हें थैले दिये। इसके बाद जनवरी के दिनों की योजना बनाने लगे।

हमने अपने प्रस्थान की तैयारियों को कुछ लम्बा करने का फ़ैसला किया। हम नहीं चाहते थे कि हम एकाएक ऐसे चल दें कि गाँववालों को बुरा लगे। इसलिए हमने योजना बनायी कि चार-पाँच सप्ताह हमेशा की तरह अपना काम करते रहें और रोज़ मरीज़ों को देखते समय उन्हें बताते रहें कि हम अब जल्द ही वहाँ से जानेवाले हैं और हमारे बाद लाओ नर्सें व दाइयाँ हमारा काम जारी रखेंगी। हमने गाँव के लोगों से कहा कि ये सब लोग भी अपने काम में कुशल हैं और गौरांगों की अद्भुत औषधियाँ हम गाँववालों के लिए इन्हें दे जायेंगे। हमारे जाने का उन्हें दुख था, परन्तु इस बात की खुशी थी कि औषधियाँ, आदि हम छोड़े जा रहे थे।

वॅांग वियेंग ने हमारे सम्मान में "बाची" अनुष्ठान किया, जिसके अन्त में ठाठदार दावत हुई। लाओ लोग यह अनुष्ठान बच्चे के जन्म, विवाह, युद्ध से सैनिकों की वापसी और घनिष्ट मित्रों की विदाई के अवसर पर ही किया करते हैं। गाँव की औरतों ने ताड़ के पत्तों से एक छोटा-सा 'पिरामिड' (सूच्याकार स्तम्भ) बनाया और फूलों, मोमबत्तियों, चूड़ियों तथा खिलौनों, आदि छोटी-मोटी चीज़ों से उसे सजाया। कुल कोई दो फ़ीट ऊँचा था यह। इसे हाथ के बने हुए चाँदी के बर्तन में रखा गया। 'पिरामिड' के शिखर से बर्तन के तल तक

सफ़ेद रूई की धज्जियाँ लटकायी गयीं। बर्तन के आधार के चारों ओर औरतों ने बड़ी सावधानी से सूअर के माँस की रसदार बोटियाँ, चावल, मिठाइयाँ व दूसरे व्यंजन रखे।

इसके बाद "बाची" में भाग लेनेवाले सब व्यक्ति चटाइयों और कम्बलों पर फूलों के पिरामिड के चारों ओर बड़ा-सा घेरा बना कर इतनी दूरी पर बैठ गये कि झुक कर हाथ बढ़ाने से उस बर्तन को छुआ जा सके।

फिर एक बूढ़ा प्रेत-साधक आत्माओं के आह्वान के मंत्र पढ़ने लगा। हम फ़र्श पर घुटने मोड़ कर बैठे थे; बायाँ हाथ प्रार्थना की मुद्रा में ऊपर उठा हुआ था और दायाँ हाथ हथेली को ऊपर की ओर करके बर्तन का स्पर्श कर रहा था। मंत्रों के द्वारा साधक ने 'सक्के' से जिसका निवास सोलह मंज़िलों के स्वर्ग में है, हमारे साथ अनुष्ठान में सम्मिलित होने की प्रार्थना की। उसने 'कमाफोब' के निवासी 'कामे' और 'दैवी आकाशों' के निवासी 'चरौप' का आह्वान किया। उसने पर्वतों और नदियों के वासी 'खिरिसि' से 'मधुर वायु' में व्याप्त 'अत्तारिखे' के साथ पधारने की विनती की। प्रभात और संध्या की सब दैवी आत्माओं से, रात्रि और दिवस की सब आत्माओं से, पर्वतों और पुष्पों की सब परियों से 'बाची' में उपस्थित होने और प्रस्तुत भोजन ग्रहण करने का अनुरोध किया।

साधक को जब यह विश्वास हो गया कि सब देवात्माएँ आ गयी हैं, तब उसने उनकी आत्माओं का आह्वान किया, जिनके लिए अनुष्ठान किया गया था। लाओ के लोगों का विश्वास है कि आत्मा घुमक्कड़ होती है और समय-समय पर उसे शरीर में बुलाना पड़ता है। गाने के-से स्वर में वह कुछ मंत्र पढ़ने लगा जिनका अर्थ था—"आओ, हमारा साथ करो, आत्माओ! अपने हाड़-माँस के घर में लौट आओ, चीते और प्रेतात्माओं से मत डरो, हमारे पास यहाँ आओ जहाँ देवात्माएँ और मानव-आत्माएँ आ गयी हैं; डरो मत, अपने शरीरों में लौट आओ...।" लाओ लोगों की मान्यता है कि मनुष्य के शरीर के बत्तीस अंग हैं और हर अंग की एक आत्मा होती है। अतः साधक को बत्तीसों अंगों से अनुरोध करना पड़ता था। इसमें कुछ समय लगा। आखिर जब देवात्माएँ और आत्माएँ सब आ चुकीं, तब हम लोगों ने क्षण भर विश्राम किया। फिर 'बाची' का दूसरा भाग आरम्भ हुआ।

साधक ने पहले बीच के फूलों के 'पिरामिड' से एक सूती डोरी उठायी और उन लोगों के सामने घुटनों के बल बैठ गया जिनके लिए अनुष्ठान किया जा रहा था। उसने मेरे लिए एक कामना की और इस कामना का उच्चारण करते हुए एक

डोरी मेरी कलाई पर बाँधी। बड़ी सावधानी से डोरी के दोनों छोरों को उसने आपस में गूँथ दिया ताकि कामना डोरी के बाहर न गिरने पाये। जब उसने यह क्रिया पूरी कर ली, तब दूसरे व्यक्ति ने मेरी कलाई पर डोरी बाँधी; फिर तीसरे ने। इसी तरह यह क्रम चलता रहा। हममें से प्रत्येक व्यक्ति के साथ यह क्रिया की गयी। एक-एक की कलाई में दर्जन-भर से ज्यादा डोरियाँ बँधने के बाद यह संस्कार पूरा हुआ। हर डोरी में एक कामना छिपी थी और हर कामना दूसरी से कुछ ज्यादा अजीब थी।

" तुममें हमेशा हाथी के दाँतों का मुक़ाबला करने की शक्ति रहे। "

" तुम जंगली सूअर के जबड़ों से सुरक्षित रहो। "

" तुम धनवान बनो। "

" तुम्हारे बहुत-सी पत्नियाँ हों। "

" समस्त बुद्धि और स्वास्थ्य तुम्हें प्राप्त हों। "

" समृद्धि और शक्ति तुम्हें प्राप्त हों। "

" तुम्हारी जीप सड़क से न गिरे और न हवाई जहाज़ आसमान से। "

" हमारा प्रेम हमेशा तुम्हारे साथ रहे। "

" तुम हमारे अर्थात् अपने मित्रों के पास लौट कर आओ। "

पान चबानेवाली बुढ़ियों, गाँव के बुजुर्गों, हँसती हुई लड़कियों और 'मेयर' सबने दोस्ती की डोरियाँ बाँधीं और उपस्थित आत्माओं से कहा कि वे उनकी कामनाओं की निष्कपटता की साक्षी हैं।

चई ने हमें बता दिया था कि 'बाची' प्राप्त करनेवाले व्यक्ति को आभार प्रकट करने तथा यह बताने के लिए कि वह कामना करनेवाले की भावना को समझता है, क्या करना चाहिए। इसलिए हर डोरी के बँध जाने के बाद, हम प्रार्थना करने की मुद्रा में अपने दोनों हाथ मिला कर कहते थे – 'धन्यवाद!'

'बाची' की समाप्ति के बाद साधक ने देवात्माओं और आत्माओं को धन्यवाद दिया और देवात्माओं से कहा कि वे अब चली जायें और आत्माओं से कहा कि फिर अपना घुमक्कड़ों का जीवन बितायें। इसके बाद सब लोग चावल के गोले, मिठाइयाँ और वह सब व्यंजन खाने बैठे, जो आत्माओं ने नहीं खाये थे। चावल की देशी शराब 'चौम' भी हमने पी।

आखिर विदाई का दिन आ पहुँचा। हमने अपना सामान लकड़ी के बक्सों में 'पैक' कर दिया था। अपने खाली मकान के बरामदे में बैठ कर हम सेना की

लारियों का इंतजार करने लगे। मंत्री महोदय लारियाँ भेजनेवाले थे और उनके आने में लगभग एक घंटा बाकी था।

चौक मे सैकड़ों आदमी हमे विदा देने को जमा हुए। हमारी कलाइयों में लगभग कोहनियों तक 'बाची' की डोरियाँ बँधी हुई थीं। गाँववाले विदाई की कई भेंटे लाये—फूल, मक्का, मुर्गियाँ, देशी शराब। सद्भावना के उपहार थे ये। ओजिसान, नर्स, मेयर और बच्चों से हमने बार-बार विदा ली। हम सब वहीं बैठे थे और बड़ी उदासी हम पर छायी हुई थी। परन्तु लारियाँ जल्द ही आनेवाली थीं और हमें आशा थी कि सामान चढ़ाने की धुन मे हम सारी उदासी भूल जायेंगे।

सारी सुबह हमने इंतजार किया, सारी दोपहर और संध्या तक इंतजार किया, लेकिन लारियाँ नहीं आयीं। फिर बिस्तर बिछा कर हम सो गये। लारियाँ अगले दिन आयीं। सेना के ड्राइवरों ने कोई कैफ़ियत नहीं दी और न हमने माँगी। इस तरह की चीजों के हम अभ्यस्त थे और इसको हमने अपने लिए परेशानी का कारण नहीं बनने दिया। फिर से हमने सब लोगों से विदा ली; फिर से फूल, मक्का और उपहार मिले। पान चबानेवाले बड़े-बूढ़ों से विदा लेने में हमें बड़ी आकुलता हो रही थी। वे हमारे मित्र बन चुके थे।

सेना की लारी झटके खाती हुई जंगल के मार्ग की ओर रवाना हुई और उसके पिछले हिस्से से हमने अन्तिम बार वांग वियेंग के निवासियों पर दृष्टि डाली। वे ऐसे दीख रहे थे मानो अनेक छोटे-छोटे भालू हाथ हिला-हिला कर हवा को अपनी ओर खींच रहे हों। हाथों को हिला-हिला कर अपनी ओर लाना उन लोगों में विदाई का प्रतीक है, जिसका अर्थ होता है—'जल्दी लौटना।'

अध्याय ५

आखिर 'नाम-था' में

हम वियंतियेन पहुँचे। वहाँ किसी-न-किसी गड़बड़ का सामना होना तो अवश्यम्भावी था। बेकर जिस हवाई जहाज से जानेवाला था उसके प्रस्थान का समय कम्पनी ने एक घंटा आगे कर दिया था; परन्तु हमें इसकी सूचना केवल पन्द्रह मिनट पहले दी। अन्तिम क्षण हम हवाई जहाज पर पहुँच पाये। सच्चे नाविक की तरह हवाई यात्रा को बुरा-भला कहते हुए बेकर किसी तरह शीघ्रता

से कस्टमवालों से निपटा और हवाई जहाज़ का दरवाज़ा बन्द होते-होते सामान सहित ऊपर चढ़ गया। विमान रवाना हुआ और तब एकाएक मुझे ख़याल आया कि नोर्मन बेकर को मैं उसके काम, उसकी उदारता और सहयोग के लिए समुचित धन्यवाद भी न दे पाया।

'नाम-था' जाने की तैयारियों का भार डेनी ने सम्हाला। मैं और पीट केसी अपने दो नये साथियों को लेने बैंकाक की दो घंटे की हवाई यात्रा पर रवाना हुए। उन दोनों के बारे में मुझे जो कुछ मालूम था, वह मैंने रास्ते में पीट को बताया।

जिन बीसियों आदमियों ने अपनी सेवाएँ प्रस्तुत की थीं उनमें एक था जान डिविट्री। वह नाटरडेम विश्वविद्यालय का, जहाँ मैंने भी शिक्षा पायी थी, पूर्व-स्नातक छात्र था। उसके माता-पिता फ्रांसीसी थे, लेकिन उन्होंने अमरीकी नागरिकता ग्रहण कर ली थी। हमारे साथ लाओस में सेवा करने की अपनी इच्छा के जो कारण उसने प्रस्तुत किये थे उनसे मैं बहुत प्रभावित हुआ था। मैंने अपनी पुरानी मित्र कुमारी एर्मा कोन्या को चिट्ठी लिख कर उसके बारे में पूरी जानकारी प्राप्त करना उचित समझा। कुमारी एर्मा कोन्या विश्वविद्यालय के प्रशासन विभाग में थीं। जान डिविट्री के बारे में उनकी रिपोर्ट बहुत ही अनुकूल आयी। उन्होंने एक और युवक, राबर्ट ई. वाटर्स की भी सिफ़ारिश की। हमने पत्र लिख कर बात पक्की कर ली।

बैंकाक के हवाई अड्डे पर हमारे सामने ही वे हवाई जहाज़ से उतरे। देखने से ही ठेठ कालेज के लड़के लगते थे वे; पैंतालीस घंटों की हवाई यात्रा से कुछ ढीले-से ज़रूर हो रहे थे। पीट केसी कुछ निराश स्वर में बोला – " हे भगवान, ये तो कालेज के नमूने हैं। शर्त बद लो, अपने रेकार्डों का 'अलबम' और 'ही-फ़ी' यंत्र आदि सब साथ लाये होंगे!"

जान डिविट्री २१ साल का, लम्बा, छरहरा, संवेदनशील और गम्भीर स्वभाव का युवक था। बाब वाटर्स की उम्र २० ही वर्ष की थी। उसका शरीर लम्बा और गठा हुआ था। प्रत्यक्षतया वह चिन्तनशील नहीं था। दुनिया के जिस कोने में हम जानेवाले थे उसके लिए दोनों अनुभव-हीन और नाज़ुक-मिज़ाज दीखते थे।

उस समय पीट की ही तरह मुझे भी शंका हुई थी; परन्तु मुझे यह बताते हुए बहुत हर्ष होता है कि हम दोनों के विचार पूर्णतया भ्रमपूर्ण निकले। कालेज का नमूना होना तो एक प्रकार का प्रचलित छद्मवेश है: उन शानदार कपड़ों के अन्दर हमारे राष्ट्र का हृदय और बल छिपा रहता है। दोनों ही युवक जबर्दस्त

काम करनेवाले सिद्ध हुए। जान पैदायशी कूटनीतिज्ञ था। डूली मिशन को ऐसे व्यक्ति की बेहद जरूरत थी। तीस दिनों के भीतर ही दोनों घिस–मँज गये; शिकवे–शिकायत की तो बात ही क्या, चीन के सीमावर्ती प्रदेश के जीवन को उन्होंने ऐसे अपना लिया जैसे पुराने घाघ हों। मेरा ख़याल है कि हर एक व्यक्ति को जीवन में कहीं-न-कहीं तो शुरूआत करनी ही पड़ती है।

बरसात का मौसम ख़त्म हो चुका था और 'नाम-था' में हवाई जहाज़ के उतरने की उड़न-पट्टी तैयार थी। हमने उत्तर जाने की तैयारी कर ली। सूची के अनुसार सब सामान डेनी ने ख़रीद लिया था। बहुत-सी नयी चीजें हम बैंकाक से ले गये; साथ ही दो नये आदमी भी। दो हवाई जहाज़ों में हमें जाना था। एक 'ब्रिस्टल' विमान था और दूसरा 'डी सी. ३।' हमने अपने सामान के वज़न का हिसाब कागज़ पर पहले ही लगा लिया और उसको दो भागों में बाँट लिया। लारियाँ जब हवाई अड्डे पर पहुँची, तब हर अदद का सही वज़न कराया। पीटर यह देख कर बहुत घबराया कि सारा सामान ले जाना असम्भव था। वह वाँग वियेंग से अपने फ़व्वारे को बड़ी सावधानी के साथ इस आशा से उतार लाया था कि उसे 'नाम-था' में फिर से लगाया जा सकेगा। हमने हवाई जहाज़ पर सामान चढ़ाया। दिल में कसक तो जरूर हुई, लेकिन पीट का फ़व्वारा हमें छोड़ना पड़ा।

पुराने ढंग के माल ढोनेवाले विशालकाय ब्रिस्टल विमान से हम वियंतियेन से रवाना हुए। उसके पंख तो बहुत बड़े थे, लेकिन दोनों पंखे अपेक्षाकृत बहुत छोटे थे। तीन घंटों तक हम बादलों के ऊपर उत्तर की ओर उड़ते रहे। कहीं-कहीं पर्वतों के टेढ़े-मेढ़े शिखर बादलों को चीर कर ऊपर निकल आये थे। हमारा जहाज़ धरती की ओर उतरने लगा। 'नाम-था' घाटी का विशाल जंगल दिखायी देने लगा। वह मोटे हरे क़ालीन जैसा लगता था, जिस पर मानो लाल रंग के वृक्षों और रंग-बिरंगे फूलों, आदि से बेल-बूटे बनाये गये हों।

ऐसे जंगल के वृक्षों पर लताएँ-बेलें जोंक की तरह चिपट जाती हैं और उनके अन्तस तक को चूस लेने का प्रयत्न करती हैं। एशिया में साम्यवाद की स्थापना करने के तौर-तरीक़ों की इससे तुलना की जा सकती है।

विमान के फ्रांसीसी चालक ने उतरने के कई प्रयत्न किये और अन्त में हवाई जहाज़ वापस ऊपर की ओर उड़ने लगा। सह-चालक ने आकर बताया कि विशालकाय और भारी-भरकम ब्रिस्टल विमान के उतरने के लिए वह कीचड़भरी उड़न-पट्टी बहुत छोटी पड़ती थी। मैंने जाकर चालक को एक बार फिर उतरने का प्रयत्न करने के लिए राज़ी किया। उसने मुझे ऐसे देखा मानो मुझ पर उसे तरस आ रहा

हो और कंधे मटका कर उपेक्षा प्रकट की। हवाई जहाज़ फिर नीचे उतरा और किसी तरह उड़न-पट्टी पर कुछ जगह रहते-रहते ठहर गया।

हमने विमान के दरवाज़े खोले। गाँववालों की एक भीड़ जमा थी। हम जहाज़ से कूद पड़े। हमें सन्तोष था कि आख़िर हम उत्तर की भूमि पर पहुँच गये। दो साल पहले हमने यहाँ से ठीक पूर्व उत्तरी वियतनाम में काम किया था। यहाँ काम करने के सपने मैं वर्षों से देख रहा था। एक साल मैंने इसकी योजना बनाने में लगाया था और पिछले पाँच महीने हमने अपने-आपको और अपने मिशन को प्रमाणित करने में लगाये थे। अब जाकर हम यहाँ पहुँचे। हम उस स्वतंत्र 'उँगली' के ठेठ उत्तरी भाग में पहुँच गये थे, जो साम्यवादी चीन के पेट के नीचे तक घुसी हुई थी। यह क्षण हम सबके लिए बड़ा रोमांचकारी था। हममें से किसी ने ज्यादा बात नहीं की। हम जानते थे कि उत्तर की उन पहाड़ियों की पहली शृंखला की चढ़ाई से ही नर्क की सीमा शुरू होती थी।

अन्य स्थानों से अलग बसा होने पर भी 'नाम-था' वाँग वियेंग से बड़ा और ज्यादा प्रगतिशील निकला। उड़न-पट्टी से क़स्बे तक हम पैदल आये। अपने टनों सामान और उपकरणों को लाने का एक ही साधन था—मजदूर। पगडंडी सीधी 'नाम-था' के तिकोने चौक में पहुँचती थी। चौक के किनारों पर कई मकान और दुकानें थीं, एक बौद्ध मन्दिर था, पुलिस-थाना और जेल थी, और 'चाओ खुओंग' यानी प्रान्त के गवर्नर का 'महल' भी वहीं था।

एक किनारे के लगभग बीचो-बीच वह मकान था जिसमें हमें डेरा डालना था। पक्का और मजबूत मकान था वह। पहले गवर्नर ख़ुद उसमें रहता था। उसके एक हिस्से में तारघर था और वहीं तारबाबू पावी अपने बड़े-से परिवार के साथ रहता था। एक कमरे में दो युवक अध्यापक रहते थे। हमने सबसे वहीं बने रहने को कहा। अध्यापकों के कमरे के पासवाला कमरा चई, सी और किउ ने लिया। किउ हमारा नया दुभाषिया था और अंग्रेज़ी बोलता था। कभी वह अमरीकी दूतावास में काम कर चुका था। दो बड़े कमरे बाब, जान, डेनी और मैंने लिये। पीट केसी को एकान्त चाहिए था, सो उसने एक छोटी-सी अंधेरी कोठरी खोज निकाली। उसका नाम उसने रखा काल-कोठरी और उसे सोने का कमरा बना डाला। हमने मकान का कोई हिस्सा बन्द नहीं किया। दरवाज़े हमेशा खुले रहते थे। पावी, अध्यापक या और जो चाहे, सभी जब और जैसे चाहें, हमारे दीवानख़ाने में चक्कर लगा जाते थे। उनके नंग-धड़ंग बच्चों के लिए भी

घर का हमारा हिस्सा पराया न था। जैसे घर के दूसरे हिस्सों में वे घूमते–फिरते थे, वैसे ही इसमें भी।

थोड़ी-सी दूरी पर ही थी अस्पताल की नयी इमारत, जो प्रधान मंत्री की आज्ञा से हाल में ही बन कर तैयार हुई थी। हमने यथासम्भव शीघ्र ही उसे जमाना शुरू किया। इमारत के मुख्य भाग को मुख्य अस्पताल बनाया गया। इसमें बहुत मेहनत नहीं करनी पड़ी। इमारत कोई पैंतीस फ़ीट लम्बी थी। उसमें तीन कमरे थे। एक कमरा तो हमने पूरी तरह लाओ औषधालय की नर्सों को सौंप दिया। दूसरे में अपना दफ़्तर बनाया और तीसरे में रोगियों को देखने की व्यवस्था की।

एक बड़ी-सी मेज़ हमने बनायी और उस पर 'लाइनोलियम' बिछा कर उसे मरीज़ों को देखने के कमरे में लगा दिया। घर में हमारे पास एक छोटा-सा जेनरेटर था, जिसे हम सिनेमा की मशीन चलाने के काम में लेते थे। वियंतियेन में हमने तेज़ रोशनी की एक बत्ती खरीदी थी। उसे हमने 'जेनरेटर' से जोड़ कर आपरेशन के कमरे की मेज़ पर लगा दिया। यों आपरेशन के लिए भी कमरा तैयार हो गया।

अपना छोटा-सा कृमि-नाशक यंत्र हमने घर पर ही रखा। स्वच्छ करने के लिए या स्वच्छ किया हुआ सामान हम अपनी साइकिलों पर लाते-ले जाते थे। साइकिल पर घर से अस्पताल पहुँचने में लगभग पाँच मिनट लगते थे। जब आवश्यकता होती थी, तब 'जेनरेटर' को एक बल्ली से लटका कर लाते और ले जाते थे या कभी-कभी गवर्नर की जीप का उपयोग कर लेते थे।

अस्पताल के पास एक बाँस का घर खाली पड़ा था। उसे हमने साफ़ करके पुतवा दिया। पहाड़ियों से चूना लाने में ज़रूर कई सप्ताह लग गये। उसे पानी में मिलाने से ही सफ़ेदी के लिए काफ़ी अच्छा घोल बन जाता था। जान, बाब और कुलियों ने सागवान की लकड़ी और सेना की पुरानी लोहे की खाटों से पन्द्रह चारपाइयाँ बनायीं। हमारे पास जो पुरानी पत्रिकाएँ थी, उनमें से कई दिन में हमने छाँट कर तस्वीरें निकालीं और रौनक़ के लिए उन्हें दीवारों पर चिपका दिया। यों हमने हर दृष्टि से बढ़िया-सा वार्ड बना डाला।

कोढ़ के रोगियों के लिए एक तीसरे घर में 'छुतहा वार्ड' बनाया गया, एक छोटी-सी घास-फूस की झोंपड़ी में। वार्ड की तरह यह बल्लियों पर अवस्थित नहीं थी। इसके लिए हमने बाँस की नौ चारपाइयाँ बनायीं। तीन इमारतों का यह अस्पताल बनाने में ज्यादा समय नहीं लगा।

अपने वचन के अनुसार प्रधान मंत्री ने हमारे लिए सब व्यवस्था कर दी थी। चाओ खुओंग और जन-कार्य मंत्रालय के स्थानीय अधिकारी ने हमारी हर सम्भव

सहायता की। जन-कार्य अधिकारी गुयेन काविन एक दिलचस्प व्यक्ति था और कुछ दयनीय भी। उसकी रगों में आधा फ्रांसीसी और आधा वियतनामी खून था। स्कूल बनाने का काम उसने बहुत अच्छे ढंग से किया था और हमारा अस्पताल भी बनवाया था। उसकी एक आकांक्षा 'नाम–था' से बर्मा की सीमा तक सड़क बनाने की थी। सड़क बनाने का आधुनिक साज़-सामान तो उसके पास था नहीं, केवल मज़दूर थे। उन्हीं से उसने कई बार काम शुरू करवाया; लेकिन अपनी कच्ची-पक्की धूल-भरी सड़क को कभी उड़न-पट्टी से दस मील से आगे ले जाने में वह सफल नहीं हो सका। वह भी हर साल बरसात के मौसम में बह जाती थी। काविन हमारे घनिष्ठ मित्रों में एक बन गया।

चाओ खुओंग कुछ अजीब-सा था, लेकिन अच्छा आदमी था। फ्रांसीसी वह बड़ी तेज़ी से बोलता था। लेकिन सिगरेट उसके मुँह में हमेशा लगी रहती थी और धुआँ निरन्तर उड़ा करता था। सिगरेट वह अपने होंठों से तभी अलग करता था, जब उसे नयी सिगरेट सुलगानी होती थी। हमारा कूटनीतिज्ञ जान ही अकेला उसकी बात को पूरी तरह समझ पाता था; इसलिए वे जिगरी दोस्त बन गये।

जब मैंने पहली बार गवर्नर को हम लोगों के साथ भोजन करने का आमंत्रण दिया, तो उसने बड़ी गम्भीरता के साथ अभिवादन करते हुए उसे स्वीकार किया; परन्तु भोजन करने आया ही नहीं। हम उसके पास पहुँचे तो उसने बताया कि हमने फ्रांसीसी रीति-नीति के अनुसार लिख कर विधिवत् आमंत्रण भेजा ही कहाँ था। मैंने उससे कहा कि अमरीका में अनौपचारिक अवसरों के लिए ज़बानी न्यौता ही काफ़ी होता है। उसने मुस्करा कर सिर हिलाया। उसे इस कैफ़ियत से संतोष हो गया लगता था। परन्तु इसके बाद हम जब भी उसे आमंत्रित करते थे, वह भौंहें मटका कर पूछ लेता था कि निमन्त्रण अमरीकी है या फ्रांसीसी?

डेनी शेपर्ड ने तय किया कि जब तक वह हमारे पास 'नाम-था' में कुछ दिन रहनेवाला था, तब तक चीरफाड़ के लिए साफ़-सुथरी, कार्यक्षम, सुसज्जित 'सर्जरी' तैयार कर दे। अतः वह साज-सामान लगाने, औज़ारों को कृमि-हीन करने और मरहम-पट्टी, वगैरा के लिए कृमि-हीन रूई, पट्टियाँ, फाहे आदि बनाने में लग गया। और यह अच्छा ही हुआ, क्योंकि शल्य-चिकित्सा हमें अपनी अपेक्षाओं से पहले ही शुरू करनी पड़ी।

'नाम-था' पहुँचने के दूसरे दिन ही हमें कस्बे में बहुत हो-हल्ला सुनायी दिया। स्वयं चाओ खुओंग के साथ कुछ गाँव-वाले अस्पताल के अहाते में दाखिल हुए। उनके कंधों पर लम्बी-लम्बी बल्लियों के सहारे दो बाँस की डोलियाँ-सी लटकी

हुई थीं। मैंने बाहर निकल कर उन डोलियों में बैठे हुए व्यक्तियों को देखा और वहीं से चिल्ला कर अपने साथियों को आकस्मिक आपरेशन के लिए तैयारी करने का आदेश दिया।

यह केवल आकस्मिक आपरेशन न था, अपितु हमारे लिए उत्तरी सीमांत पर साम्यवादियों की 'लूट-खसोट' का पहला प्रमाण था। जितनी देर में डैनी ने और मैंने अपने हाथ धोये, उतनी देर में चाओ खुओंग ने सारा माजरा कह सुनाया। सीमा के निकट एक गाँव में लुटेरे याओ क़बीले के एक आदमी की झोंपड़ी पर टूट पड़े थे। अपनी लम्बी तलवारों से उन्होंने उस क़बायली की माँ और एक छोटे बच्चे के तो टुकड़े-टुकड़े कर दिये और स्वयं उसे तथा उसकी पत्नी को बुरी तरह घायल कर दिया था। उनकी यह नृशंसता अधिक देर चल न सकी। चीख़-पुकार सुन कर पड़ौसी दौड़ आये। लुटेरे तब तक नौ दो ग्यारह हो गये, लेकिन लूट के नाम पर वे कुछ नहीं ले जा सके।

गाँव-वाले घायलों को इन डोलियों में डाल कर घाटी के कठिन मार्ग से 'नाम-था' लाये थे। रास्ता तय करने में उन्हें एक दिन और एक रात लगी थी। यह मैं कभी नहीं समझ पाऊँगा कि इसके बाद भी घायल दम्पति जीते कैसे बचे?

स्त्री का सिर, चेहरा और छातियाँ बुरी तरह काट डाली गयी थीं, और ज़ख़्मों में मवाद पड़ चुका था। तेज़ बुख़ार उसे हो आया था और भयंकर पीड़ा से वह बेचैन थी। हमने उसे 'एंटिबायोटिक' औषधियाँ और मार्फ़ीन दी। इसके बाद उसके पति को सम्हाला। उसकी हालत ज्यादा ख़राब दिखायी देती थी।

तेज़ चाकू या तल्वार से उसकी आधी खोपड़ी की चमड़ी साफ़ काट दी गयी थी; जबड़ा कई जगह से टूट गया था और चेहरा एक तरफ़ आँख की पुतली से होंठों तक चीर दिया गया था। उसकी एक बाँह टूट गयी थी और ज़ख़्म तो कई लगे थे।

खोपड़ी को साफ़ करके चमड़ी में टाँके लगाना अपेक्षाकृत सरल था। जगह जगह से टूटे हुए जबड़े को ठीक करने में बहुत ही कठिनाई थी। सारे दाँत उखड़ गये थे, इसलिए टूटे हुए सिरों को आपस में जोड़ने के लिए पकड़ने का कोई साधन नहीं रहा था। अतः टूटे हुए जबड़े का काफ़ी बड़ा हिस्सा और थोड़ी सी दाँतों की जगह भी मुझे निकाल देनी पड़ी। इसके बाद मसूड़े सीकर मैंने चेहरे, होंठ और आँख की पुतली को ठीक किया और फिर बाँह की टूटी हुई हड्डी को बिठाया।

हमने एंटिबायोटिक और विष-निरोधक औषधियों के इंजेक्शन देकर तथा नसों के द्वारा शरीर में पुष्टिकर तरल पदार्थ पहुँचा कर रोगी को बचा तो लिया, परन्तु उसका चेहरा हमेशा के लिए विकृत हो चुका था।

स्त्री के सिर में तो जगह-जगह इतना मवाद पड़ गया था कि तुरन्त टाँके लगाना सम्भव ही नहीं था। उसके चेहरे और छातियों को सम्हालने में विशेष कठिनाई नहीं हुई। उसे जीवित रखना, पकाव के ज़हर को समाप्त करना और उसके बाद उसकी शल्य-चिकित्सा करना मुख्य और कठिन कार्य था।

जितनी देर हम यह सब उपचार करते रहे, उतनी देर चाओ खुओंग और उसका एक अधिकारी आपरेशन के कमरे में ही रहे। जब हम निबट गये, तब गवर्नर बाहर निकला और तभी उसने अपनी सिगरेट सुलगायी। हाथ वग़ैरा धोकर जब मैं बाहर निकला, तब वह वहीं मौजूद था और विचारमग्न-सा धुएँ के बादल उड़ा रहा था।

उसने शोकपूर्वक कहा—"हमेशा यही होता है। हम पता लगाने के लिए एक दस्ता भेजेंगे, लेकिन पता कुछ नहीं चलेगा। अब कुछ दिन उस गाँव के लोग चैन की नींद सो सकते हैं। उन बदमाशों का अगला हमला किसी और जगह होगा।"

मैं उससे कई सवाल पूछना चाहता था, लेकिन हिम्मत नहीं हो रही थी। सीमा पर लूट-खसोट करनेवाले ये लोग कौन थे? क्या ये लोग लाल चीन के थे? या पाथेत लाओ के थे? परन्तु मुझे वियंतियेन में ही सावधान कर दिया गया था कि ऐसे मामले में छान-बीन करने की कोशिश न करूँ। और चाओ खुओंग से अभी नयी-नयी जान-पहचान हुई थी, इसलिए मुझे फूँक-फूँक कर क़दम रखना था। गवर्नर ने मुझसे कहा कि यद्यपि उस वर्ष पैदावार अच्छी थी, तथापि वह दुर्घटना इस बात का एक और सबूत थी कि एशिया के उस हिस्से में अभी शान्ति क़ायम नहीं हुई थी। साम्यवाद की विभीषिका वहाँ खुल कर खेल रही थी। हमारे और हमारे काम के बारे में राजदूत पार्सन्स की शंका सर्वथा उचित ही थी।

अगले दिन शाम को चाओ खुओंग ने मुझे बातें करने के लिए अपने घर बुलाया। परन्तु दुर्भाग्य से मैं जा न सका, क्योंकि उस रात हमें एक और रोगी की देख-भाल करनी पड़ी। इस रोगी की दशा से हमें ज्ञात हुआ कि हमें एक और प्रकार के शत्रु का भी सामना करना था। वे शत्रु थे इस प्रदेश के झाड़-फूँक करनेवाले ओझा।

अध्याय ६

आयोन की कथा और ओझा

रात पड़ने के बाद पहाड़ी गाँव बान परेंग से एक आदमी हमारे घर आया और गिड़गिड़ा कर बोला कि हम उसके दस बरस के मरणासन्न लड़के को किसी तरह बचायें। उसे तकलीफ़ क्या थी? उस आदमी ने बताया कि लड़का जल कर 'मुर्गी या सूअर की तरह स्याह हो गया है।' कब की बात थी यह? आदमी समय का हिसाब लगाने लगा।

फिर उसने कहा—"चौदह रातें हुई। उस रात बहुत ठंड थी। मेरे बेटे आयोन ने सर्दी रोकने के लिए तीन अतिरिक्त क़मीज़ें पहन रखी थीं। वह सरक-सरक कर आग के निकट आता गया। और तब एकाएक उसकी क़मीज़ें जल उठीं।"

स्थानीय सेना का एक सिपाही उसे हमारे पास लाया था। उसने हमें सुबह तक ठहरने को कहा, क्योंकि बान परेंग का रास्ता बहुत खराब था। इसके अतिरिक्त, उसने कहा कि जहाँ लड़के ने चौदह रातें और चौदह दिन काट दिये थे, वहाँ एक रात वह शायद और भी खींच लेगा।

परन्तु उस आदमी की हालत पागलों-जैसी हो रही थी। रोगी की दशा गम्भीर और चिन्तनीय जान पड़ती थी। इसके अतिरिक्त सुबह हमें रोगियों के देखने से फ़ुर्सत न मिलती। अतः पीट, डेनी और चई ने टार्चें निकालीं और मैंने अपने बैग का सामान सम्भाला। उस आदमी को आगे करके हम लोग चल दिये। हमने वही काविन द्वारा निर्मित सड़क पकड़ी, जो उड़न-पट्टी से होकर जाती थी। अब हमें मालूम हुआ कि क्यों 'नाम-था' में जीप का इस्तेमाल करना असम्भव था।

एक क़तार बाँध कर चलते हुए हमने जंगल पार किया। फिर पहाड़ी रास्ते पर पहुँचे जहाँ से चढ़ाई शुरू हुई। एक घंटे तक या इससे भी ज्यादा हम चढ़ते गये। रास्ते में रस्सों और बाँस के कई पुल पड़े। नीचे हरहरा कर बरसाती नदियाँ बहती थीं और ऊपर ये पुल बड़े खतरनाक ढंग से झकोले खाते थे। आख़िर हम बान पेरंग पहुँचे। तब तक मैं, जो तीस बरस का युवक था, बूढ़ों की तरह थक गया था।

वह आदमी हमें एक बड़ी-सी अंधेरी झोंपड़ी के अन्दर ले गया जो बल्लियों के सहारे काफ़ी ऊँचाई पर बनी थी। अन्दर जले हुए माँस की सड़ांध आ रही थी

मरीज का पिता हमें एक कोने में पड़े हुए मैले-कुचैले चिथड़ों के ढेर के पास ले गया। टार्च की रोशनी में हमने देखा कि कँकाल-सा एक लड़का उन चिथड़ों में लिपटा हुआ पेट के बल पड़ा था।

कंधों से चूतड़ों तक का हिस्सा जल कर कोयला हो गया था। उसे नाममात्र को होश थी और अजीब तरह से गुड़ी-मुड़ी-सा वह निश्चल पड़ा था। परन्तु उसकी सारी पीठ जैसे कुलबुला रही थी। मैंने टार्च को नज़दीक ले जाकर देखा। पीठ में बेहद कीड़े पड़ गये थे और जले हुए माँस को खाने में लगे थे।

लड़के के बाप ने बताया कि स्थानीय ओझा ने जले हुए हिस्सों पर एक मरहम लगाया था। बाद में मुझे मालूम हुआ कि सूअर की चर्बी, सुपारी के रस और गोबर का मरहम था वह। एक तो लड़का जल ही बुरी तरह गया था और उस पर इस मरहम ने, जो उस पखवारे में न जाने कितनी बार लगाया गया होगा, इस तरह उसे ज़िन्दा ही मार डालने का काम किया था।

उन परिस्थितियों में कुछ भी करना हमारे वश से बाहर था। यदि लड़के को और कुछ दिन वहीं रखा जाता, तो उसकी मृत्यु निश्चित थी। पहाड़ से उतार कर उसे 'नाम-था' ले जाना असम्भव जान पड़ता था: परन्तु हमारे पास और कोई चारा न था। हमने उसके पिता से कहा कि वह एक बड़ा-सा टोकना, रस्सा और एक मज़बूत बल्ली लाये। टोकने के इस 'एम्बुलेंस' में लड़के को 'नाम-था' लाने के बन्दोबस्त के लिए पीट और चई को वहीं छोड़ कर, डेनी और मैं एक आदमी को रास्ता बताने के लिए साथ लेकर 'नाम-था' लौट पड़े।

हमारे पीछे-पीछे कुछ घंटों बाद जब रोगी 'नाम-था' पहुँचा, तब तक हम सब तैयारी कर चुके थे। आयोन (रोगी लड़का) को हमने पेट के बल मेज़ पर लिटाया और टपका-टपका कर बेहोशी की दवा देने का कठिन काम पीट ने सम्हाला। अभी हमारा 'जेनरेटर' लगा नहीं था और तेल के लैम्प इस डर से नहीं जला सकते थे कि बेहोशी की दवा की गैस कहीं आग न पकड़ ले। सौभाग्य से, खानों में काम आने-वाले बैटरी के कई लैम्प हमारे पास थे, जिन्हें माथे पर बाँधा जा सकता था। इस कठिन और संकट के समय उन्होंने खूब काम दिया।

लड़के की पीठ पर हमने साबुन और पानी की नदी बहा दी और आहिस्ता-आहिस्ता सारी गन्दगी साफ़ की। मैं सड़ा हुआ बेकार माँस निकालने लगा और देखते-देखते पसलियों तक जा पहुँचा। हालत मेरे अनुमान से ज्यादा खराब थी। कंधों की माँसपेशियाँ बहुत क्षतिग्रस्त हो गयी थीं और चूतड़ों का बहुत-सा भाग बिलकुल नष्ट हो चुका था।

आख़िर आयोन को 'एंटिसेप्टिक' मरहम और फाहों में लपेट कर बड़ी सावधानी से एक चारपाई पर पहुँचा दिया गया। इतने दिनों तक उसकी देख-भाल नहीं हुई थी और पेट में खाना या पानी शायद नाम को ही पहुँचा था। उससे उसका ठठरी जैसा छोटा-सा शरीर अत्यंत दुर्बल हो गया था और उसमें जल का अभाव हो गया था। हमने नसों के ज़रिये उसके शरीर में तरल भोजन पहुँचाने का प्रयत्न किया; परन्तु हमें एक भी नस ऐसी नहीं मिली जिसमें ज़रा भी जान होती। उस कृश शरीर में पेनिसिलिन का इंजेक्शन लगाने के लिए भी माँस कहीं ढूँढ़े से ही मिलता था।

बाक़ी रात डेनी और पीट उसके पेट और टाँगों में त्वचा के अन्दर इंजेक्शन लगा कर उसे तरल पदार्थ देते रहे। रोगी की हालत बहुत ही ख़राब हो चुकी थी। उसका इलाज करना ख़तरा मोल लेने के समान था। (यह एक चमत्कार ही था कि लड़का बच गया और स्वस्थ हो गया; परन्तु हमेशा के लिए विकलांग अवश्य हो गया।)

हमने वाँग वियेंग में जलने के और चोट-चपेट के कई गम्भीर रोगी देखे थे और मैं जानता था कि अलग-अलग से उत्तर में और भी ख़राब रोगी देखने में आयेंगे। परन्तु अब मैं सोचने लगा कि जैसा आयोन के मामले में हुआ था, वैसे और कितने ही रोगियों के सम्बंध में ओझाओं के जादू-टोने और जंगली इलाज हमारी कठिनाइयों में नयी-नयी उलझनें पैदा करेंगे।

ऐसा रोगी बालक अमरीका के शानदार, साफ़-सुथरे और कृमि-विरहित अस्पतालों में भी ज़िन्दा रह सकेगा, इसका मुझे विश्वास नहीं। परन्तु हम थे कि दुनिया के इस एकान्त भाग में, अपर्याप्त उपकरणों से और टार्चों की रोशनी में इलाज करने बैठे थे। अधिकांश डाक्टर तो इस रोगी का उपचार करना ही व्यर्थ समझते। परन्तु लगता है कि लाओस में बच्चे कष्ट और पीड़ा झेलने की शक्ति घुट्टी में ही पीते हैं। आवश्यक सहन-शक्ति आयोन में थी। उपचार और प्रार्थना की शक्ति तथा थोड़े-से परिश्रम ने आयोन को बचा लिया। उसकी बेहोशी जब दूर हुई, तब उसने देखा कि उसका बिस्तर रंग-बिरंगे गुब्बारों से सजा हुआ था, और हम लोग, जो उसकी परिचर्या में रात और दिन एक कर रहे थे, बहुत प्रसन्न हुए। एशिया में हमें कितना-कुछ सीखने को मिला है। सारे संसार में कितना साम्य है!

आपरेशन के बाद मैं झोंपड़ी में लौट आया। मेरे साथियों ने बाक़ी रात आयोन के बिस्तर के पास गुज़ारने का फ़ैसला किया। जिस घड़ी अपनी थकान उतारने के लिए उन्हें आराम करना चाहिए था, उसमें भी ये युवक बालक की सेवा

में निरत रहे। इसने मेरे अन्तर में एक अमिट छाप लगा दी। इस असंदिग्ध और स्पष्ट तथ्य की छाप कि मानव समाज के भ्रातृत्व का उतना ही ठोस अस्तित्व है, जितना कि परमेश्वर के पितृत्व का। सचमुच हम अपने भाइयों के रखवाले हैं।

हमारे आने से पहले और कदाचित् अत्यन्त प्राचीन काल से 'नाम-था' में ओझाओं का एकच्छत्र राज्य था। उनकी बुद्धि पर, उनकी गुप्त औषधियों और जादू-टोनों की शक्ति पर कभी किसी ने सन्देह नहीं किया था। परन्तु अब ग़रीब जनता अपने परम्परागत प्रेत-साधकों के जादू और गौरांग डाक्टरों के नये उपायों के बीच द्विविधा में पड़ गयी थी।

अन्त में ओझाओं ने हमारे अस्पताल पर ही अपने टोने का उपयोग किया। अस्पताल के अहाते के बाहर खूँटों के सहारे बाँस की चटाइयाँ बाँध कर उन्होंने अस्पताल को सब ओर से घेर लिया। बात मूर्खता की अवश्य लगती है, परन्तु इस टोने ने तुरन्त असर किया। खराब से ख़राब हालत में भी रोगियों ने इलाज के लिए हमारे अस्पताल में आना बन्द कर दिया।

ये ओझा सब-के-सब गाँव के आदरणीय बुज़ुर्ग थे। परन्तु दो हमारे सबसे ज़बर्दस्त विरोधी थे—एक तो 'जो' नामक एक बूढ़ा और दूसरी एक बुढ़िया, जिसे हम मैगी कहते थे।

हमने एक पुरानी अमरीकी तरकीब अपनाने का फ़ैसला किया—"जिसे वश में नहीं कर सकते, उससे मेल कर लो।" ओझाओं को अपना शत्रु बनाने के बजाय (और इस पर अमरीकी मेडिकल संघ को शायद आपत्ति होगी) हम उनसे इस तरह व्यवहार करने लगे मानो 'उपचार की कला में' हम परस्पर सहयोगी हों और हमारे बीच अन्तर केवल उपचार की प्रणाली का हो; मानो उनकी प्रणाली से हमारा मतभेद तो था, तथापि उनका मान हम करते थे।

एक दिन तीसरे पहर मैं जंगल में एक रोगी को देख कर लौटा, तो मैंने देखा कि पीट और 'जो' नामक बूढ़ा बैठे हुए गम्भीरता से अपने पेशे की चर्चा कर रहे हैं। पीट ने आँख से मुझे इशारा किया और मैं भी बैठ कर ध्यान से उनकी बातें सुनने लगा।

बूढ़े 'जो' ने तरह-तरह की टहनियों, बाँस की खपच्चियों, सुपारियों, उबले हुए पत्तों, सूअर की चर्बी और गोबर की एक दुकान-सी लगा रखी थी और वह अपनी औषधियों और उपचार के सिद्धान्त समझा रहा था। उसकी अधिकांश बातें बे-सिरपैर की थीं। परन्तु जहाँ-तहाँ उनमें देहाती इलाज के वे विश्व-व्यापक गुर

भी थे (जैसे ज़ख्मों पर मकड़ी के जालों का इस्तेमाल), जिनके गुणकारी प्रभाव को आधुनिक चिकित्सा-शास्त्र भी स्वीकार करता है।

पीट ने कहा–" ठीक है; हमारी उपचार की प्रणालियाँ भिन्न हैं। हमारी औषधियाँ भिन्न हैं, हमारे तरीके भिन्न हैं; लेकिन हम दोनों का उद्देश्य एक ही है – लोगों को बीमारी और कष्ट के चंगुल से छुड़ाना। हमारे लिए महत्त्वपूर्ण चीज़ यह है कि मिल-जुल कर काम करें। जो कुछ हमें आता है, हम तुम्हें सिखायेंगे और तुम हमें सिखाओ।" बूढ़े 'जो' को यह बात उचित लगी।

इसके बाद बूढ़ा 'जो' हमारे रोगियों के देखने के समय शायद ही कभी अनुपस्थित रहा। हम पेनिसिलिन का इंजेक्शन देते थे और वह सम्बंधित प्रेतात्माओं का आव्हान करता था। टूटी हुई हड्डी पर हम लकड़ी की तख़्ती बाँधते थे और बूढ़े 'जो' से तख़्तियों पर अनिवार्य लाल, सफ़ेद और काले डोरे बँधवाते थे। अगर हमें फ़ीस के रूप में दो नारियल मिलते थे, तो एक 'जो' का होता था। (अमरीका में इस तरह फ़ीस में हिस्सा लगाना बुरा समझा जाता है।)

बूढ़े 'जो' के मरीज़ इतनी बड़ी संख्या में कभी स्वस्थ नहीं होते थे; अतः वह बहुत ख़ुश हो गया और हमारा पक्का दोस्त बन गया। (तथापि एंटिबायोटिक औषधियों पर उसे कभी विश्वास नहीं हुआ। वह कहता था कि जब रोग सिर में हो, तब पीठ में सुई घोंपना निस्सार और निरर्थक है।)

मैगी की समस्या मेरे सर थी; परन्तु जब मैं रोगियों को देखता था, तो वह कभी भूले से ही मेरे पास से हटती थी। उसके दाँत बाहर निकले हुए थे और गाँव में वह सब से गन्दी औरत थी। वह पश्चिमी ढंग का पुराना-फटा ब्लाउज़ और घाघरा पहनती थी और माथे पर एक गन्दा तौलिया लपेटे रहती थी। अपना सर वह नियमित रूप से मूँडती थी लेकिन हाथ कभी नहीं धोती थी।

हर गन्दे रोगी को देखने के बाद मैं सावधानी के साथ अपने हाथ साबुन और पानी से धोता था और फिर उन पर अपने किसी सहायक से 'अल्कोहोल' (मद्यसार) डलवाता था। मैगी चकित-सी देखा करती थी। मैं धीरज के साथ उसे समझाता था कि गन्दे ज़ख्म से जो 'दुष्ट आत्माएँ' मेरे हाथों में चिपट जाती थीं, वे साबुन, पानी और तेज़ तरल पदार्थ से तुरन्त भाग जाती थीं। मैगी यह समझ कर सर हिलाती थी। कृमि-निरोध का सिद्धान्त इस तरह बताने पर उसकी समझ में आता था।

एक रोज़ एक छोटा-सा बच्चा मेरे सामने आया। उसका सर हरे-हरे फोड़ों से भरा पड़ा था। सर में जुएँ तो बहुत थीं, पर बाल नाममात्र को थे। उपचार करने

से पहले सर को खूब साफ़ करना आवश्यक था। मैंने मैगी को तेज़ शैम्पू (तरल साबुन) की बोतल दी और कहा कि वह बच्चे को नदी पर ले जाकर अच्छी तरह नहला लाये।

जब वह लौटी, तो बच्चे के सर में जगह-जगह खून निकल रहा था; लेकिन उसने उसे बिलकुल साफ़ कर दिया था। मैंने मैगी के हाथों पर नज़र डाली। वे भी इतने साफ़ हो गये थे जितने बरसों में नहीं हुए होंगे। परन्तु मैगी इतने से ही संतुष्ट न थी। मेरे सामने ही वह चई के पास गयी और अपने हाथों को जोड़ कर उसने आगे कर दिया। चई ने उन पर 'अल्कोहोल' डाला और उसने रगड़-रगड़ कर हाथ धोये। मैगी सचमुच सीखने लगी थी।

स्पष्ट है कि बूढ़ा 'जो' व दूसरे ओझा सुपारियों, लकड़ी के टुकड़ों, उबले हुए पत्तों, गोबर, बन्दर के रक्त, थूक और सुअर की चर्बी जैसी प्राकृतिक औषधियों तथा सम्बंधित प्रेतात्माओं को संतुष्ट करने पर विश्वास करते थे। बाँह की हड्डी के 'कम्पाउंड फ्रेक्चर' का (ऐसा फ्रेक्चर जिसमें हड्डी टूट कर अपनी जगह से हट जाती है और उसका सिरा अंग में घुस जाता है; कभी-कभी वह बाहर तक निकल आता है।) बूढ़े जो के पास अपना ही अनोखा इलाज था। मेरा खयाल है कि अमरीका की हड्डियों के डाक्टरों की अकादमी को यह इलाज नोट करना चाहिए: बाँह टूटने पर रोगी को दक्षिण की ओर सिर करके चटाई पर लिटा दिया जाता है। ज़ोर-ज़ोर से प्रार्थना करके हड्डियों की आत्माओं का आह्वान किया जाता है। टूटे हुए अंग पर लाल, काले और सफ़ेद डोरे बाँधे जाते हैं। ज़ख्म में मकड़ी के जाले भरे जाते हैं। फिर बाँह को पेड़ों की छाल में बाँध दिया जाता है। इसके चारों ओर कुछ जड़ें जमा कर बाँह के चारों ओर बाँस का एक छोटा-सा पिंजरा बुन दिया जाता है। यदि रोगी जीवित रहे तो यह पिंजरा कई सप्ताह उसकी बाँह पर चढ़ा रहता है; परन्तु जीवित कोई भाग्यशाली ही रहता है। यदि रोगी मर जाय तो हानि सूर्य या चन्द्रमा की स्थिति अथवा पास-पड़ौस में घूमने-फिरनेवाली दुष्ट आत्माओं की संख्या पर निर्भर करती है। इन सीधे-सादे लोगों की आत्माएँ और प्रेतात्माएँ रात्रि के आवरण को पकड़े रहती हैं और दिन के पंखों पर उड़ा करती हैं।

एक दिन सुबह एक लड़का भागा हुआ अस्पताल आया। उसने हमसे तुरन्त उसके गाँव चल कर उसके छोटे भाई को देखने की प्रार्थना की। हम फ़ौरन गये और बच्चे को अपने साथ लेकर लौटे। सारा दिन हम उसे जीवित रखने के प्रयत्न करते रहे। हैजे का आक्रमण हुआ था। सूर्योदय के समय बच्चा बिलकुल स्वस्थ था, उसके गालों पर सुर्खी थी। कुछ घंटों के बाद उसे दस्त शुरू हुए।

थोड़ी ही देर में हालत गम्भीर हो गयी। फिर क़ै शुरू हुई। दोपहर तक इतना उसके शरीर से निकल गया कि उसके हाथ-पैरों में ऐंठन के दौरे आने लगे। उसे बुखार नहीं हुआ, परन्तु क़ै और दस्त इतने बड़े प्रमाण में और अधिक आते रहे कि बच्चा नमक की कमी के कारण माँसपेशियों में ऐंठन होने से तड़पने लगा। दिन भर हम त्वचा के नीचे इंजेक्शन देकर उसके शरीर में पुष्टिकर तरल पदार्थ पहुँचाते रहे; फिर भी शाम तक उस बच्चे का वजन लगभग आधा रह गया। सूर्यास्त के समय उसने प्राण त्याग दिये। हैज़े का यह पहला रोगी हमारे पास आया था। परन्तु दुर्भाग्य से अन्तिम नहीं था। अब तो हम हैज़े के विषय में दक्ष हो चुके हैं। लाओ लोग इसे 'जल मृत्यु' कहते हैं; क्योंकि यह वर्षा ऋतु के पहले पानी के साथ शुरू होता है और लगभग एक महीने में समाप्त हो जाता है; परन्तु महीने-भर में ही जितने आदमी यह खा जाता है, उनकी संख्या पर एकाएक विश्वास नहीं हो सकता। टीके लगने से यह संख्या कुछ घटी। अनुमान लगाइये कि यदि न्यूयार्क की ग़रीब बस्तियों में यह रोग फैल जाय तो कितनी चिल्ल-पुकार मच जाय, परन्तु दुनिया में बच्चे तो सब एक-से ही हैं। स्वास्थ्य-मंत्री को हैज़े की सूचना मिली। उन्होंने हैज़े के टीके की हज़ारों शीशियाँ भिजवायीं। हमारे लाओ नर्सों और दाइयों ने सारी घाटी में घूम-घूम कर लोगों को टीके लगाये। टीके लगानेवाले लोग उन्हीं के देश के थे, इसलिए भोले-भाले गाँववालों ने ज़रा भी हील-हवाला नहीं किया।

अस्पताल में सुबह रोगियों की भीड़ 'नाम-था' में वैसी ही लगती थी, जैसी वाँग वियेंग में; परन्तु शल्य-चिकित्सा की आवश्यकता यहाँ अधिक हुई। प्रारम्भ के कुछ महीनों में रोगियों की क़तारें बहुत लम्बी लगती थीं। वाँग वियेंग में लगभग सब-के-सब रोगी लाओ लोग होते थे; कभी-कभी कोई खा क़बीले का आदमी आ जाता था। 'नाम-था' में कई क़बीले थे। हर क़बीले की अपनी जातिगत विशिष्टताएँ थीं। हमारे रोगियों में याओ, थाइ दम, थाइ न्यूआ, लोलो, लान तेन, मेओ, लू, और खा क़बीलों के आदमियों के अतिरिक्त चीनी भी रहते थे। हर भाषा के दुभाषिये की हमें ज़रूरत थी। दो-एक भाषाएँ मैगी समझती थी। हमारे खा मज़दूर याओ और वाओ भाषाएँ बोल लेते थे। चई का दावा था कि वह मेओ भाषा समझता था, परन्तु मुझे तो इसमें सन्देह ही था। थाइ दम और थाई न्यूआ कुछ लाओ से मिलती-जुलती ज़बान बोलते हैं। हम सबने पहाड़ी ढंग से बोली जानेवाली लाओ ज़बान सीख ली थी।

कई बार मरीज़ की शिकायत को डाक्टर तक पहुँचने में चार दुभाषियों से गुज़रना पड़ता था। यह एक आम चीज़ हो गयी थी कि कोई बुढ़िया बैठ कर मेओ भाषा में अपनी शिकायत एक दुभाषिये को बताती। वह दुभाषिया उस शिकायत को याओ ज़बान में मैंगी को समझता। मैंगी खा भाषा में मज़दूर को समझाती और मज़दूर लाओ ज़बान में किउ को बताता और अन्त में किउ फ्रांसीसी भाषा में शिकायत मुझे सुनाता। इतने चक्कर के बाद वह बुढ़िया महज क़ब्ज़ की बीमार निकलती और मैं अंग्रेजी में बाब से कोई साधारण-सी दवा देने को कह देता।

हर क़बीले का पहनावा अलग था। कई क़बीले रंग-बिरंगी, भड़कीली पोशाक पहनते थे। जब हम सुबह अस्पताल पहुँचते तब तक वहाँ लोगों की भीड़ लग जाती थी। उनमें से कई चार-चार पाँच-पाँच दिन पैदल चल कर या टट्टुओं पर सफ़र करके पहुँचते थे। कुछ लोग दूर लाल चीन से भी आते थे। याओ क़बीले के लोग गहरे नीले रंग की वैसी पगड़ियाँ बाँधते थे जैसी कि अरब में पायी जाती हैं। उसके चारों ओर वे चाँदी की बड़ी-सी ज़ंजीर बाँधते थे। ज़ंजीर के एक सिरे पर कुछ व्यक्तिगत आवश्यकताओं की वस्तुएँ लटकती रहती थीं जैसे चाँदी की दाँत-खुदनी, कान साफ़ करने की चाँदी की सलाई, सुपारी बनाने का औजार और सौभाग्य-चिह्न के रूप में बाघ का दाँत या भालू का नाखून। याओ लोग कानों में चाँदी के बड़े-बड़े छल्ले पहनते थे और गले में अँगूठे जितने मोटे ठोस चाँदी के हार। धनवान व्यक्ति दो-दो, तीन-तीन हार पहनते थे।

याओ लोगों के कोट वैसे पुछल्लेवाले होते हैं, जैसे कि हम लोग औपचारिक अवसरों पर पहना करते है। परन्तु कालर की पट्टी की जगह सूत जैसी किसी लाल चीज के लम्बे-लम्बे गुच्छे रहते हैं। कोट के नीचे क़मीज़ या बनियान कुछ नहीं पहना जाता। उनमें ठोस चाँदी के बक्सुए लगे रहते है। उनकी पतलूनें सूती डोरे से खूब कढ़ी रहती हैं। पतलून को बाँधने के लिए वे कोट की लम्बी पूँछ को कमर में लपेट लेते हैं जिससे मोटा-सा पट्टा बन जाता है। पतलूनें घुटनों से कुछ ही नीची होती हैं और पैर तो नंगे ही रहते हैं।

उनमें सबसे सुन्दर थाइ दम लड़कियाँ होती हैं। वे अपने काले बालों को खूब कस कर जूड़ा बाँधती हैं, और जूड़ों में अक्सर चाँदी की बड़ी-बड़ी पिनें लगाती हैं जिनमें घुँघरू और छल्ले पड़े रहते हैं। इन पिनों से कान भी साफ़ किये जाते हैं। ये लड़कियाँ तंग ब्लाउज़ पहनती हैं, जिनमें गले से कम तक चाँदी के सुन्दर चौकोर बटन लगे रहते हैं। लंबे, तंग घाघरों में छरहरे

नितम्बों पर सुन्दर सल पड़ते हैं। घाघरे के निचले छोर पर घनी क़सीदाकारी की एक चौड़ी पट्टी रहती है। क़सीदा कभी-कभी सोने और चाँदी के तारों से भी किया जाता है।

खा खो क़बीले की औरतें भी कानों में भारी-भारी छल्ले पहनती हैं। अधिकांश औरतों के कानों के निचले भाग में इतना बड़ा छेद रहता है कि उसके चारों ओर माँस की एक पतली-सी रेखा ही दिखायी देती है। इन छेदों में सोने या चाँदी की अंडे जितनी बड़ी घुँडियाँ-सी लटकती रहती हैं, जो उनकी जीवन भर की बचत होती है। थाइ दम और याओ क़बीलों की तरह खा खो क़बीले के मर्दों के पतली-सी काली मूँछें रहती हैं जिनमें बाल सौ से अधिक शायद ही रहते होंगे। मुँह के पास मूँछों के सिरे नीचे की ओर झुके रहते हैं। ये पुरुष देखने में तातारियों जैसे होते-हैं, परन्तु उनकी मृदुल आँखों से एशिया के साधु-संतों की सूफ़ी भावना झलकती है।

थाइ न्यूआ लोग चीनी मंडारिनों की तरह ऊँचे कालर की पोशाक पहनते हैं और सफ़ेद साफ़ा बाँधते हैं। याओ, थाइ और चीनी जातियों के पुरुष बालों की चोटी गूँथते हैं। कहा जाता है कि जब कुबलाइ खाँ ने इस प्रदेश को जीता, तब उसने यहाँ के सब लोगों के लिए चोटी रखना अनिवार्य कर दिया था और यह चोटी की प्रथा तब से चली आ रही है। इसका कारण यह बताया जाता है कि रास्ते चलता घुड़सवार यह लम्बी चोटी पकड़ कर सिर को अपनी तलवार से आसानी से क़लम कर सकता था; चोटी न होने पर यह काम इतना आसान न होता।

इन सभी पहाड़ी क़बीलों के लोग भले और शान्त स्वभाव के हैं। शायद किसी ज़माने में इनमें दुष्टता रही होगी, परन्तु उसके दर्शन हमने बहुत कम किये। ये लोग बड़े धीरजवान होते हैं और परिवार के प्रति इनकी निष्ठा अपूर्व होती है।

मेरे नये साथी दिन-ब-दिन तरक्क़ी कर रहे थे। आवश्यक बातें और कुछ अनावश्यक बातें भी वे सीख रहे थे। इन अनावश्यक बातों में एक थी 'ग्रामीण स्वर साधना।' इसका कार्यक्रम बहुत रात गये होता था। पीट और चई इसके सदस्य थे। रात को जब सारा गाँव सो जाता था, तब चई अपनी बाँहों को शरीर पर बजा-बजा कर मुँह से मुर्गे की बोली बोलता था – ऐसा लगता था जैसे कोई मुर्गा पंख फड़फड़ा कर बाँग दे रहा हो। इस पर दूसरे कमरे से पीट मुर्गी की बोली बोलता था। फिर चई इसका उत्तर देता था और कुछ ही क्षणों में गाँव के सारे मुर्गे-मुर्गियाँ इस स्वर-साधना में भाग लेने लगते थे। जितने अधिक मुर्गे-

मुर्गियाँ भाग लेते थे, उतनी ही सफ़ल यह साधना मानी जाती थी। साधना अक्सर होती थी और बहुत ही सफल रहती थी, जिसका असर मेरी नींद पर पड़ता था।

हमारा घर जानवरों से कभी सूना नहीं रहा। कभी बन्दर, कभी लंगूर, कभी तोते और इनके अतिरिक्त समय-समय पर एक जंगली बिल्ली, एक चीते का बच्चा और एक भालू का बच्चा और कितने ही अजाने पशु–पक्षी हमारे यहाँ रहे। हमारे घर में चूहे और चमगादड़ भी बेखटके घूमा करते थे। इतने बड़े चूहे मैंने और कहीं नहीं देखे। आप उन्हें काठी कस कर डर्बी की घुड़दौड़ में दाख़िल कर सकते थे। भोजन करने की मेज़ पर नमक, मिर्च, चटनी, आदि एक बड़ी तश्तरी में रखे रहते थे। रात को चूहे मेज़ पर चढ़ कर इन पर हमला कर देते। आख़िर हमें इनके लिए लोहे की जाली का बड़ा-सा ढक्कन बनाना पड़ा। एक बार एक चूहा पानी की कोठी में गिर पड़ा और डूब कर मर गया। सुबह वह हमें कोठी में मिला।

चमगादड़ इनसे कम न थे। जब रात को हम दीवानख़ाने में चिट्ठियाँ लिखने बैठते थे, तो वे कमरे में चक्कर लगाते रहते। ये ख़तरनाक किस्म के तो नहीं थे और काटते भी नहीं थे, परन्तु परेशान तो करते ही थे। जान ने एक दिन लोहे की जाली के ढक्कन से उन्हें पकड़ने का फ़ैसला किया। उसने एक को पकड़ भी लिया, लेकिन इससे स्थिति में सुधार नहीं हुआ।

हम लोग सब हमेशा एक साथ रहते थे। एकान्त की कोई सम्भावना ही नहीं थी, न अवसर ही था। इस स्थिति को सहन करना अत्यन्त कठिन हो जाता था। सोने और अपना काम करने के अतिरिक्त समय काटने का कोई साधन न था। भकभक करनेवाली मिट्टी के तेल की बत्तियों के प्रकाश में पढ़ना बहुत मुश्किल था और गर्मी जानलेवा थी। न कोई सिनेमा था, न खेल का मैदान, न मधुशाला। मेरे साथी संध्या के समय अधिकतर शल्य-चिकित्सा के लिए पट्टियाँ और फाहे आदि तैयार करते थे या पत्र लिखा करते थे। मुझे नहीं मालूम था कि चिट्ठी लिखना भी इतना आनन्ददायक हो सकता है। इतनी दूरी से पत्र लिख कर जितनी घनिष्टता मैं पैदा कर रहा था, उतनी मित्रों के पास रह कर न पहले कभी पैदा की थी और न बाद में कभी कर सका। जंगल की निस्तब्ध रातों में अन्तर की गहन आशाएँ और आशंकाएँ पत्रों में उँडेली जा सकती हैं, और कदाचित् समझ-बूझ की मजबूत डोरी से मित्रों के साथ वह सम्बंध जोड़ा जा सकता है, जो निकट से स्थापित नहीं किया जा सकता। मै मानता हूँ कि मेरे पत्र हमेशा आनन्दप्रद नहीं होते थे। एशिया की भूमि के समान वे पीड़ा और कष्ट

दुख-दर्द और शालीनता से भरे रहते थे। हमारा जीवन और मेरे पत्र भयावह मृत्यु और एक राष्ट्र की सरल-सहज जनता की शालीनता की कथा सुनाते थे। जिन व्यक्तियों को मेरे वे लम्बे-लम्बे पत्र पढ़ने पड़े हैं, उनसे मैं यही विनती कर सकता हूँ कि वे मेरी अच्छाइयों पर ज्यादा मेहरबान हों और मेरी कमजोरियों को नजरअन्दाज करें।

रात को रोगियों के बुलावों के अतिरिक्त एक और चीज़, जो हमें शान्ति से सोने नहीं देती थी, वह थी रात में भैंसों की घूमने-फिरने की आदत। हमने अपने घर के चारों ओर बाढ़ लगा दी थी और उसमें लकड़ी का दरवाज़ा भी लगाया था। लेकिन दरवाज़ा बन्द शायद ही कभी रहता था और रात को विशालकाय भैंसें अक्सर हरी-हरी घास चरने के लिए अहाते में घुस आती थीं। जहाँ किसी का बछड़ा दूर गया नहीं कि वह ज़ोर से रम्भा कर उसे लौटने का हुक्म देती। उस पर बछड़ा शिकायत किये बिना कैसे रह सकता था? इससे मुर्गियों में चीख़-पुकार शुरू हो जाती थी, उनके पीछे कुत्ते भौंकने लगते थे और यह क्रम चलता ही जाता था। ये चीज़ें यों तो मामूली जान पड़ती हैं, लेकिन जिस समय कोई ज़रा आराम करना चाहता हो उस समय बहुत विशाल रूप धारण कर लेती है। अपना काम करते रहने के लिए आवश्यक था कि इन चीजों को हम हँस कर टालते जायें, परन्तु यों हँस कर टालने के लिए बड़ा ज़ोर लगाना पड़ता था।

जब कभी 'नाम-था' में कोई हवाई जहाज़ आता था, तो हम भी उतने ही बेताब हो जाते थे जितने कि वहाँ के पहाड़ी लोग। हम भागे-भागे उड़न-पट्टी पर पहुँचते थे। उन छोटे-छोटे विमानों के फ्रांसीसी चालक हमें यह बताने के लिए कि वे हमारे लिए भी कुछ लाये हैं, हमारे घरों के ऊपर नीची उड़ान किया करते थे। कभी-कभी वे चालक फ्रांसीसी रोटी लाते थे। कितनी स्वादिष्ट लगती थी वह रोटी! उनके रोगी-से विमानों में कोई चमत्कार ही था, जो वे वियंतियेन से 'नाम-था' तक दोनों ओर की यात्रा बिना किसी दुर्घटना के कर लेते थे। यांत्रिक दृष्टि से तो सभी बातें इसके विपरीत पड़ती थीं। एक विमान का तो नाम ही पड़ गया था 'सन्देहास्पद', जो उचित भी था। एक बार चालकों ने हमें एक छोटा-सा थैला दिया, लेकिन हिदायत कर दी कि घर जाकर ही हम उसे खोलें। उसके अन्दर रोटी, शराब और डिब्बे का मक्खन पा कर हम ख़ुश हो गये और उसमें जो पर्ची निकली उसने हमें हँसा-हँसा डाला। पर्ची में लिखा था—"'नाम-था' के दीन-हीन अमरीकियों के लिए फ्रांसीसी सहायता।"

वॉग वियेंग में हमारा मकान — शानदार तो नहीं लेकिन साफ-सुथरा, उपयोगी और गाँव के दूसरे मकानों से मिलता-जुलता।

अधिकतर अपनी जीप-गाड़ी के पीछे ही दवाईयों के डिब्बे खोल कर हम उपचार करते।

मीड जान्सन की डेका-वि-सोल का प्रयोग, वन्य प्रदेश के एक कोमल शिशु पर।
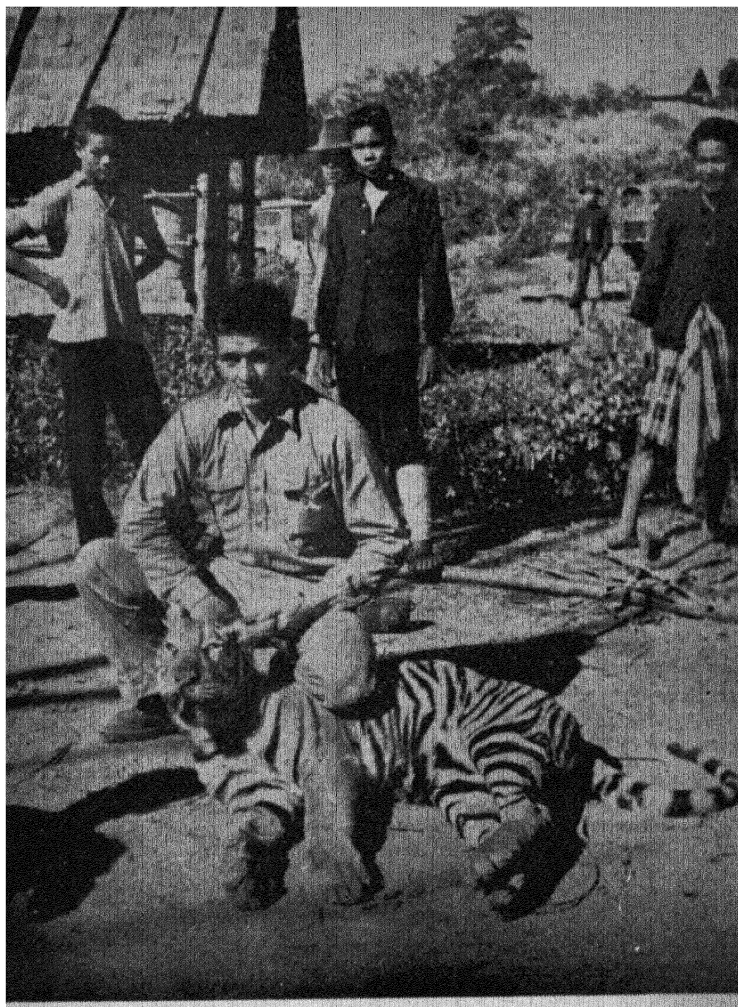
नार्मन बेकर एक भयंकर बाघ पर अपना अधिकार जमाये--लेकिन बाघ मर चुका है और दाहिनी ओर खड़ा चई यह सोच रहा है कि क्या ये अमरीकी बाघ का मॉस खाना पसन्द करेंगे।
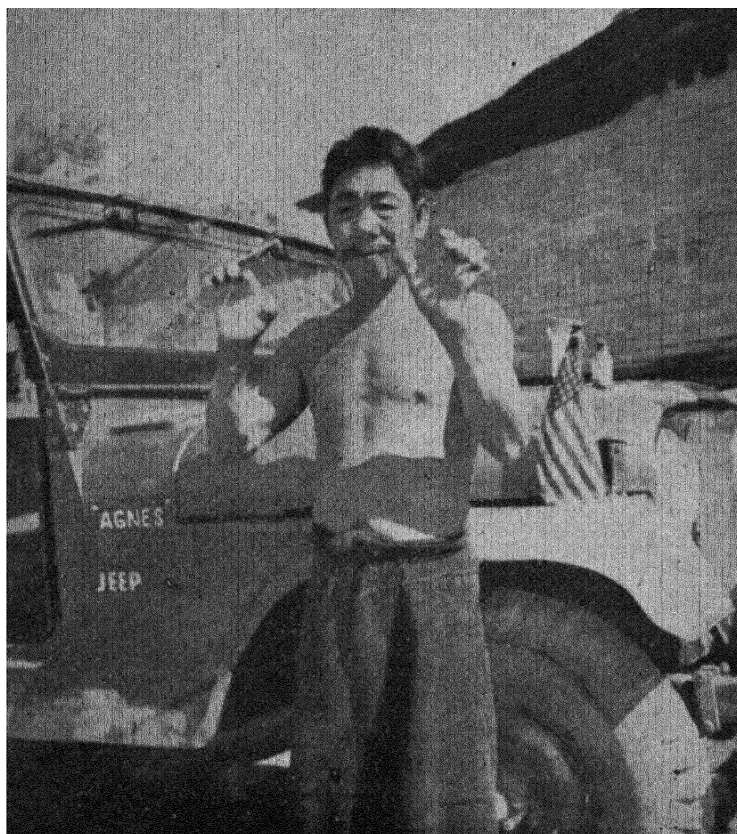
आशा की एक क्षीण किरण अपनी कातर दृष्टि में छिपाये कई कोढ़ी पहाड़ी गाँवों से हमारे पास इलाज के लिए आते।
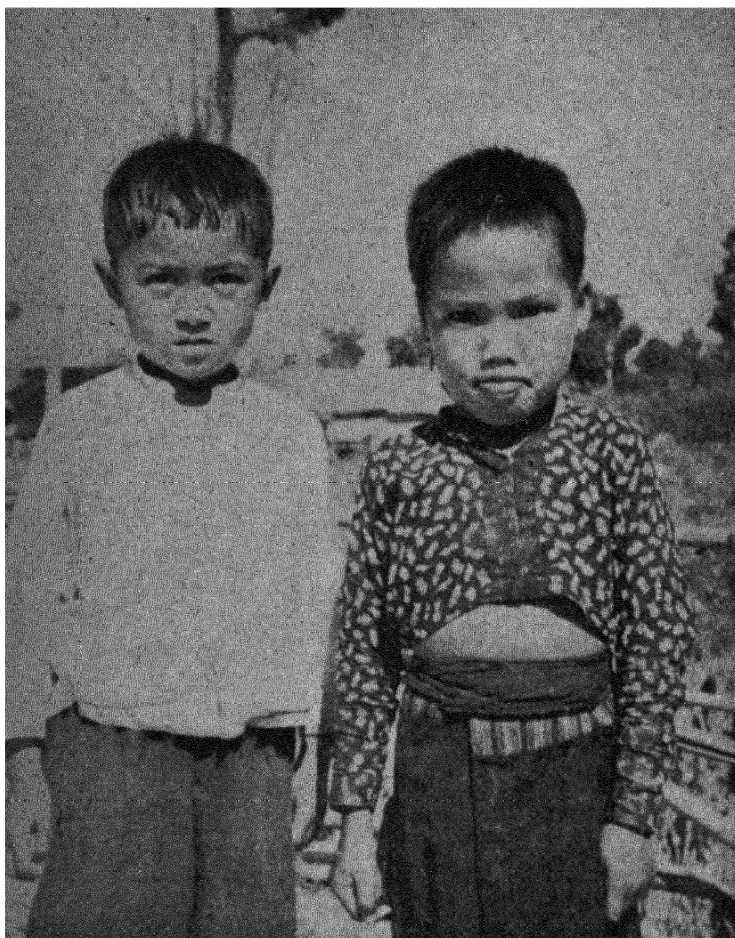
दो थाई बच्चे कैमरा की ओर संदिग्ध दृष्टि से ताक रहे हैं।

बाची अनुष्ठान – 'साधक' मंत्र पढ़ रहा है और हमारे साथ काम करने वाली नर्से पूजा की सामग्री लिये अपनी मनोकामना पूर्ण होने के लिए प्रार्थना कर रही है।
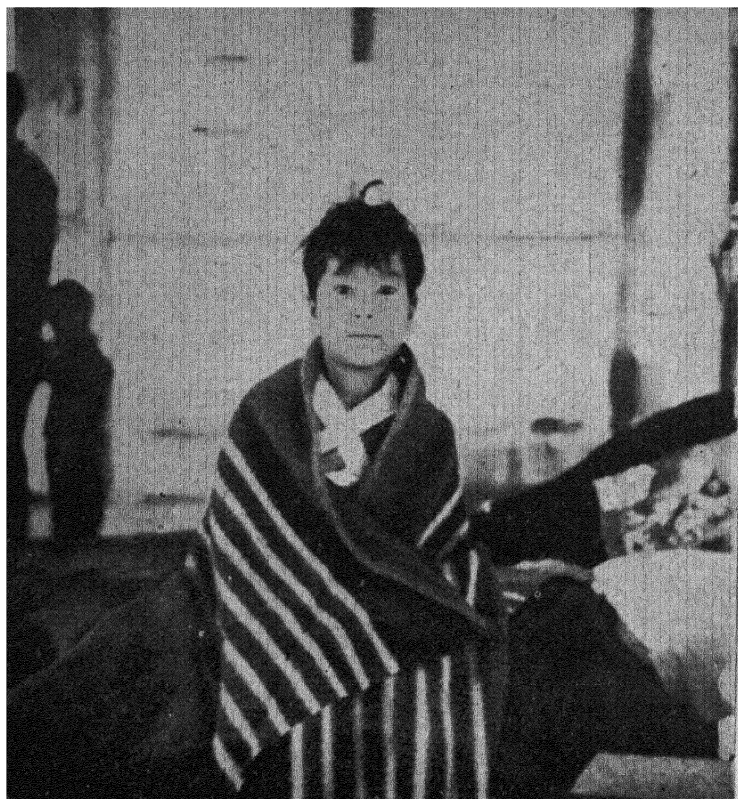
'केअर' द्वारा भेजा गया एक कम्बल ओढ़े आयोन – उसकी आँखों में करुणा और भविष्य के प्रति अविश्वास का भाव साफ झलक रहा है।

...और यह बच्चा तो बिल्कुल डरा हुआ मालूम देता है ।
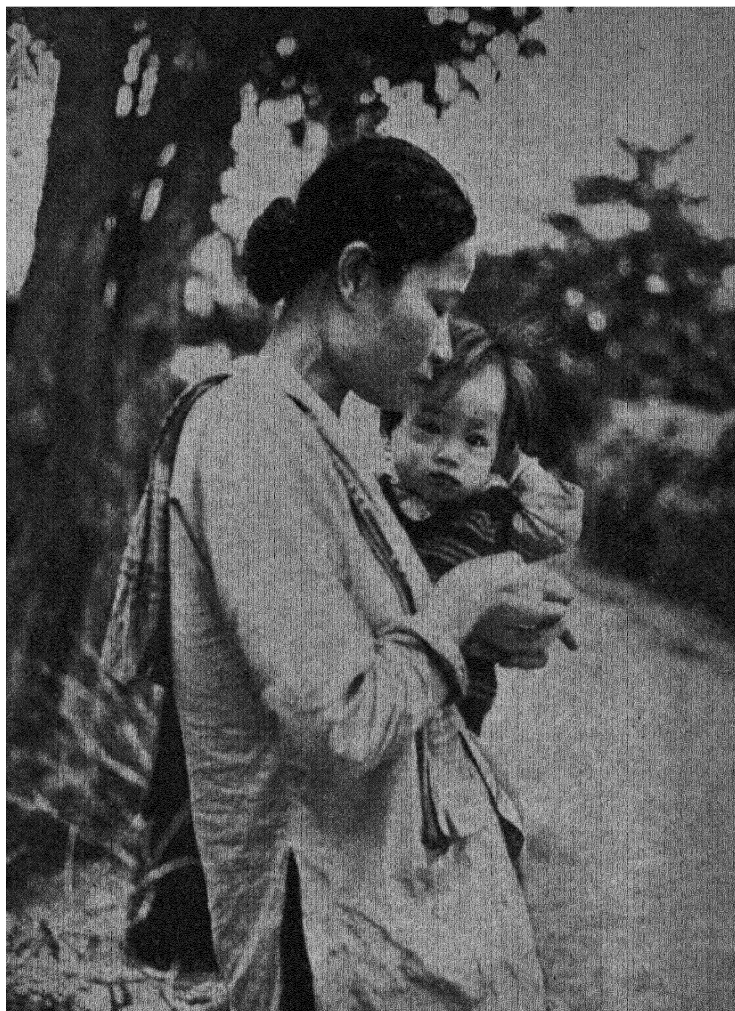
अमरीकी छात्रों द्वारा भेजा गया 'स्वेटर' पहने एक बच्चा अपनी माँ के साथ।
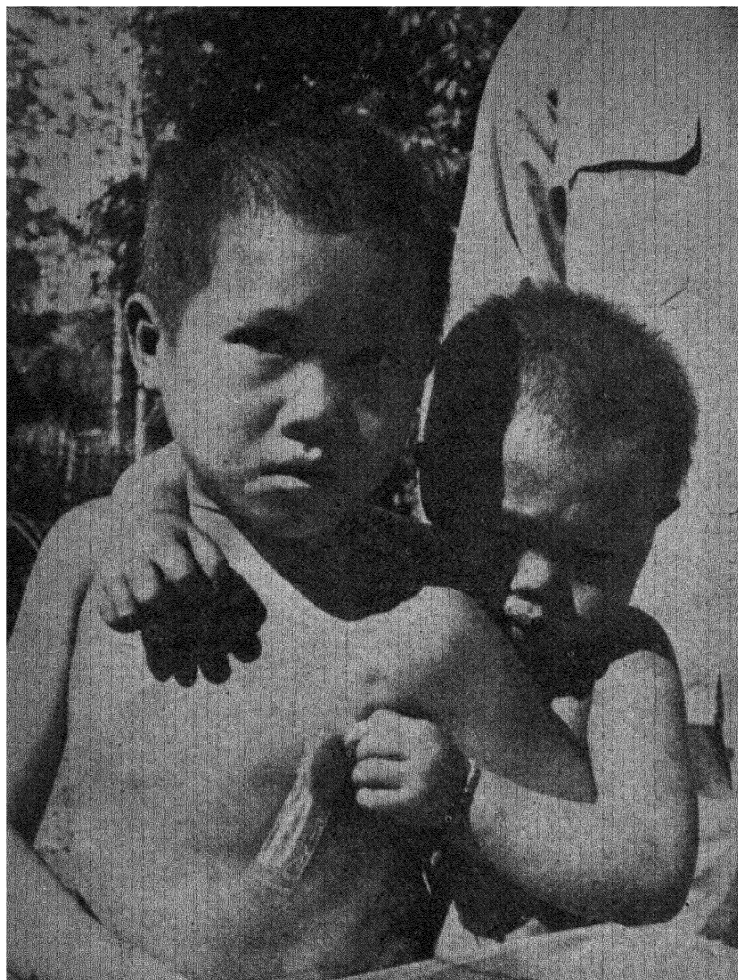
" यह मेरा भाई है!" केश और त्वचा के रोगों से पीड़ित ये बच्चे इस बात के प्रमाण हैं कि रोग का शासन सारे संसार में है।

अमरीकी मित्रों द्वारा भेजी गयी चूसने की मिठाईयों का बच्चे हार्दिक स्वागत कर रहे है।

दाहिनी ओर उपर : लड़कियों की मुस्कान संसार भर में एक-सी मोहक है।

दाहिनी ओर नीचे : पीटर केसी अपने कुछ सदा उपस्थित प्रशंसकों के साथ ।
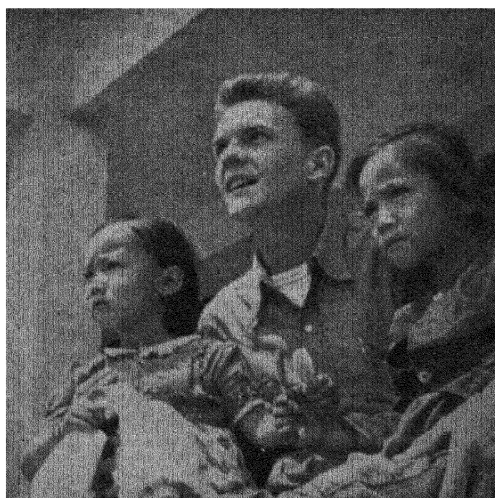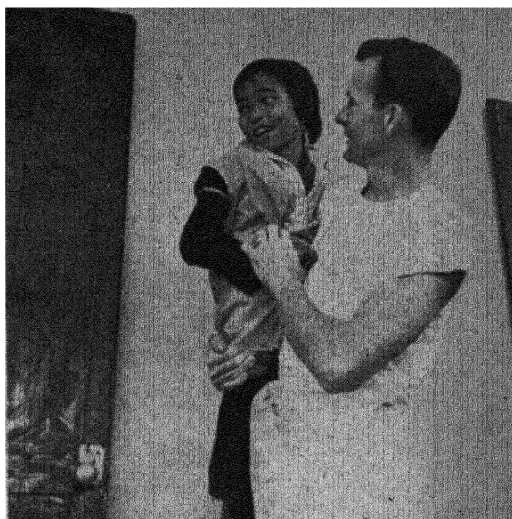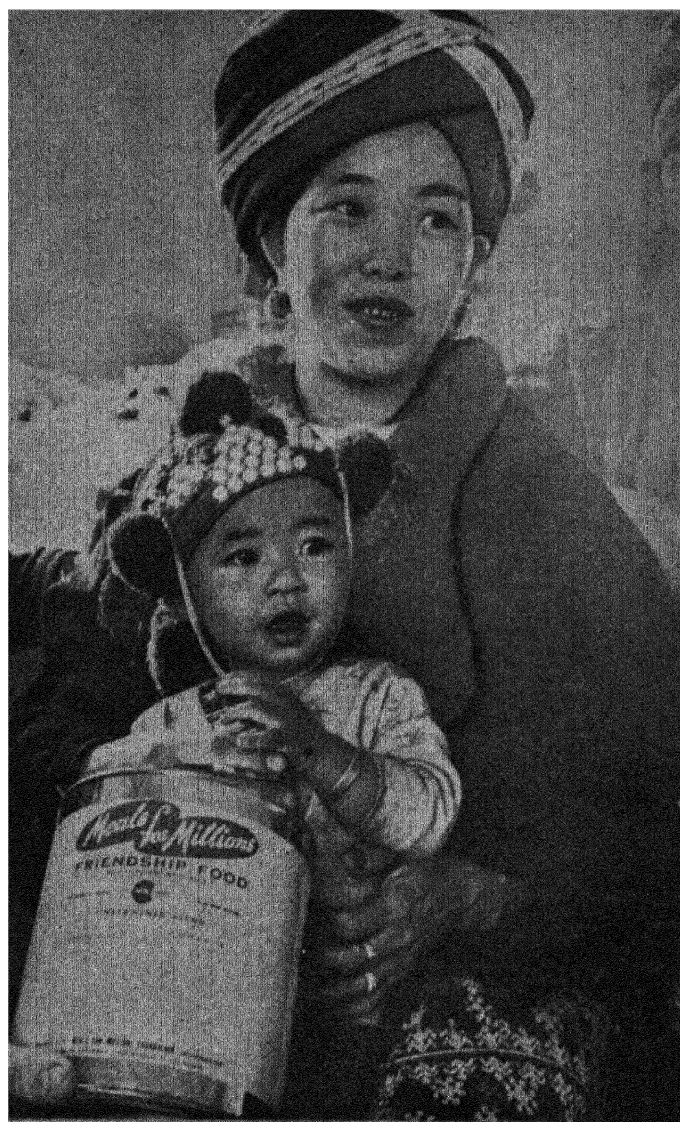
शृंगार के लिए पुराने सिक्कों की माला, तन ढंकने के लिए कोई-एक सूती कपड़ा और साथ देने के लिए सदा वर्तमान रोग।

माँ की ममता संसार भर में सर्वत्र बच्चों की रक्षा करती है – किसी भी देश की सीमा में वह बद्ध नहीं।

बांयी ओर :
'मील्स फार मिलियन्स' अर्थात् 'लाखोंके लिए भोजन' का डिब्बा, 'सस्टाजेन' सहित (इसे यहाँ 'या मी हेन्ह' याने पहाड़ी लोगों के लिए, ताकत की दवा कहा जाता)
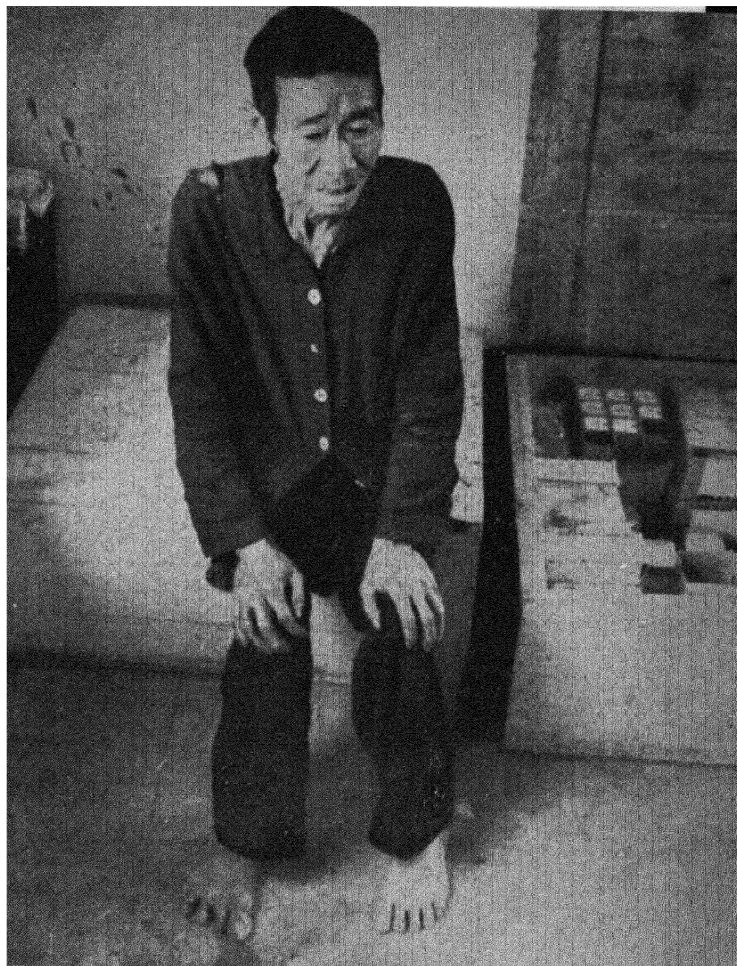
तपेदिक का रोगी 'ओल्ड जो'—मरीजों के आने के समय वह सदा अस्पताल में मौजूद मिलता और हमारा मरीज होने के साथ-साथ मित्र भी बन गया।

दाहि नीओर ऊपर : 'ट्रकोमा' रोग से अंधा हुआ एक लड़का—बीमारी के बहुत बढ़ जाने से उसका इलाज असम्भव था।

दाहिनी ओर नीचे : लेकिन इस बच्चे की आँख में 'टेरामाइसिन' डाली जा रही है और वह अंधा नहीं होगा।
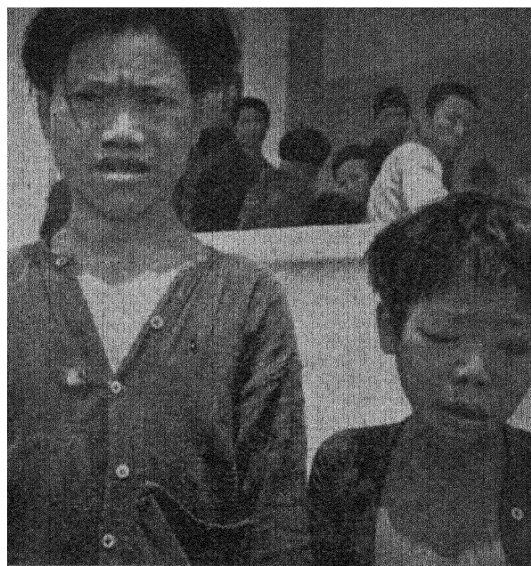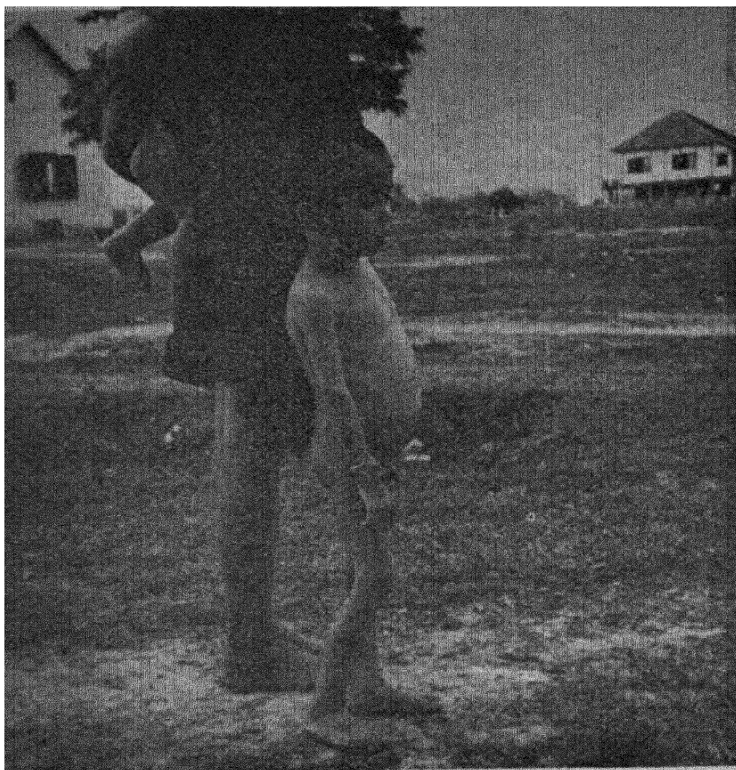
गर्दन का रोग, कीड़ों से कष्ट, अपर्याप्त पोषण और मृत्यु-भय को टालने के लिए कलाई पर बधा सूती डोरा।
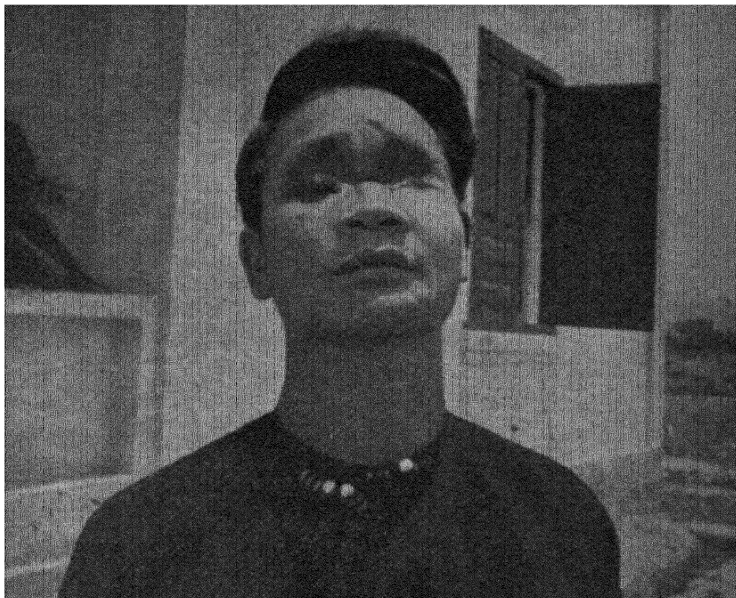
एक तरुण जिसका चेहरा जंगली सूअर द्वारा बुरी तरह नोच लिया गया था।
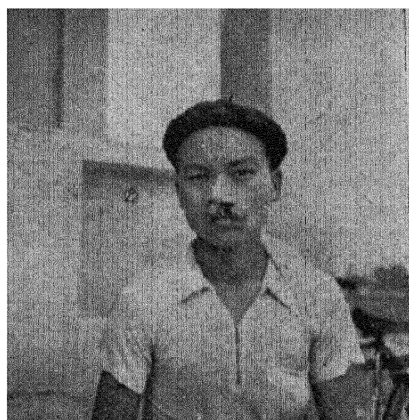
हमारा 'आपरेशन-घर'—स्थानीय 'इन्डो-चीनी डाक्टर' सहायक का काम कर रहे है। आपरेशन के वक्त बत्ती जलाने और रात को सिनेमा की मशीन चलाने का दुहरा काम हमारा छोटा-सा 'जनरेटर,' करता।

बायीं ओर : 'हेअर लिप'—सारे जंगली इलाके में यह खबर फैल गयी कि होठों के इस भयंकर दोष को गोरे डाक्टर ठीक कर सकते हैं। बात सच भी थी।
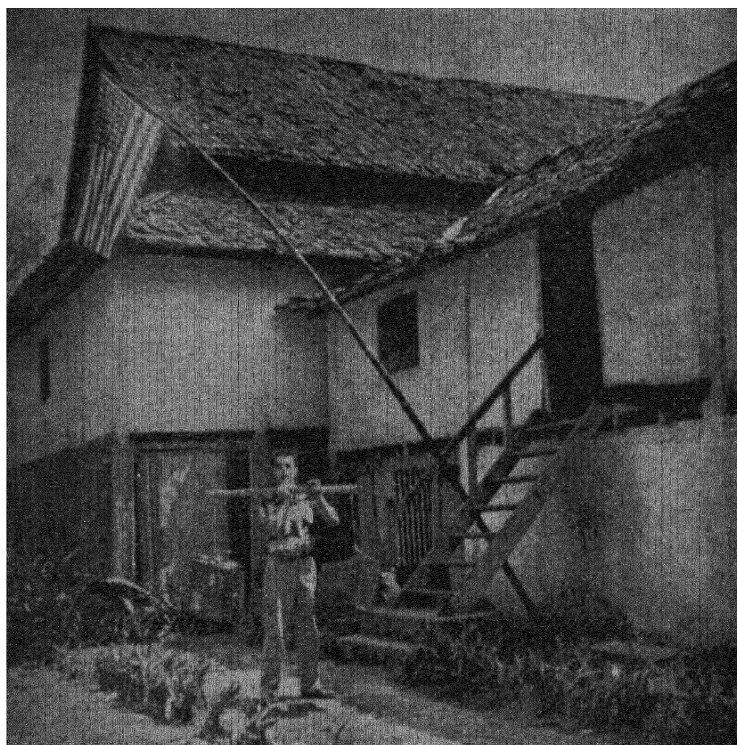
स्थानीय मजदूरों की तरह कंधे पर बांस के दोनों सिरों मे सामान लटकाये डेनी शेपर्ड नाम-था में हमारे मकान के सामने ।

नाम-था की नर्सों को 'केअर' के प्रसूति थैले दिये जाने से पूर्व — जान डिविट्री बड़े संतोष की मुद्रा में दिखायी दे रहा है और बाब वाटर्स पूर्वी ढंग से बैठने की कोशिश कर रहा है। पीछे की ओर जो कुत्ता खड़ा है, वह हमारे दल का सदस्य नहीं है।
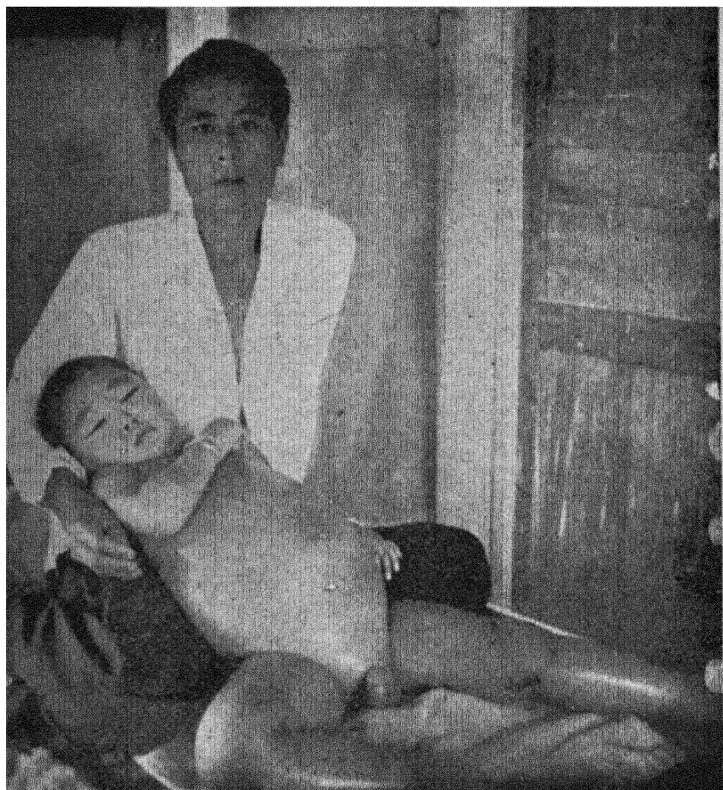
अपर्याप्त पोषण, एक ऐसा रोग जिसका सबसे बड़ा कारण अज्ञान है।

दाहिनी ओर : वही लड़का 'या मी हेन्ह' और 'डेका-वि-सोल' द्वारा कुछ हफ्तों तक इलाज किये जाने पर — चई को अब भी विश्वास नहीं हो रहा है।
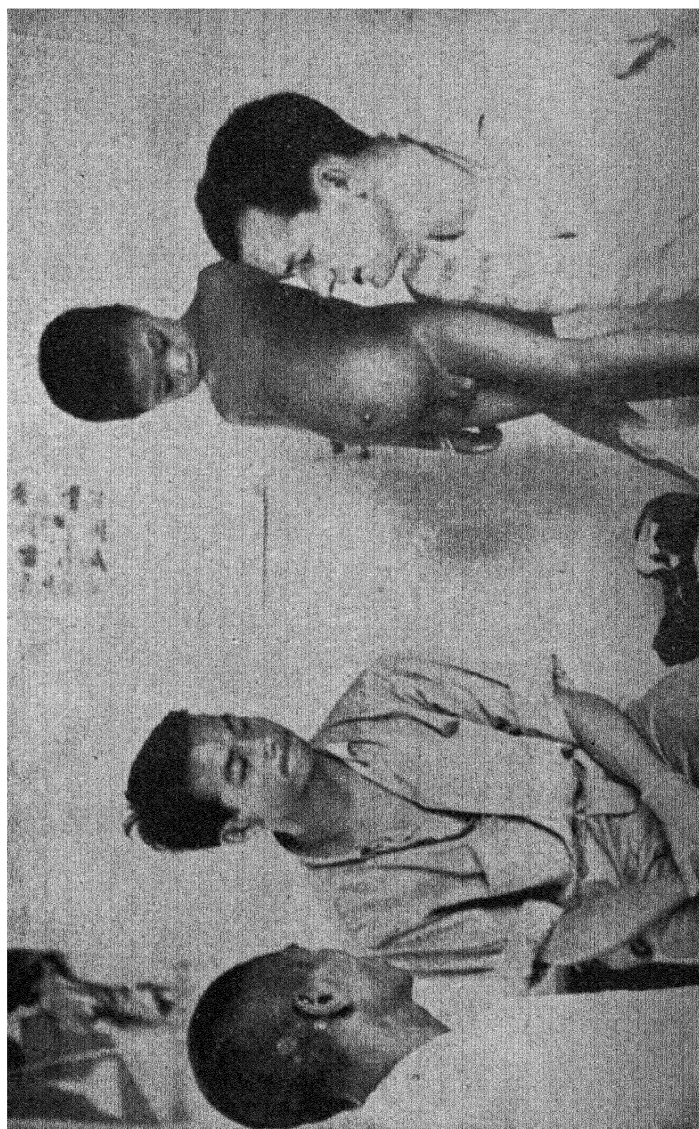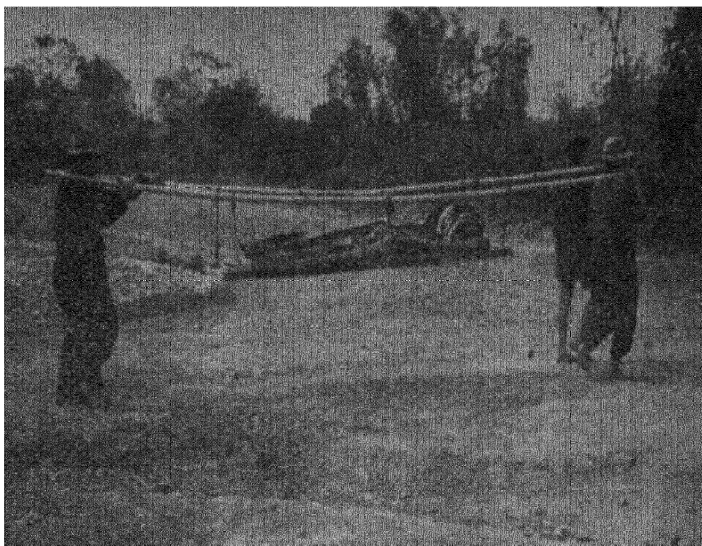
जंगली और पहाड़ी मार्गों से हो कर कई दिनों तक चलने के बाद ये लोग इस बच्चे को लाद कर अस्पताल लाये । उसकी बायीं टांग रोग-ग्रस्त थी और दाहिनी काम में न लायी जाने के कारण सिकुड़ कर बेकार हो गयी थी ।
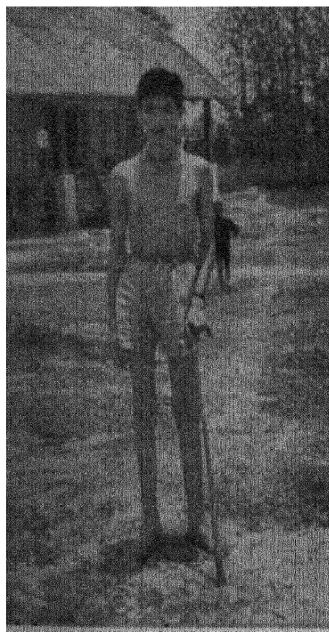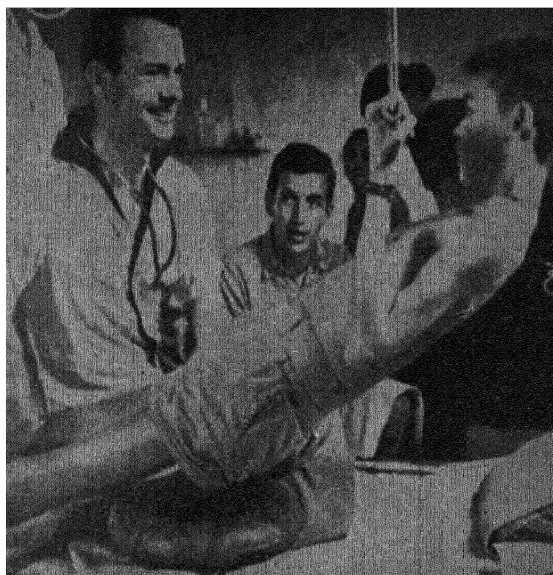
जान डिविट्री द्वारा तैयार किये गये कुछ विशेष उपकरणों वाले एक पलंग पर उसे लिटा दिया गया। उचित उपचार के बाद वह मामूली-सी कसरत करने लायक हो गया और दिन-दिन उसकी अवस्था में सुधार होने लगा। कुछ ही दिनों बाद वह चलने-फिरने लगा और फिर तो अस्पताल के कार्यों में हाथ बटाने लगा। अंत में वह पैदल चल कर ही अपने गाँव लौटा।

याओ जाति की एक सम्पन्न महिला।

दाहिनी ओर : नाम-था नदी में हमारी तीन 'पिरोग्यू' नावों का बेड़ा। नदी की तेज धार और डाकुओं का खतरा यहां सदा बना रहता है, लेकिन यही एक मार्ग ऐसा था जिससे हम शेष संसार से कटे हुए, नदी के तटवर्ती गांवों में डाक्टरी सहायता पहुंचा सके।
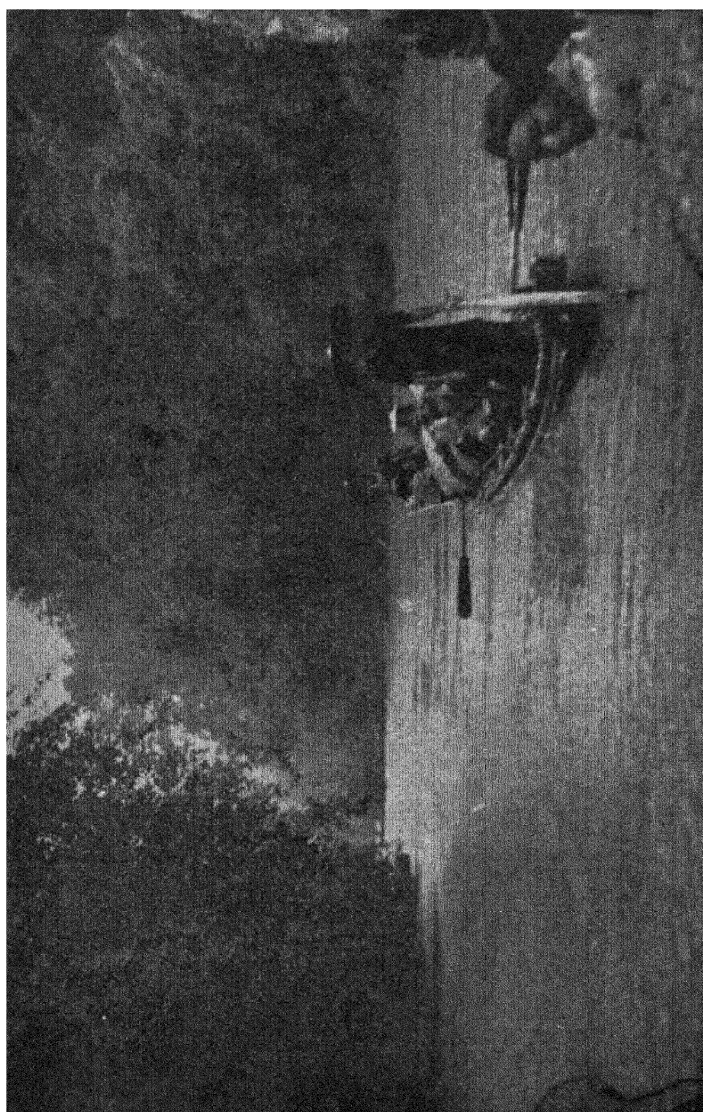
जान डिविट्री एक पहाड़ी कबीले के आदमी से बातचीत में संलग्न।
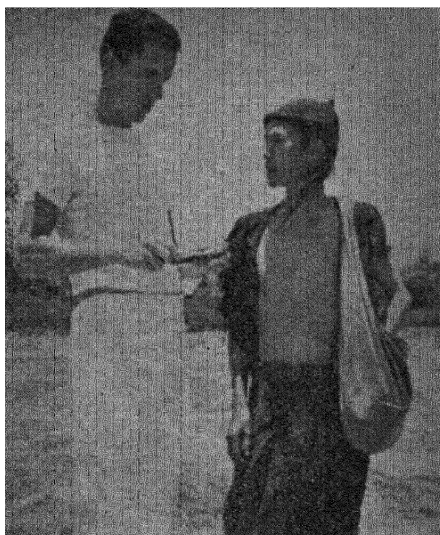
चीन की सीमा पर स्थित बान फू वान नामक पहाड़ी गाँव, जो देखने में तो बड़ा शान्त है, लेकिन है बिल्कुल कम्यूनिस्ट आतंक के द्वार पर।
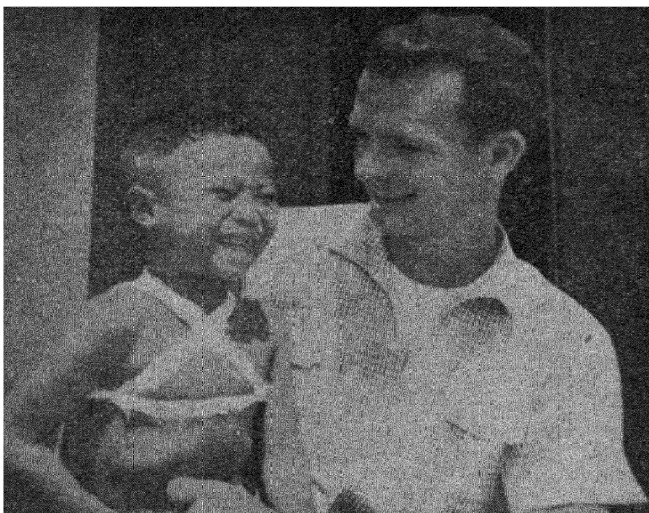
कई महीनों के उपचार के बाद आयोन बिल्कुल ही बदल गया।

डाक्टर के यहाँ जाना अमरीका या लाओस, कहीं भी एक पारिवारिक मामला है।

बाब वाटर्स एक बच्ची के हाथ पर पट्टी बांध रहा है, जिसे शांत और सुशील रहने पर एक नयी पोशाक और गले में बांधने की पट्टी इनाम में मिली है। कोई इससे पूछे कि अमरीकी क्या दानव जैसे होते हैं!

लाओ लोगों के जीवन में अंध-विश्वास और परम्पराओं की जितनी प्रचुरता बालक के जन्म के सम्बंध में देखने में आती है, उतनी और किसी अवसर पर नहीं। वास्तव में यह लाओ लोगों की विशेषता नहीं है: सभी आदिम जातियों में साधारणतया बालक के जन्म पर जादू-टोनों और अजीब-अजीब रीति-रिवाजों की भरमार रहती है। ऐसी परिस्थिति में प्रसूति के सम्बंध में किसी प्रकार की आधुनिक प्रगति के लिए स्थान बनाना बहुत कठिन हो जाता है।

लाओ लोगों का पंचांग पश्चिमी पंचांग से भिन्न होता है। अतः वहाँ गर्भिणी स्त्री प्रसव का जो आनुमानिक समय बताती थी, उस पर मैं विश्वास नहीं कर पाता था। शायद ही कभी किसी को प्रसव के समय का ठीक अन्दाज होता था। लाओस में तो लोग मानते हैं कि "फल जब पक जायगा, तब आप ही टपक पड़ेगा।"

मेरे सभी साथी दाई के काम में पारंगत हो गये थे; परन्तु यह विवादास्पद विषय है कि यह चीज उनके किसी काम की भी थी। मेरा विश्वास है कि अवसर आ जाने पर नाविक बेकर भी प्रसूति करवा सकता था। मेरे नये साथियों के आगमन के एक सप्ताह बाद ही मुझे कुछ दिनों के लिए उन्हें 'नाम-था' में अकेला छोड़ कर बाहर जाना पड़ा। पीट उन्हें उनका काम सिखाया करता था। वियेनियेन में मुझे उसका तार मिला – 'सब ठीक है: कल की रात्रि प्रसूति में दोनों: बाब के लड़का और मेरे लड़की।'

जान कहता था कि प्रसूति के अवसर पर वह वैसे ही घबराया हुआ रहता था। उस पर गाँव के बुजुर्गों का ढोल बजाना तो उसे पागल ही कर देता था। एक प्रसूति में बाब को बारह घंटे तक प्रतीक्षा करनी पड़ी थी, परन्तु यह कुछ अधिक नहीं था: क्योंकि स्त्री ने तो नौ महीने प्रतीक्षा की थी।

जब हम लोगों को रात के समय बुलावा आता था, तो हम खनिकों के लैम्प अपने माथों पर बाँध कर साइकिलों से गाँव में पहुँचते थे। ये लैम्प आठ-आठ बैटरियों से जलते थे। इन बैटरियों को एक डिब्बे में रख कर हम अपनी जेब में रख लेते थे। लैम्प बिजली के तार से बैटरियों से जुड़ा रहता था। उसकी रोशनी तेज होती थी और हमें रास्ता दिखाती थी। प्रसूति के समय भी हम लैम्प माथे से बाँधे रहते थे, जिससे प्रकाश की व्यवस्था भी हो जाती थी और हाथ दूसरे काम करने को स्वतंत्र रहते थे। आपस में हम लोगों की आँखें कभी-कभी एक-दूसरे के लैम्प से चौंधिया जाती थीं।

लाओस में प्रसूति के विषय में पूर्वात्य 'संकोचशीलता' देखने में आती थी। ईश्वर ने उसे जितना स्वाभाविक बनाया है, उतनी ही संकोचशीलता वहाँ के लोगों में भी है, परन्तु जितनी अमरीका में पायी जाती है उससे बहुत कम। एक ओर प्रसूति होती रहती है और दूसरी ओर घर के लोग रोजमर्रा के कामों में लगे रहते हैं। वे घर में आते-जाते हैं, बच्चों के लिए शोरवा बनाते हैं, सुपारियाँ खाते हैं, चाय पीते हैं और प्रसूता के प्रति अपनी सद्भावना प्रकट करने के लिए रह-रह कर विलाप-सा करते हैं। परिवार के अन्य सदस्य निकट तो नहीं आते थे, परन्तु उनकी उपस्थिति का हमें भान रहता था तथा उनके शरीर की गर्मी का हम अनुभव करते थे।

लाओस में कितने गर्भ प्रसूति के पहले ही अकाल मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं, इसके आँकड़े जमा ही नहीं किये गये हैं। परन्तु मेरा अनुमान यह है कि पचास प्रतिशत गर्भ परिपक्वता प्राप्त ही नहीं करते, सौ गर्भों में से पचास बच्चे जीवित पैदा होते हैं और इन पचास में से बीस शिशु-अवस्था में ही चेचक, हैजे, अपुष्टिकर भोजन, कुकुर खाँसी या न्यूमोनिया के ग्रास हो जाते हैं। बचे तीस; इनमें से दस बचपन में मलेरिया, चोट के घावों और पेचिश से काल के गाल में चले जाते हैं। शेष बीस पूरी आयु पाते हैं।

गर्भिणी स्त्री को कई नियमों का पालन करना पड़ता है। इनमें कुछ तो उचित हैं और शेष निरर्थक। उदाहरणार्थ, गर्भिणी स्त्री केले, शहद और बैंगन नहीं खा सकती। गर्भाधान के समय से ही वह न आभूषण धारण कर सकती है, न प्रेम-सभाओं या बाची अनुष्ठानों या लाम वोंग समारोहों में भाग ले सकती है। ज़ीने की सबसे ऊपर की सीढ़ी पर बैठना उसके लिए वर्जित होता है। (यह नियम मूर्खता का नहीं है; क्योंकि घरों में प्रवेश करने के लिए बाँस की सीढ़ियाँ होती हैं जो लगभग सीधी खड़ी रहती हैं। उनसे मैं गिर चुका हूँ।) हर रोज़ नदी में नहाते समय गर्भिणी स्त्री को, यदि ईल मछलियाँ मिल जायें तो उनसे बाल साफ़ करने पड़ते हैं। प्रसूति में आसानी हो, इसके लिए यह किया जाता है।

लाओ स्त्रियों के घाघरों के निचले छोर पर सुन्दर क़सीदेवाली चौड़ी पट्टी रहती है; कभी-कभी इसमें सोने और चाँदी के तारों से भी क़सीदा किया जाता है। बाक़ी घाघरा गोल नल जैसा होता है। गर्भिणी स्त्री के लिए यह अनिवार्य होता है कि वह अपने घाघरे को सूखने के लिए हमेशा सीधा लटकाये। उनका विश्वास है कि यदि घाघरा उलटा लटका दिया, तो बालक भी उलटी स्थिति में

जन्म लेता है। बौद्ध स्त्रियों को गर्भावस्था में कुछ प्रार्थनाएँ करनी पड़ती हैं और गर्भ धारण करने से स्त्रियों को उनके सामान्य काम-धन्धे से छुट्टी नहीं मिलती।

दिन भर धान का छिलका उतारा है, या बुनाई की है या खेतों मे काम किया है और शाम को बालक को जन्म दिया है—ऐसे प्रसव भी मैंने करवाये हैं। यह चीज़ है अच्छी। मेहनत करने से बच्चे का शरीर छोटा रहता है, और गर्भिणी बराबर अपने पाँवों पर खड़ी रहती है, इससे बच्चे का सिर नीचे की ओर रहता है। उकड़ूँ बैठने की आदत से एशियाई लोगों की कटि और नितम्बों की माँसपेशियाँ पुष्ट होती हैं, जिससे प्रसव में आसानी होती है। आदिम स्त्रियाँ अन्य जातियों की अपेक्षा अधिक आसानी से बच्चों को जन्म देती हैं। यहाँ विभिन्न जातियों का सम्मिश्रण भी नहीं हुआ है। यहाँ स्थिति यह नहीं है कि स्त्री एक जाति की है, उसकी माँ दूसरी जाति की थी, उसका पति तीसरी ही जाति का है और पति के पूर्वज किसी और चौथी जाति के थे। पुरुष भी लाओ है और स्त्री भी लाओ; अतः गर्भ के बच्चे की गढ़न शरीर के उस भाग के पूर्णतया अनुरूप होती है जिससे प्रसव में उसे गुज़रना पड़ता है।

यह प्रकट हो जाने पर कि प्रसव का समय आ गया है, भावी पिता अपने परिवार के सब सदस्यों को सहायता के लिए अपने घर बुला लाता है। बालक का जन्म व्यक्ति का निजी मामला नहीं, पारिवारिक मामला माना जाता है। गर्भिणी को दक्षिण में धार्मिक राजधानी लुआंग पारबंग की ओर मुँह करके घर के एक कोने में लिटा दिया जाता है। कोई बुढ़िया दाई का काम करती है। उसके घर में प्रवेश करते ही उसे भेंट-स्वरूप चाँदी के एक छोटे-से कटोरे के साथ तीन फल दिये जाते हैं। बाद में जब हम उन साधिकाओं के सहायक बन गये तो फल हमें मिलने लगे।

दाई आकर सबसे पहले गर्भिणी के पेट और मस्तक पर सुपारी का तेल, सुगंधियाँ, नारंगी के छिलके व दूसरी 'औषधियाँ' मलती थी, ताकि प्रसव में सुविधा हो। पास-पड़ोस की स्त्रियाँ आकर घर के एक हिस्से में बैठ जाती थीं और बेचारी गर्भिणी की सहायता करने के उद्देश्य से बातें करने के बीच-बीच में कभी विलाप-सा करती जाती थीं, कभी कराहती थीं और कभी लम्बी साँसें भरती थीं।

पुरुष घर के बाहर आग जला कर उसके चारों ओर बैठ जाते थे। घर के अन्दर केवल गाँव के बुज़ुर्ग जाते थे। वे एक कोने में वाद्य-यंत्र लेकर और मोमबत्तियाँ जलाकर बैठ जाते थे। जब तक प्रसव होता रहता था, तब तक

अपने ढोल बजाते रहते थे। भीड़ के मारे झोंपड़ी में घुटन होने लगती थी। लोगों के शरीरों से पसीने की बदबू उठती रहती थी। आग जलती रहती थी जिसका धुआँ सारे घर में भर जाता था। अतः बालक को जन्मते ही सबसे पहले जिस प्राणवायु (आक्सीजन गैस) की आवश्यकता होती थी, वह उसे बहुत कम मिल पाती थी। मित्रों और सम्बंधियों की सद्भावनाएँ माता के कष्ट में वृद्धि करती थीं।

गर्भिणी एक छोटे-से स्टूल पर बैठती थी और छत से एक रस्सा लटका रहता था उसे पकड़ लेती थी। इस तरह बैठ कर वह बालक को जन्म देती थी। इस बैठक में बालक का सिर दबता था यह किसी की समझ में नहीं आता था।

गर्भिणी मुँह से गहरे साँस लेने का प्रयत्न करती थी; क्योंकि उसे बताया जाता था कि इस प्रक्रिया से गर्भ के बालक को हवा मिल सकेगी। इसका वैज्ञानिक कारण चाहे जैसा भी रहा हो, परन्तु यह प्रक्रिया लाभप्रद थी, क्योंकि घर में रोने-कराहनेवालों की जो भीड़ लगी रहती थी उसके कारण झोंपड़ी में हवा कोशिश करके ही प्राप्त की जा सकती थी।

जब हमें बुलाया जाता था, तो हम जाते ही पहले घर के बाहर बैठे हुए पुरुषों का अभिवादन करके दो–एक मिनट उनसे बातें करते थे। फिर अन्दर जाकर भीड़ को छँटवाते थे। परिवार के लगभग पन्द्रह निकटतम सदस्यों को ही हम घर के अन्दर रहने देते थे। इससे ताक-झाँक करनेवालों की संख्या कम-से-कम रह जाती थी और हमें कुछ आसानी हो जाती थी।

कोने में बैठ कर ढोल बजानेवालों को झुक कर प्रणाम करके हम गर्भिणी के पास पहुँचते थे। धरती पर लेट कर प्रसव करवाना तो मेरे लिए असम्भव था। अतः हम स्त्री को लिटाने की कोशिश करते थे। इससे हमेशा भय और व्याकुलता छा जाती थी, परन्तु दाई का काम करनेवाली बूढ़ी स्त्री की स्वीकृति मिलते ही यह कठिनाई दूर हो जाती थी। फिर कठिनाई यह आती थी कि गर्भिणी का सिर किस दिशा में रखा जाय, घर में किस तरफ़ उसे लिटाया जाय और अधिक सम्बंधियों को उपस्थित रखा जाय या नहीं?

चई बड़ी टार्च लेकर चटाई के पैताने खड़ा हो जाता था और एडमिरल स्टम्प की तरह हुक्म देता रहता था। लोग उनका पालन करते थे। हम परिस्थिति का पता लगाने के लिए स्त्री की जाँच करते थे। स्त्री दो-तीन घाघरे पहने रहती थी। कुछ क्षण उनसे ही उलझने में बीत जाते थे। यह पता लगने पर कि हालत ठीक थी और प्रसव में ज्यादा समय बाक़ी नहीं था, मैं बुढ़िया दाई से सलाह करता

था। किसी भी रूप में इन दाइयों को नाराज़ कर देना बहुत ख़तरनाक हो सकता था। समाज में उनका स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण होता था और यदि हम अपनी किसी कार्रवाई से उनका अपमान कर देते, तो हम पर मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ता।

मैं बताता था कि बालक की अब स्थिति क्या थी और गर्भाशय का मुख कितना खुला था। चई हमेशा यह समझाता था कि अमरीका में लेट कर ही प्रसव करने की रीति है और यह रीति कम कष्टसाध्य है। दरअसल वह कम कष्टसाध्य इसलिए होती थी कि मैं गर्भिणी को डेमेरोल की गोली खिला देता था। पेनिसिलिन की गोलियाँ, विटामिन और लौह भी उसे देता था।

प्रसव के पहले जो समय हमें मिलता, उसका भी मैं फ़ायदा उठाता था। उसमें मैं घर की औरतों को साफ़-सफ़ाई और निरापद रूप से प्रसव करवाने की महत्त्वपूर्ण बातें समझाता था। परंतु इसके पहले एक और रीति निभाई जाती थी। गर्भाशय में जिस जगह बच्चे का सिर रहता था, उस हिस्से के ऊपर बूढ़ी दाई ज़मीन से कुछ मिट्टी उठा कर डालती थी। बालक में पृथ्वी की आत्माओं का समावेश कराना इस रीति का उद्देश्य है; उस पवित्र पृथ्वी की आत्माओं का, जिसमें उनके पूर्वजों की अस्थियाँ समाहित थीं, जिसमें उन आत्माओं का निवास था जो बालक के जीवन में प्रवेश करनेवाली थीं। मैं इस रीति का विरोध नहीं करता था: यदि करता भी तो व्यर्थ होता। मैं यही कहता था कि वे मिट्टी ज़रा जल्दी ही डाल दें। रीति पूरी हो जाने के बाद मैं स्त्री को साबुन और पानी से खूब साफ़ करता था: पानी डाल-डाल कर साथ ही बोलता भी जाता था। मैं कहता था कि सदियों की मिट्टी का महत्त्व ज्यादा था, इसलिए वह पहले डाली जाती थी। उसके बाद मेरा साबुन।

हमारे 'केअर' के थैलों में एक बंडल में बच्चे के लिए मलमल का एक तिकोना टुकड़ा, कुछ जाली और नाल बाँधने की डोरी रहती थी। इन्हें हम यथासंभव गन्दगी और कृमि आदि से बचा कर निकालते थे। साथ ही बताते जाते थे कि हम क्या कर रहे थे और यह पूछते थे कि बूढ़ी दाई हमारे अमरीकी तरीक़े को सहमति प्रदान करती थी या नहीं। वह गम्भीरता से सिर हिला कर स्वीकृति जताती थी। कभी-कभी हम दाई के हाथ अच्छी तरह धुलवा कर उससे सहायता भी लेते थे। (सुपारियाँ भी उसके मुँह से थुकवा देते थे।) उधर कोने में बैठे हुए मित्र और सम्बंधी ढोल बजाते रहते थे। आग जलती रहती थी, जिसका धुआँ घुटता रहता था और गन्ध तीव्र से तीव्रतर होती जाती थी। परन्तु तब तक हमारे शरीर से भी बदबू उठने लगती थी, अतः 'बाउ पिन्ह यान्ह।'

दवा देकर बेहोश करने का उपाय तो वहाँ किसी ने सुना ही नहीं था। गर्भिणी को थोड़ी-सी चावल की देशी शराब पिलायी जाती थी और मैं उसमें हल्की-सी कोई नशीली चीज़ मिला देता था। गर्भिणी के नथुनों में कई जड़ी-बूटियाँ और पत्ते लगाये जाते थे; क्योंकि उन लोगों का विश्वास था कि छींकें आने से प्रसव में सहायता मिलती है। जो भी हो, इससे तकलीफ़ तो निश्चय ही बढ़ती है, परन्तु अजीब बात यह है कि इन जड़ी-बूटियों का कुछ लाभ भी है। इस सारी कार्रवाई के दौरान में भावी पिता अपनी पत्नी के चेहरे को अपने हाथों में पकड़े हुए चटाई के सिरहाने बैठा रहता था और उसके कान में फूँक मारता जाता था। बच्चे को हवा की जरूरत जो होती है।

प्रसव-पीड़ा के अन्तिम क्षणों में झोंपड़ी की सब औरतें (और मैं भी) 'बिंग-बिंग बिंग' चिल्लाने लगती थीं। गार्भिणी भी 'बिंग-बिंग' करती हुई अपना सारा जोर लगाती थी। बच्चा पैदा हो जाने पर परिवार, डाक्टर, पिता और हाँ, माँ भी चैन की साँस लेती थी।

नवजात शिशु तुरन्त बूढ़ी दाई को दे दिया जाता था जो मलमल का टुकड़ा लिये तैयार खड़ी रहती थी। नाल पर हम 'हेमोस्टेट' क्लिप लगा रहने देते थे।

लाओस के लोग समझते हैं कि बालक का जन्म होने के साथ प्रसूति पूरी हो गयी। माँ को साफ़ घाघरा पहना कर बिस्तर पर लिटा दिया जाता है। उसके गर्भाशय से नाल गिरने के प्रति कोई ध्यान नहीं देता। अतः अक्सर रक्त-स्राव होने लगता था। हम उन्हें इस बारे में उनकी भूल बताते थे और नाल गिराने का सही 'अमरीकी' तरीक़ा उन्हें बताते थे। फिर लाओ रीति के अनुसार हम बाँस मँगवाते थे। नाल को खोखले बाँस के अन्दर डाल देते थे और बाद में बाँस का यह टुकड़ा घर की बाहरी सीढ़ियों के नीचे धरती में गाड़ दिया जाता था। इसका उद्देश्य होता है कि नवजात शिशु के और भाई-बहनें हों। माँ की देख-भाल तो पूरी हो चुकी होती थी; अतः अब बच्चे पर ध्यान दिया जाता था।

वहाँ रिवाज था कि बच्चे का नाल गाँव का कोई बड़ा-बूढ़ा बाँस के दो धारदार टुकड़ों से काटे। मैं इस पर बिलकुल आपत्ति नहीं करता था। अब तक हम उनके तौर-तरीक़े जान गये थे। मैं नाल को पहले काट कर उसके सिरे को कृमि-विरहित डोरे से बाँध देता था। उस सिरे के आगे बड़े-बूढ़े चाहे जो कुछ करते उससे कुछ बिगड़ नहीं सकता था। वे नाल को काट कर उसके मुँह में ख भरते थे। मेरे काटे हुए कृमि-विरहित सिरे से यह सिरा दूर होता था।

माँ और बच्चे की कलाइयों पर काले, लाल और सफेद डोरे बाँधे जाते थे तथा कुछ निश्चित आत्माओं का आशीर्वाद देने के लिए आह्वान किया जाता था।

जन्म के सम्बंध में और भी कुछ संस्कार सम्पन्न किये जाते थे। बच्चे के दोनों कानों के पीछे चावल और सूअर के माँस की गोलियाँ रखी जाती थीं, ताकि जीवन में वह कभी भूखा न रहे। पिता बालक को अपने 'सारंग' जैसे तहमद में लपेट लेता था। लड़का हुआ तो पिता उस कसे-कसाए बंडल में परिश्रम की प्रतीक कोई वस्तु रखता था। उसकी कामना होती थी कि बालक साहसी हो, अतः एक चाकू भी वह उसमें रखता था। जो लोग अपने लड़के को अध्ययनशील देखना चाहते थे, वे बंडल में लिखने की तूलिका रखते थे; शिकारी बनाने की इच्छा होती, तो तीर-कमान रखते थे। यदि लड़की जन्म लेती थी तो उसके बंडल में छोटा-सा कद्दू या करघे की कोई चीज़ रखी जाती थी। इसके बाद सबको चावल की शराब दी जाती थी और सब लोग खुशियाँ मनाते थे। पति हमें चार नारियल पारिश्रमिक के रूप में देता था। उनमें से दो हम अपनी 'सहायक' दाई को दे देते थे। पति भी अब उतना ही निश्चिंत हो चुका होता था जितनी कि उसकी पत्नी। परन्तु वह दिखता ऐसा था मानो वह भी शक्तिहीन हो गया हो। मेरा ख़याल है कि यह ढोंग होता था, उसका भी और उसकी पत्नी का भी। कहते हैं कि बर्मा में कुछ जातियों में पति को भी अपनी पत्नी के साथ वेदना झेलनी पड़ती है। प्रसव के समय उसे घर के बाहर उलटा लटका दिया जाता है।

अध्याय ७

पीड़ा की आत्मीयता

रोज़ सुबह अस्पताल जाते हुए मुझे लगता था मानों मैं किसी बीते ज़माने की उस रोग-ग्रस्त दुनिया में जा रहा हूँ, जिसका अस्तित्व मेरे जन्म के पूर्व ही मिट चुका था।

कैसी विडम्बना थी! मुझे हमेशा अपने मेडिकल कालेज के प्रोफ़ेसरों का यह कथन याद आता था—"सज्जनो, अब हम कोढ़ को बाइबल-युग का रोग मान सकते हैं।......डाक्टरी की अपनी प्रैक्टिस में छालों, पेचिश और कीड़ों के रोग नागरिक-जीवन में शायद कभी आपके देखने में नहीं आयेंगे।......हम वह

सकते हैं कि टीकों के आधुनिक उपचार के आगमन के साथ डिप्थीरिया, टाइफ़ाइड बुख़ार, चेचक की विभीषिका समाप्त हो गयी है। ... ..."

लेकिन यहाँ मेरे अस्पताल के कमरे में ही ये सब रोग मौजूद हैं और इनके अलावा और भी भयंकर रोग हमारी नित्य-प्रति की समस्या बने हुए हैं। यह सही है कि यह बीसवीं सदी का एशिया है। लेकिन पश्चिमवासियों की बीसवीं सदी इससे भिन्न है।

'नाम-था' में रोगियों की जाँच वाँग वियेंग की अपेक्षा अधिक परिश्रम-साध्य होती थी। रोगी भी अधिक होते थे। और उनके रोग कई तरह के और ज्यादा ख़तरनाक होते थे। अज्ञान और अंध-विश्वास भी यहाँ अधिक फैले हुए थे। चोट-फेंट के ज़ख्म अक्सर इलाज न होने या ग़लत इलाज होने के कारण भयंकर रूप ले लेने के बाद हमारे सामने आते थे, जिसके फलस्वरूप शल्य-चिकित्सा हमारी चौबीसों घंटे की मुसीबत बन गयी थी। रोगों के लक्षण अक्सर आँख से देखने मात्र से प्रकट हो जाते थे। गर्भिणी स्त्रियाँ, जिनमें अधिकांश स्वयं क्षय से पीड़ित होती थीं, चेचक के फफोलों या फोड़े-फुन्सियों से भरे हुए छोटे-छोटे बालकों को लेकर आतीं थीं। छाले या बढ़ी हुई तिल्ली के शिकार या कोढ़ से गलते हुए शरीर लेकर ये रोगी डगमगाते क़दमों से हमारे सामने पहुँचते थे। सूखी हुई खपच्चियों जैसी बाँहें और टाँगें, माँस-हीन चेहरे और मटके-से फूले हुए पेटवाले बालक तो हमेशा ही बने रहते थे।

भयावह अज्ञान से पैदा होनेवाली स्वास्थ्य-सम्बंधी समस्याओं का हमें अक्सर सामना करना पड़ता था। रोग इन लोगों के जीवन में इस तरह घर कर गया है कि वे कई रोगों को जीवन का ही एक आवश्यक अंग मानने लगे हैं। कई प्रकार के ज्वरों को वे सामान्य स्वास्थ्य का अंग मानते हैं, जैसे मलेरिया को। मलेरिया का आक्रमण हो जाने पर वे उससे छुटकारा पाने का प्रयत्न नहीं करते; फलस्वरूप धीरे-धीरे उनके जिगर और तिल्ली बढ़ते जाते हैं और उनके शरीर धूप में पड़े हुए पत्थरों की तरह तपने लगते हैं।

प्राकृतिक पुष्टिकर पदार्थों के उपलब्ध होने के उपरान्त भी ये लोग इतने ज़माने से लगभग भुखमरी की परिस्थितियों में जीवन-निर्वाह कर रहे हैं कि उनके शरीर में विटामिन, स्निग्ध पदार्थ और प्रोटीन जमा करने की शक्ति ही नहीं रही है। कुछ दिनों की बीमारी भी उनकी काया का संतुलन बुरी तरह बिगाड़ देती है।

हमने उन्हें विटामिनों से भर दिया; 'लाखों को भोजन' का नैसर्गिक उपहार, बहुगुणी भोजन भी उन्हें खूब दिया। मेरी अक्सर इच्छा होती थी कि स्वास्थ्य के

सिद्धान्तों के विषय में वैसी कक्षाएँ शुरू करूँ जैसी कि वॅाग वियेंग में हम सफलतापूर्वक चला चुके थे, परन्तु 'नाम-था' में समय नहीं मिलता था। कभी-कभी लगता था कि हर दो रोगियों में एक की किसी-न-किसी रूप में शल्य-चिकित्सा करनी होगी। मैं बहुत व्यस्त रहता था।

हम अपनी कोशिश में कोई कसर नहीं रखते थे। रोगियों को देखने का समय ही एक प्रकार से शिक्षा का समय बन गया; हर रोगी किसी-न-किसी विषय का पाठ पढ़ाने का काम देता था। मैं ठहरा आयरलैंड का मूल निवासी, सो मेरी ज़बान बिना रुके चलती रहती थी; मैं घंटों बोलता था लेकिन यथासम्भव सरल-सहज भाषा में। चई और सी, मैगी और बूढ़ा जो, नर्स और मज़दूर सब अपनी-अपनी ज़बान में उसे दोहराते चले जाते थे। इस तरह हम तमाम उपस्थित स्त्री-पुरुषों को यह समझाने की कोशिश करते थे कि अमुक रोगी की तकलीफ़ का कारण क्या था और उस तकलीफ़ से कैसे बचा जा सकता था।

लोग आँखें फाड़ कर और कान लगा कर सुनते। उनमें जानकारी हासिल करने की उत्सुकता थी। मैं इसे व्यापक सत्य मानता हूँ कि संसार का कोई भी आदमी बीमार पड़ना और दुख उठाना नहीं चाहता। यदि थोड़ी-सी सुविधा भी मिले, तो पिछड़ी से पिछड़ी जाति के लोग भी स्वास्थ्य और शक्ति की रक्षा के सीधे-सादे नियमों का अवश्य पालन करेंगे। यह सत्य मुझे उनके चेहरों पर स्पष्ट दिखाई देता था।

अतः मेरा खयाल है कि हमारी इस 'तालीम' से कुछ फ़ायदा हुआ। यह मानना पड़ेगा कि इतनी सारी भाषाओं की गड़बड़ के कारण रोगियों को देखने का वह वक्त बहुत सख्त गुज़रता था, परंतु भाग्यवश हममें से किसी ने कभी यह आशा ही नहीं की थी कि यह काम सरल होगा।

मार्च महीने के प्रारम्भ में एक दिन सुबह एक हवाई जहाज़ हमारे अहाते के ऊपर नीची उड़ान भरता हुआ उतरने के स्थान की ओर बढ़ा। हम जान गये कि वह डेनी शेपर्ड को लेने आया था। शेपर्ड स्वदेश लौट रहा था, जहाँ उसकी पत्नी बहुत दिनों से उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। अपनी लम्बी यात्रा का पहल हिस्सा डेनी को इसी विमान से तय करना था।

मेरा गला भर आया। मैंने एक लाओ नर्स से काम सम्हालने को कहा और स्वयं बाहर निकल आया। डेनी ने हमसे वचन ले लिया था कि उसे विदाई देने के लिए कोई समारोह नहीं किया जायगा और सब काम हमेशा की तरह चलता रहेगा। डेनी ने सबसे हाथ मिलाया और अपना सामान उठाया। सामान तराज़ू

के पलड़ों की तरह एक बल्ली के सिरों पर बँधा हुआ था। वह चल दिया और हम देखते रहे। सड़क से उड़न-पट्टी को जाने वाली पगडंडी पर मुड़ने से पहले उसने घूम कर हाथ हिलाया और आगे बढ़ गया। मुझे डेनी की अनुपस्थिति बहुत खटकेगी, यह तो निश्चित था। वह पैदायशी डाक्टर है। आपरेशन की मेज़ के पास उसे अपने सामने देख कर मुझे एक प्रकार की हिम्मत मिलती थी। अब स्थिति बदलने वाली थी।

शुरू में जो तीन व्यक्ति मेरे साथ आये थे, उनमें से अब केवल पीट केसी यहाँ रह गया था और उसका लौटने का समय भी तेज़ी से निकट आ रहा था। सौभाग्य से चई विश्वस्त सहायक बन गया था। यह डेनी के प्रयत्नों की कृपा थी कि वह लगभग उतना ही होशियार हो गया था जितना कि किसी अस्पताली टुकड़ी का प्रशिक्षित सैनिक होता है। जान डिविट्री और बाब वाटर्स काफ़ी तेज़ी से प्रगति कर रहे थे और आपरेशनों के लिए बहुत अच्छे नर्स बन चुके थे। सात लाओ नर्सों को भी हम तालीम दे रहे थे जिनमें चार पुरुष थे और तीन स्त्रियाँ। मेरी ज़रूरतों से वे अच्छी तरह परिचित हो चुके थे। परन्तु उनसे काम लेते समय, विशेषकर कठिन परिस्थितियों में, मुझे उनके प्रति काफ़ी सावधान रहना पड़ता था।

पूर्व में मान-अपमान की भावना बड़ी गम्भीर चीज़ होती है। स्वाभिमान और व्यक्तिगत गौरव से अधिक व्यापक होती है यह। अपने मानसिक तनाव और आइरिश तेज़मिज़ाजी के कारण मुझे अपने मुँह से ऐसी बातें निकल जाने का खटका रहता था, जो लाओ लोगों को बुरी तो लगती ही, उनसे उनका 'अपमान' भी हो जाता। और इस समय मुझे उनकी अधिक-से-अधिक सहायता की आवश्यकता थी।

मुझ पर सबसे अधिक भार शल्यचिकित्सा का आ पड़ा था। कोई दिन ऐसा न जाता था, जिस दिन मुझे कोई आकस्मिक और संकटापन्न आपरेशन न करना पड़ता हो। कभी कोई आदमी भालू से मार खाकर आता था; कभी कोई बच्चा युद्ध के पीछे छूटे हुए कारतूसों से खेलता हुआ घायल होकर पहुँचता था; कभी कोई मज़दूर जंगल में बाँस काटते-काटते अपना पैर ही काट बैठता था। परन्तु युवक और अनुभवहीन सर्जन के रूप में मेरी कुशलता की परख तो सुबह रोगियों को देखने के समय ही होती थी। कुछ रोगियों को मैं लाइलाज समझ कर लौटा देता था। परन्तु ज्यादातर अपने विवेक की बात अनसुनी करके मैं चई या बाब को रोगी को आपरेशन के लिए रोक लेने का आदेश दे देता था – 'जो भी दिन

सबसे पहले खाली पड़ता हो उसी दिन आपरेशन होगा।' इसके फलस्वरूप आपरेशनों का कार्यक्रम घटने के बजाय प्रति दिन बढ़ता ही जाता था।

उदाहरण के लिए, जिस दिन डेनी रवाना हुआ, थाइ दम क़बीले का एक शालीन व्यक्ति अपनी जवान लड़की को लेकर आया। लड़की सुन्दर थी, उसके नाक-नक्श मानो साँचे में ढले हुए थे, कजरारी आँखें थीं। अपने काले बालों को उसने इस तरह बाँध रखा था जिससे प्रकट होता था कि उसे अभी उसका वर नहीं मिला था। अपनी आँखों में आशंका लिये हुए उसके पिता ने बताया कि बरसों से उसके पैरों और टाँगों में फोड़े-से हो रहे थे, जो ठीक होने को आते ही नहीं थे। उसका टखनों तक लम्बा घाघरा उसने कुछ ऊपर उठाया। टाँगों पर काँसे के रंग के उभरे हुए चकत्ते पड़े हुए थे। उसकी चकत्तों से भरी हुई और सूजी हुई टाँगों को देखते ही मेरा दिल बैठ गया।

उसके घुटने और टखने निर्जीव हो गये थे। मैंने आपरेशन का चाकू उठाया और उसके टखने में फिर पिंडली में काफ़ी गहरा चुभाया। परन्तु लड़की हिली तक नहीं। रोग का निदान करने के लिए प्रयोगशाला में परीक्षण करने की ज़रूरत न थी। उसे कोढ़ था। हर महीने कोढ़ के कम से कम छः नये रोगी हमारे पास आते थे। इस सुन्दर लड़की के लिए मैं कुछ नहीं कर सकता था सिवा इसके कि ज़ख्मों को साफ़ कर दूँ और दर्द का शमन करनेवाली दवाइयाँ दे दूँ। समय-साध्य 'डाइस-ल्फ़ोन' उपचार की साधन-सुविधाएँ हमारे पास नहीं थीं।

एक दिन एक आदमी अपनी पत्नी को लेकर आया। पत्नी के निचले होंठ से नारंगी जितनी बड़ी लाल-लाल गाँठ लटक रही थी। पति ने मुझसे विनती की कि मैं उस मुसीबत को किसी तरह दूर करूँ। मैंने उन्हें बताया कि आपरेशन मुश्किल भी थी और ख़तरनाक भी; परन्तु दोनों पर इसका कोई असर नहीं हुआ। वास्तव में मैंने ऐसा आपरेशन कभी किया नहीं था; किताबों में जो विधि दी हुई थी उसकी कुछ अस्पष्ट-सी स्मृति थी मुझे। परन्तु गाँठ बहुत बिगड़ चुकी थी और मुँह पर किसी प्रकार का भी संक्रमण बहुत ही खतरनाक होता है। मैंने खतरा उठाने का फ़ैसला कर लिया।

संक्रमण का विष मारने के लिए कई दिन 'एंटिबायोटिक' औषधियाँ देने के बाद एक दिन उस स्त्री के चेहरे के सम्बंधित भाग को सुन्न करके आपरेश की तैयारी की गयी। मैंने सही ढंग से आपरेशन करने की मनौती मानते हुए चाकू चलाया और गाँठ निकाल दी। होठ को यथासम्भव सफ़ाई के साथ मैने वापस सीं दिया। रोग का निदान करने के परीक्षणों के लिए प्रयोगशाला तो हमारे यहाँ थीं नही

इसलिए मुझे यह वैसे ही मानना पड़ा कि गाँठ कैंसर की थी, और यह मैंने ईश्वर के भरोसे छोड़ा कि आपरेशन में कैंसर-प्रभावित भाग पूर्णतया निकल गया होगा।

कुछ सप्ताह में ज़ख्म भर जाने के बाद हमने उस औरत को अस्पताल से छुट्टी दी। वह बहुत प्रसन्न थी। चेहरे का निचला भाग खिंच-सा गया था और टेढ़ा पड़ गया था; परन्तु मुझे यह उम्मीद भी नहीं थी कि मैं कोई 'प्लास्टिक सर्जरी' का चमत्कार उस चेहरे पर कर दिखाऊँगा। उसके पति ने तो उसके ठीक हो जाने को ही चमत्कार समझा। मुझे बाद में पता चला कि वह कुछ मील दूर के एक गाँव का 'मेयर' था और घाटी में उसका बहुत प्रभाव था। उसने यह प्रचार खूब किया कि 'नाम-था' के गौरांग डाक्टरों को भगवान् बुद्ध का एक वरदान मानना चाहिए।

मुझे विश्वास है कि डेनी को 'हैरियट' की ज़रूर याद होगी। परन्तु उसे यह ज्ञात न हुआ होगा कि उसके चले जाने के बाद "हेरियट' ने एक प्रसंग में बड़ी दया-ममता दिखायी। यह सुन्दर प्रसंग हमें सदैव हैरियट और पाल की कहानी के रूप में याद रहेगा।

उसका असली नाम हैरियट नहीं था। जिन लाओ नामों का उच्चारण मुश्किल होता था उनको मेरे साथी अंग्रेज़ी रूप दे देते थे; यदि यह सम्भव न होता था तो वे नया नामकरण ही कर देते थे। लगभग बीस वर्ष की यह नवयुवती मात-खा क़बीले की थी। कभी इस क़बीले के लोग गुलाम हुआ करते थे और अब नौकरों-चाकरों का धन्धा करते है; यानी 'लकड़ी काटने और पानी भरने वालों' का निम्नतम वर्ग है इनका। इस औरत का नाम रखा गया हैरियट।

उसे सन्निपात की हालत में पालकी में डाल कर हमारे पास लाया गया था। रोग बहुत बढ़ चुका था। प्रसूति में अपाहिज और विकलांग होने वाली औरतें मैंने और भी देखी थीं, परन्तु हैरियट की-सी दशा किसी की नहीं देखी थी। उसका मूत्राशय तक फट गया था और अँतड़ियाँ कट गयी थीं। आपरेशन से पहले संकटापन्न अवस्था में कई सप्ताह उसका इलाज करना पड़ा। कई महीनों की अवधि में उसके एक-के-बाद एक कई आपरेशन किये गये।

मार्च में डैनी के प्रस्थान के समय तक हैरियट कुछ ठीक होने लगी थी। अब भी वह बिस्तर में ही पड़ी रहती। अत्यधिक पीड़ा के कारण वह आराम से लेट भी नहीं सकती थी। उसके मूत्राशय में केथीटर (मूत्र निकालने की धातु की नली) लगा दिया गया था और उसमें रबड़ की नली जोड़ दी गयी थी जिसका दूसरा छोर ज़मीन पर रखे हुए एक बर्तन में पड़ा रहता था। तथापि उसकी दशा

सुधर रही थी। तभी हमने पाल नामक रोगी को उसके सामने वाले पलंग पर भर्ती किया।

पाल कैंसर से पीड़ित था। उसके नितम्ब का भाग कैंसर की भेंट चढ़ चुका था और रोग बढ़ कर उदर तक पहुँच गया था। हमारे वश की बात इतनी ही थी कि कैंसर की गाँठों को आपरेशन से निकाल कर उसे आराम पहुँचानेवाली औषधियाँ देते रहें। उस उपचार से उसकी दशा कुछ हफ़्ते ठीक रहती थी लेकिन इसके बाद रोग और भी भयंकर हो उठता था।

हमसे जितनी होती थी उतनी परिचर्या हम हैरियट और पाल की करते थे; परन्तु उन्हें आवश्यकता और अधिक की थी। पर हमारे सामर्थ्य की भी सीमा थी। ऐसी दशा में इन दो दयनीय अपरिचित व्यक्तियों की पीड़ा और दुख-दर्द ने एक सुन्दर और दया-ममता-मय सम्बंध को जन्म दिया। शान्तिकर औषधियों का असर ख़त्म हो जाने के बाद पाल दर्द से तड़पने और कराहने लगता था। तब हैरियट किसी तरह अपने बिस्तर से उठती और रबड़ की नली को कंधे पर डाल कर पाल के पास पहुँचती, उसके तकिये ठीक करती, उसे आराम देने की कोशिश करती और भोजन कराती।

फिर पाल के 'अच्छे दिन' आते। तब वह हठ करके हैरियट की देख-भाल करता। एक बार उसे अपने शरीर में विशेष रूप से शक्ति का अनुभव हो रहा था। उस बीच एक दिन हमने देखा कि वह वार्ड से ग़ायब था। तलाश करने पर वह लाओ नर्स को नदी के किनारे मिला। वहाँ बैठा हुआ बड़ी मेहनत से वह हैरियट के गन्दे कपड़े साफ़ कर रहा था।

आखिर हैरियट इतनी अच्छी हो गयी कि उसे अस्पताल से छुट्टी मिल गयी। वह गाँव में कपड़े धोने लगी। अपने इलाज के बदले हमें कुछ भी देना उसके लिए सम्भव न था। हमें याद था कि खा जैसी निम्न जातियों में भी मान को बड़ा महत्त्व दिया जाता है; अतः हमने उसका यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया कि वह रोज़ कुछ समय अस्पताल में सफ़ाई तथा परिचर्या का काम करेगी। अक्सर संध्या को वह अस्पताल में काम करती रहती। पाल को अब हर वक़्त देख-भाल की आवश्यकता रहती थी। उसका भार उसने विशेष रूप से अपने ऊपर ले लिया।

मैं दूर बान फू वान नामक पहाड़ी गाँव में गया हुआ था। उस बीच मृत्यु ने दया करके पाल की पीड़ा का अन्त कर दिया। लाओ नर्सों ने मुझे लौटने पर बताया कि हैरियट अन्त तक उसके पास रही। इन दोनों की पारस्परिक सेवा से वे भी उतना ही प्रभावित हुए जितना कि मैं। अल्बर्ट स्वित्ज़र जिस चीज़ को

'पीड़ा झेलने वालों की आत्मीयता' कहते है, उसका यह भव्य स्वरूप हमें देखने को मिला, यह हमारा सौभाग्य था।

जंगली जानवर आस-पास के जंगल में बराबर उत्पात करते रहते थे। उन दिनों बाघों की चर्चा ही हर एक की ज़बान पर थी। मेरे साथी एक दिन छुट्टी करके बाघ के शिकार पर जाने को उत्सुक थे। परन्तु छुट्टी के लिए समय ही कहाँ था? बाघ की खाल पसन्द मुझे भी थी, परन्तु मुझे डर था कि कहीं कोई बाघ ही मेरी खाल से अपनी माँद न सजा ले। एक दिन तड़के ही एक लाओ लड़के ने अपनी फ़र्राटेबन्द ज़बान में हमें नींद से झिंझोड़ कर जगाया। उसका केवल एक शब्द हमारी समझ में आया—'सुआ' जिसका अर्थ होता है 'बाघ।' (कुछ और ढंग से बोलें तो इसी शब्द का अर्थ 'क़मीज़' और 'ख़रीदना' भी होता है।) हमारी कल्पना में यही चित्र आया कि कोई बालक बुरी तरह घायल हो कर खून में लथपथ पड़ा होगा। अपने दिमाग़ को ठिकाने करके जब चई ने उस लड़के की बात समझी तब हमें मालूम हुआ कि लड़के के बाप ने अभी-अभी एक बाघ को अपनी गोली का शिकार बनाया था। उस बाघ को वह हमें भेंट करना चाहता था। बहुत खुश हो कर हम उस आदमी के गाँव गये। नाक से पूँछ तक सात फ़ीट लम्बा और तीन सौ पाउंड वज़न का शानदार बाघ उसने मारा था। गाँव-वालों ने मुझे बाघ के कान दिखाये। वे कई जगह से कटे हुए थे। गाँववालों का कहना था कि यह इस बात का सबूत था कि बाघ ने कभी कोई आदमी मार कर खाया होगा। कान कटने से आदमी खाने का कोई सम्बंध मुझे दिखायी नहीं दिया, परन्तु मैं चुप ही रहा।

जंगली सूअर भी बहुत ख़तरनाक जानवर है। आदमी को देख कर वह भागता नहीं, बल्कि उस पर हमला करता है। सूअर के शिकार के लिए लाओ लोक पगडंडी जैसी साफ़ और संकरी जगह चुनते हैं। गाँव के आदमी लाइन बना कर कंधे-से-कंधा मिलाये हुए और ढोल बजा-बजा कर शोर करते हुए जंगल में जाते हैं। सूअर आगे भागता है और अन्त में साफ़ किये हुए रास्ते या पगडंडी को पार करता है। वहीं शिकारी किसी पेड़ पर अपनी पुराने ढंग की बन्दूक़ साधे बैठा रहता है।

एक बार आदमी पेड़ पर चढ़ नहीं पाया था कि सूअर जंगल से खुली जगह में निकल आया। आदमी को देखते ही उसने आक्रमण कर दिया। जंगली सूअर बहुत बड़ा होता है और उसके मुँह पर दो मुड़े हुए दाँत होते हैं। किसी-किसी सूअर के ये दाँत आठ इंच के होते हैं। सूअर ने उस आदमी को गिरा दिया और घूम

कर अपने दाँत उसकी जाँघ में गड़ा दिये। टाँग उन मुड़े हुए दाँतों में फँस गयी। अपना सिर हिला-हिला कर सूअर ने आदमी को खूब पटका। आदमी की जाँघ का माँस अलग हो गया। वह बेचारा बुरी तरह चीख़ रहा था। सूअर के दाँतों मे वह छूट तो गया लेकिन सूअर अपने दाँत बार-बार उसके भोंकता रहा। आख़िर दूसरे लोगों ने सूअर को किसी तरह भगाया, तब उसकी जान छूटी। गाँव-वालों ने तुरन्त एक आदमी दौड़ा कर हमें सूचना दी कि वे घायल को 'नाम-था' ला रहे हैं। आख़िर जब वह उस घायल अवस्था में हमारे पास पहुँचा, तब उसके शरीर में मानों रक्त की एक बूँद शेष नहीं रही थी।

खून इस क़दर बह रहा था कि रोगी के घुटने पर रक्त-नाली का मुँह हमें बाँधना पड़ा। उसका दायाँ हाथ इस बुरी तरह घायल हो गया था कि उसके ठीक होने की उम्मीद ही नहीं थी। हमने उसे साफ़ किया और निर्जीव माँस निकाल कर सीं दिया। हाथ अन्त में किस काम का रहेगा इसका विचार किया ही नहीं जा सकता था। माँस आदि का एक लोथड़ा मात्र वह रह गया था। 'एंटिबायोटिक', 'एंटिगेंग्रीन' और 'एंटिटिटेनस' औषधियों ने घावों को ज्यादा पकने से बचा लिया। कई हफ़्तों के बाद वह युवक चलने लायक़ हुआ। परन्तु उसे टाँग को लम्बा करने की कोशिश करने के लिए हम बड़ी मुश्किल से राज़ी कर पाये, क्योंकि दर्द तब भी काफ़ी होता था और टाँग कुछ छोटी भी हो गयी। कई महीने बाद वह हमसे मिलने आया। तब वह मामूली तौर से लँगड़ाता था। उसके दायें हाथ के जख़्म भी भर गये थे, परन्तु हाथ बिल्कुल बेकार हो गया था: वह कलाई से लटका हुआ माँस का लोथड़ा बन कर रह गया।

यह है जंगल के लोगों की ज़िन्दगी! जब तक मैं लाओस में रहा, मुझे स्वयं भी कुछ सीमा तक डर बना रहता था; संसार से विलग हो जाने का डर, अकेलेपन का डर और उस विस्तृत तथा भयावह जंगल का डर। मेरी तो मान्यता है कि जंगल में साहस मूर्ख ही दिखा सकता है। साँप, जोंक, बाघ, जंगली सूअर, चमगादड़, मलेरिया के मच्छर—इन सबकी उपस्थिति साहस के प्रथम आवेश को शीघ्र ही शेष कर देती है और उसकी जगह स्थापित करती है भय की भावना और आशंका।

इस तरह महीनों गुज़र गये। बीच-बीच में लगता था मानो रोग और यमराज कुछ आराम कर रहे हों; परन्तु यह आराम की अवधि कभी लम्बी नहीं होती थी। ऐसे फ़ुर्सत के दिनों में मैं 'नाम-था' में घूम-घूम कर दोस्तों और पड़ौसियों से मिलता था। उस समय मेरा अन्तर एक अप्रकट आनन्द से भर जाता था। हम

अमरीकी थे, हमारी चमड़ी सफ़ेद थी, हमारी भाषा, हमारे तौर-तरीक़े और आदतें भिन्न थीं; परन्तु अब हम अजनबी या अजीब लोग नहीं थे। हम 'वहीं के' हो गये थे।

शहर में तिकोने चौक के एक किनारे पेड़ों के बीच, १८० वर्ग-फ़ीट की लम्बी-चौड़ी चादर लटका कर, उससे हम सिनेमा के पर्दे का काम लेते थे। उसके ठीक पीछे अपने घर के सामने वाले बरामदे में हम सिनेमा की मशीन लगाते थे और एक पेड़ के कटे हुए तने पर लाउड-स्पीकर लगाते थे। इस तरह संध्या को औसतन् १००० आदमी पर्दे के दोनों ओर बैठ कर फ़िल्में देखने का आनन्द लेते थे।

खोम्चे वाले मशालें या मिट्टी के तेल के लैम्प जमा कर सड़क के किनारे बैठ जाते थे। मिठाई, शरबत, चावल की गोलियों और सूअर के मॉस के क़ीमे का तथा उन लोगों की पसन्द के कुछ अजीब कीड़े-मकोड़ों, चमगादड़ों और छोटी-छोटी मछलियों के व्यंजनों का उनका धन्धा खूब ज़ोरों से चलता था। हमारे फ़िल्मों के प्रदर्शन उन लोगों के व्यापार के लिए वरदान साबित हुए थे। जान और बाब को शिकायत थी कि मुनाफ़े में हमारा भी हिस्सा रहना चाहिए था।

प्रदर्शन शुरू होने के बाद मैं चौक में चक्कर लगाने निकल जाता था। वहीं पुलिस-थाना था। हमारे अंग-रक्षक उसी में रहते थे। दिन भर जंगल में गश्त करने के बाद थके-हारे और कीचड़-मिट्टी में सने हुए सिपाही बरामदे में बैठे होते थे। उनसे साहब-सलामत होती थी। वहीं बौद्ध मन्दिर था। शानदार पगोडा था वह। गिल्ट और चीनी मिट्टी उस पर चढ़ी हुई थी। उसकी बाहरी पौड़ियों के दोनों ओर देवदूतों की दो सुन्दर जेड की मूर्तियाँ बनी हुई थीं। मन्दिर के आगे था श्रीमती फ़्रमा सस्सादी का मकान। मकान ही में उनकी दुकान थी। बुनाई, सिलाई और कई छोटी-मोटी चीज़ों का व्यापार वे करती थीं। हमारी वे मित्र थीं और हम पर बड़ी मेहरबान थीं।

श्रीमती सस्सादी की एक और विशेषता थी। हम जिस 'दिन नाम-था' पहुँचे थे डेनी ने उसी दिन इस विशेषता का पता लगा लिया था। 'नाम-था' में सिंगर की सिलाई मशीन केवल एक थी और वह मशीन थी श्रीमती सस्सादी की। मशीन थी तो बहुत पुरानी; चलाने के लिए उसमें पेडल लगे हुए थे, लेकिन काम आश्चर्यजनक करती थी। डेनी ने हमारे सामान से निकाल कर कपड़ा उन्हें दिया था और श्रीमती सस्सादी ने उससे ज़ख्मों और आपरेशनों के लिए पट्टियाँ वग़ैरा बना दी थीं। हमारा सिलाई का सारा काम तब से वे ही करती थीं। हमारे कपड़ों

की मरम्मत करती थीं और पुराने कपड़ों के नमूने पर नये कपड़े बनाती थीं। इस सारे काम के लिए वे हमसे लेतीं कुछ नहीं थीं। परन्तु इस विचार से कि अमरीकियों में भी 'मान' की भावना तो होती ही है, वे कभी-कभी हमसे चाकलेट ले लेती थीं। भगवान् तुम्हारा भला करे, श्रीमती सस्सादी !

रास्ते के पार कुछ अजीब-सी और भद्दी बनावट की दुकानें थीं। अधिकांश दुकानें बल्लियों पर ऊँचे बने हुए मकानों के बीच-बीच में अवस्थित थीं। आगे, आधी गली पार करके पड़ती थी सिसावथ की साफ़-सुथरी और बड़ी-सी 'हर माल' की दुकान। उन दिनों सिसावथ का पुत्र छुट्टियों में 'नाम-था' आया हुआ था और दुकान पर बैठता था। वह वियंतियेन में लाइसेइ में पढ़ता था। पन्द्रह वर्ष का खूबसूरत लड़का था वह। उसकी बुद्धि पैनी थी। फ्रांसीसी भाषा वह बड़ी खूबी से बोलता था और अमरीकी भाषा के 'ओके' (बहुत अच्छा), 'थैंक यू वेरी मच" (आपको बहुत धन्यवाद) आदि फ़िक़रे भी बोलता था तथा 'एटम बम' तो (अनिवार्यतया) बोलता ही था।

इसके आगे गाँव के जौहरी, खुना की दुकान थी। खुना कमाल का कारीगर था और सोने व चाँदी की बड़ी सुन्दर चीजें बनाता था। मुद्रा का 'नाम-था' में कोई विशेष महत्त्व नहीं था और काग़ज़ की मुद्रा का तो बिलकुल ही नहीं। महत्त्व था तो चाँदी और सोने का। परन्तु इस देश में जहाँ वस्तुओं की अदला-बदली-की प्रणाली प्रचलित थी, इन ब मूल्य धातुओं का मूल्य भी कुछ कम था। अतः लोग इन्हें जमा करके रखने के बजाय खुना के पास लाते थे और वह उनसे सुन्दर-सुन्दर ज़ंजीरें, हार, कानों के बुन्दे, और ब्लाउज़ में लगाने के बटन बनाने के अलावा व्यक्तिगत उपयोग की दाँत-खुदनियाँ और कान साफ़ करने की सलाइयाँ आदि बना देता था।

कुछ महीने पहले खुना गिर पड़ा था जिससे उसके पैर में मोच आ गयी थी। हमने पैर में पट्टा तो बाँध दिया। इसके बाद ऐसे रोग में 'नोवोकेन' का इंजेक्शन देना मर्जी की बात है, कोई बहुत जरूरी नहीं, फिर भी किसी कारणवश से मैंने खुना के सूजे और दुखते हुए टख़ने में उस किस्म के 'नोवोकेन' का इंजेक्शन दे दिया जिसका असर बहुत दिनों तक रहता है। इससे दर्द तुरन्त बन्द हो गया तो उसे बहुत आश्चर्य हुआ। उसने आभार दर्शाने के लिए चाँदी की सुन्दर ज़ंजीरें, कड़े व दूसरे कई आभूषण हमें दिये। मेरे साथी इन्हें पाकर बहुत खुश हुए। लेकिन बाब के मुख पर चिन्ता की रेखाएँ खिंच गयीं। उसने पूछा—"नोवोकेन का असर टख़ना ठीक होने से पहले ही यदि उतर गया तब क्या होगा ?"

चौक के एक कोने के पास इस गाँव के पाकिस्तानी निवासी रहते थे। याकूब, अब्दुल्ला और इस्माईल उत्तरी बर्मा में घूमते-फिरते 'नाम-था' में आ कर बस गये थे। लाओ स्त्रियों से उन्होंने विवाह कर लिया था और तीनों के कई-कई बच्चे थे। गाँव में ये बच्चे सबसे चतुर और सुन्दर थे। अपने इस्लाम धर्म के नियमों का वे पूर्णतया पालन करते थे। गाँव के सब लोग अपने लाओ त्यौहार मनाते थे, देशी शराब पीते थे और सूअर का माँस खाते थे; परन्तु ये लोग अपने धर्म के सिद्धान्तों के अनुसार उनसे दूर रहते थे। तथापि समाज में उनका सबसे मेल-जोल था और मान भी।

याकूब कई बेटों का बाप था। उसका सर गंजा था और वह लम्बी दाढ़ी रखता था। अब्दुल्ला भारी-भरकम आदमी था; खूब बड़ा पेट था उसका। मैंने उसकी कमर में आपरेशन करके एक गाँठ निकली थी। तबसे वह मेरा गहरा दोस्त बन गया था। इस्माईल बहुत भला आदमी था। 'नाम-था' में अफ़ीम की सबसे बड़ी दुकान चलाने का सम्मान (?) उसे प्राप्त था। मेरे कुछ रोगी उसके श्रेष्ठ ग्राहक थे; उनका रोग सबसे खराब और लाइलाज था। शायद उन्हें मेरी मार्फ़ीन से अधिक आनन्द अफ़ीम के सेवन में आता था। ऐसी दर्दनाक हालत में मैं उन्हें दोष नहीं दे सकता।

ईस्टर के पूर्ववर्त्ती शनिवार को हम रोगियों को देखने में व्यस्त थे कि दो लम्बे कद के व्यक्ति हमारे अस्पताल में आये और बड़े तपाक से उन्होंने 'हैलो' कह कर हमारा अभिवादन किया। वे देखने मे ही कठोर जीवन के आदी और अमरीकी जान पड़ते थे। उन्होंने आपना परिचय 'सेवेंथ डे एडवेंटिस्ट' मत के मिशनरी कहकर दिया। एक का नाम था एच. कार्ले क्यूरी– दुबला-पतला शरीर, सिर में टाट और आयु लगभग ४० वर्ष। दूसरा था आर. सी. हाल–मुस्कराता हुआ चेहरा, बाल सैनिक ढंग से कटे हुए और उम्र तीस से कुछ ऊपर। हाल ने बताया कि वे उड़न-पट्टी पर जैसे ही हवाई जहाज से उतरे कि कोई आदमी उनका सामान उठा कर उन्हें हमारे पास ले आया। 'नाम-था' में गोरे लोग और किसके पास आते?

हमने दो खाली खोखे मँगवा कर उन्हें बैठाया और उनसे कहा कि हम जरा रोगियों को निपटा दें। काम खत्म कर के हम उन्हें अपने घर ले गये और फिर जो बातें शुरू हुईं तो बहुत रात गये तक चलती रहीं। सोने, भोजन करने, काम-काज करने और प्रार्थना के समय तो बातें बन्द रहीं, बाकी ईस्टर का दिन निकलने तक चलती रहीं।

बैंकाक में 'एडवेंटिस्ट' मतावलम्बियों का बहुत अच्छा अस्पताल है। उत्तरी थाइलैंड में उनके कई डाक्टरी मिशन काम कर रहे हैं। क्यूरी अत्यन्त उत्साही और निष्ठावान व्यक्ति था। उसने मुझे बताया कि वे लोग लाओस में अपना मिशन स्थापित करने की सम्भावनाओं का अध्ययन करने आये थे। वह मुझसे सवाल पर सवाल पूछता गया और देश के मध्यवर्ती तथा उत्तर भाग की अवस्था के बारे में जो कुछ मुझे मालूम था मैंने उसे बताया।

ईस्टर रविवार को दोपहर का भोजन करते समय मुझे एकाएक याद आया कि कई दिन पहले मैंने गाँव के कुछ पाकिस्तानी बच्चों की सुन्नत करने का वादा किया था। इस्लामी पंचांग के अनुसार वह रविवार उनके लिए शुभ था इसलिए उन्होंने मुझसे उस दिन बराबर की आयु वाले कुछ लड़कों की सुन्नत कर देने को कहा था। हमारा ख़याल था कि यह काम हम मिनटों में निबटा देंगे। जब सुन्नत करने बैठा तब मुझे मालूम हुआ कि कितने सारे बच्चे उन्होंने पैदा किये थे। मुझे ठीक संख्या तो याद नहीं है, लेकिन सात से ज्यादा सुन्नतें हमने उस दिन जरूर कीं। और जिनकी सुन्नत की गयी वे सभी शिशु भी नहीं थे, इसलिए पूरे आपरेशन के सब तौर-तरीक़े बरतने पड़े। अंधेरा पड़ने के बहुत देर बाद हम घर लौटे और थक कर ऐसे चूर हो गये थे कि आते ही पड़ रहे। पादरी क्यूरी ने ज़ोर-ज़ोर से हँसते हुए कहा—"ज़रा सोचिये; आप हैं आयरलैंडवासी कैथोलिक, आज ईस्टर रविवार के दिन आपने भोजन किया 'सेवंथ डे एडवेंटिस्टों' के साथ, और लाओस के इस बौद्ध राज्य में आपरेशन के रूप में आपने सम्पन्न किया है मुसलमानों का एक प्राचीन हीब्रू संस्कार!"

क्यूरी और हाल से जितना ही मेरा मेल-जोल बढ़ा उतना ही अधिक मुझे यह विश्वास होता गया कि वे लाओस की आश्चर्यजनक सेवा कर सकते थे; इसलिए प्रयत्न-स्वरूप मैंने उन्हें बढ़ावा दिया। मिशनरियों के प्रति लाओ सरकार के रुख़ पर क्यूरी हैरान था। मुझे खुशी है कि वह रुख़ अधिकृत रूप से अब बदल चुका है।

बौद्ध-वर्ष में एक बहुत महान त्यौहार होता है 'सोंगक्रान' का। नव-वर्ष पर यह त्यौहार मनाया जाता है। इस रोज़ गाँव की सारी गन्दगी जलायी जाती है और हर घर अच्छी तरह साफ़ किया जाता है। बौद्धों की मान्यता है कि बीते हुए वर्ष की कोई भी चीज़ नये वर्ष में नहीं आनी चाहिए। यह अशुभ माना जाता है। यों कहिये कि एक प्रकार से परम्परागत दृढ़ विश्वास को ले कर यह जन-स्वास्थ्य-

विभाग का सफाई का दिन है। जितना प्रभावशाली यह विश्वास है, रूखा-सूखा तर्क उतना कभी नहीं हो सकता।

प्रति दिन प्रातःकाल के समय बौद्ध भिक्षु पगोडा के घंटे बजाते है। दूसरा अर्थ होता है कि भिक्षु भगवा रंग के वस्त्रों में जल्द ही भिक्षा के लिए आ रहे है। विनम्रता के साथ—यद्यपि इस विनम्रता में भी किसी प्रकार गर्व की झलक रहती है—ये भिक्षु कांख में भिक्षा-पात्र दबाये हुए पंक्ति बना कर गाँव के टेढ़े-मेढ़े रास्तों से गुज़रते हैं। हर घर के सामने घर का एक व्यक्ति एक घुटना ज़मीन पर टेक कर बैठा रहता है। वह पात्र में चावल या रोटी डालता है और कहता है 'धन्यवाद।' भिक्षु कोई उत्तर नहीं देते और यदि भिक्षा देने वाली कोई स्त्री हुई तो वे उसकी ओर देख भी नहीं सकते। इसके पीछे विश्वास यह है कि दाता भिक्षु को भिक्षा दे कर अपने परलोक के जीवन के लिए भोजन संग्रह करता है। भिक्षु निमित्त मात्र हैं।

सोंगक्रान के त्यौहार पर भिक्षु भिक्षा के लिए बस्ती में नहीं जाते, अपितु उनके लिए भोजन पगोडा में ही पहुँचाया जाता है। १९५७ में बौद्ध नव वर्ष का यह त्यौहार १२ अप्रैल के दिन पड़ा। १३ तारीख से कई दिनों तक मनाये जानेवाला भोज का यह त्यौहार शुरू हुआ। पगोडा की लम्बी-लबी मेज़ों पर भोजन, चावल, फल, माँस आदि के ढेर लग गये। स्थानीय वाद्य-वादकों का दल मंजीरे आदि मंगल-वाद्य बजा रहा था; ढोल तो थे ही।

भगवान बुद्ध की सब मूर्तियों को स्नान करवाया गया और पगोडा के प्रधान भिक्षु को भी विधिवत् स्नान करवाया गया। गाँव के युवकों ने बड़े-बूढ़ों के हाथों में सुगन्धित जल डाल-डाल कर उन्हें तौलिये दिये। चई ने मुझे बताया कि गुज़रे ज़माने में युवक बड़े-बूढ़ों को स्नान कराते थे और उन्हें कपड़े पहनाते थे। २५०० वें बौद्ध वर्ष में यह रीति पुरानी और अनुपयुक्त मानी जाने लगी थी।

इसके बाद दिन भर, और कई दिनों तक लोग खुल कर खुशियाँ मनाते रहे। इन दिनों बड़ी अजीब-अजीब बातें होती है। उदाहरण के लिए, यदि आप किसी को प्रिय हों और वह अपनी यह भावना प्रकट करना चाहे, तो वह बड़ी-सी तूम्बी में पानी भर कर आप पर उड़ेल देता है। दुर्भाग्य से हम बहुतों के प्रिय-पात्र थे। जब भी हम सड़क पर गुज़रते तो कोई न कोई लड़की जो वैसे सकुचाई-सकुचाई रहती थी, अपने घर से निकल कर हमें पानी में सराबोर कर देती थी। यह एक प्रकार का टोना है; इसमें लड़की की यह कामना छिपी रहती है कि अगली बरसात में खूब पानी पड़े ताकि फ़सल अच्छी

हो। एक-दूसरे पर भर-भर तूम्बे पानी डालने की यह प्रथा इस प्रार्थना का प्रतीक है कि खेतों के लिए बहुत-सा पानी उपलब्ध हो।

इस त्यौहार में गाँव के बच्चों को अनेक कहानियाँ सुनायी जाती हैं। अधिकांश कहानियों का सम्बंध जल से होता है। मुझे एक प्राचीन गाथा खूब याद है। वह पौराणिक नागों के विषय में है। ये नाग हिमालय के अनवतप्त नामक परीलोक में रहते थे और झील में खेल-खेल कर अपने लम्बे-लम्बे फनों से पानी की बौछारें उड़ाया करते थे। यह जल उठ कर आकाश में पहुँचता था और वर्षा बन कर पृथ्वी पर गिरता था। त्यौहार के दिनों में इस कामना से इन सर्पों को भोजन भेंट किया जाता था कि वे प्रसन्न हों, खूब पानी उछालें और वर्षा में बहुत जल बरसायें इस प्रकार अमरीका की तरह लाओस में भी नव-वर्ष का त्यौहार जल से तर होता है।

सभी बौद्ध त्यौहारों में खूब समारोह किये जाते थे। ये सीधे-सादे लोग मिल-जुल कर आनन्द मनाते हैं। वे नौका-दौड़ो, लाम-वोंग, प्रेम-सभाओं और वाची अनुष्ठानों का आयोजन करते थे और ऐसे अवसरों पर वाद्य रात में बहुत देर तक बजते रहते थे। चारण अपने गीतों में प्रेम, शौर्य और इतिहास की कथाएँ व प्राचीन कल्पनातीत गाथाएँ सुनाते थे। उनकी मुस्कराहटों से मुझे सन्देह होता है कि वे कभी-कभी उस अमरीकी दल के विषय में भी गीत गाते थे जो उनके देश में मौजूद था।

हमने गौर किया कि गाँव में कुछ पेड़ सोंगकान के लिए खूब सजाये गये थे और बाकी यों ही छोड़ दिये थे। हमें बताया गया कि सजे हुए वृक्ष बोधि वृक्ष थे। बोधि वृक्ष भगवान बुद्ध की ज्ञान-प्राप्ति का प्रतीक माना जाता है। बोधि वृक्ष के नीचे ही बुद्ध ने तपस्या की थी और उनके अन्तर्चक्षु खुले थे।

वर्ष के इस भाग में अनेक प्रेम-सभाओं का आयोजन होता है। जिस प्रकार ऐसी एक सभा में चई से हमारी प्रथम भेंट हुई थी, उसी प्रकार दुभाषिये और नर्से इनमें हमें हमेशा मिल सकते थे।

हमारे पास की चीजें अभी समाप्त नहीं हुई थीं, फिर भी मैंने फ़िज़र को लिखा और उन्होंने मेरी जरूरत की और भी चीजें भेज दीं। "लाखों को भोजन" ने मुझे कुछ और प्रोटीन-चूर्ण भेजा। इस चूर्ण को यहाँ "या मि हेन्ह" कहते थे। विटामिन तरल रूप में थे इसलिए वे "या मि हेन्ह नाम" कहाते थे। चूर्ण के नाम में "नाम" शब्द नहीं जुड़ता था। "या" का अर्थ है "औषधि", "मि" अर्थात् "युक्त" और "हेन्ह" का अर्थ "महान शक्ति।"

इस देश के लोग लगभग भुखमरी की अवस्था में रहते हैं। जान पड़ता है कि उनके शरीर में विटामिन, स्निग्ध पदार्थ अथवा प्रोटीन का संग्रह होता ही नहीं। कुछ दिन की बीमारी से ही उनके स्वास्थ्य का संतुलन बिगड़ जाता है। बेरी-बेरी के रोगी हमारे पास बहुत अधिक आते थे। यह रोग विटामिन बी १ की कमी से होता है। हमारे आँख के रोगी भी अक्सर विटामिनों के अभाव का शिकार होते थे। लगभग हर रोगी को हम डेका-वि-सोल देते थे। जिन्हें "शक्ति" की आवश्यकता जान पड़ती थी उन्हें हम "लाखों को भोजन" का चूर्ण देते थे। फूले हुए पेट वाले नंगधड़ंग बालक, क्षय-पीड़ित गर्भिणी महिलाएँ, तथा छाले, मलेरिया व अन्य बीमारियों से पीड़ित वयप्राप्त व्यक्ति इसी श्रेणी में आते थे।

मैंने लोगों को यह समझाने की कोशिश की कि वे अपने बच्चों को किसी भी रूप में बीमार होते ही या बुखार चढ़ते ही मेरे पास ले आया करें; परन्तु उनकी समझ में बात आयी नहीं। जैसा मैं बता चुका हूँ, कई बुखारों को वे सामान्य स्वास्थ्य का अंग ही मानते थे। इस मान्यता को उनके मस्तिष्क से निकालना लगभग असम्भव था। बच्चा हमारे पास पहुँचने से पहले-पहले, यदि किसी और भी भयंकर रोग का नहीं तो बेरी-बेरी के चंगुल में तो आ ही चुका होता था। लाओस में बुनियादी मुक़ाबला अज्ञान से था, बीमारियों से नहीं।

वॉंग वियेंग में हम गाँव के स्कूल में हफ़्ते में तीन दिन नियमित क्लासें लिया करते थे। उनमें हम स्वास्थ्य और साफ़-सफ़ाई के बुनियादी सिद्धान्त समझाते थे। नाम-था में मरीज़ों की क़तारें ज्यादा लम्बी लगती थीं और शल्य-चिकित्सा में बहुत समय लगता था; अतः हम वैसी नियमित क्लासें नहीं ले सकते थे। परन्तु रोगियों को देखने का ढंग हमने ऐसा रखा कि प्रत्येक रोगी की दशा के बारे में हमारी चर्चा ही क्लास का रूप ले लेती थी। रोगी अपनी बारी की प्रतीक्षा में बरामदे में जमा रहते थे। जब कोई माता अपने रोगी बालक को हमारे पास लाती तो हम उसे रोग की रोक-थाम के तरीक़े और इलाज अच्छी तरह समझाते। दरवाज़े के सामने बराम्दे में बैठे हुए रोगी ध्यानपूर्वक हमारी बातें सुनते रहते। उनमें जानकारी प्राप्त करने की उत्सुकता थी। वे दुख-दर्द में ही जीवन व्यतीत करना नहीं चाहते थे। वे स्वस्थ रहना और प्रगति करना चाहते हैं और अच्छी तरह जानते हैं कि उन्हें बीमारीयों से छुटकारा मिल सकता है।

एशिया के लोगों को शिक्षा देने का सबसे अच्छा उपाय यह है कि शिक्षा उनके किसी देशवासी के द्वारा दिलवायी जाय। हम यह काम नर्सों और दाइयों के द्वारा करवाते थे। हमने उन नर्सों और दाइयों को अपने साज़-सामान, पट्टियों और

औषधियों का उपयोग सिखाया और निरापद रूप से, अर्थात चोट-फेंट, संक्रमण अथवा दृष्टिहीनता के खतरों से बचा कर, प्रसूति करवाने का ढंग सिखाया। इसके बाद उन्हें 'केअर' के प्रसूति के उपकरण दिये ताकि वे खुद प्रसूतियाँ करवायें। नाम-था की सैनिक टुकड़ी के सैनिकों को भी हमने तालीम दी। उन्हें भी जरूरी डाक्टरी साज़-सामान दिया। कभी-कभी गाँवों के सरदार अपने किसी आदमी को हमारे पास कुछ दिनों के लिए बुखार अथवा जिस रोग से भी उनके गाँव उस समय पीड़ित होते, उसी की कुछ जानकारी हासिल करने के लिए भेजते थे। उन्हें तालीम के बाद हम ज़रूरी उपकरण और औषधियाँ दे कर वापस भेजते थे। सबसे ज्यादा महत्त्व शल्य-चिकित्सा का था और उसके बाद तालीम का। समय की दृष्टि से हमारा लगभग आधा दिन तालीम के काम में बीतता था। परन्तु इस तालीम का स्वरूप अमरीका के लेक्चरों जैसा तो शायद ही कभी होता था। हम अक्सर हाथ का बना हुआ 'ब्लैकबोर्ड' ले कर किसी गाँव में पहुँचते थे और सब लोगों को जमा करके उन्हें प्रसूति, अथवा मलेरिया अथवा गन्दगी व बीमारियों के आपसी सम्बंध की बातें बताते थे। परन्तु सबसे अधिक प्रभावशाली तरीका छोटे-से रोगी दयनीय बालक का जीता-जागता उदाहरण और उसके रोग की चर्चा रहती थी। अस्पताल में इन अवसरों पर प्रतिदिन सौ से अधिक व्यक्ति तो उपस्थित रहते ही थे।

एक बार थाई न्यूआ क़बीले का एक आदमी हमारे पास आया। यह क़बीला पश्चिमी चीन और बर्मा की सीमा पर रहता है। उसके एक पैर में बहुत पुराना ज़ख्म था; अधिकांश पैर एक लाल-लाल घाव-सा बन कर रह गया था। उसकी बदबू से नाक फटी जाती थी। पैर की उंगलियों और एड़ी की रगें खराब हो गयी थीं और छोटी पड़ गयी थीं। मज़बूत लाठी के सहारे ही वह आदमी चल पाता था। यदि उसकी जगह कोई दुर्बल बूढ़ा होता तो चल ही न पाता। हमने उससे पूछा कि उसे हमारे पास पहुँचने में कितने दिग लगे थे। उसने बताया, "बहुत दिन।" उसने कहा कि हमारे काम की चर्चा पश्चिमी पहाड़ियों के उस दूरवर्ती प्रदेश में भी पहुँच गयी थी। प्रत्यक्षतया हमारे नन्हें से दीपक का उजाला दूर-दूर तक हो रहा था।

हर हफ़्ते युन्नान और कैंटन से चीनी लोग आया करते थे। वे वास्तव में राजनीतिक शरणार्थी होते थे। अब वहाँ भूमि के चीनी साम्यवादी सुधारों का ज़माना था और लोगों पर उसी के अनुसार कर लगाये गये थे। यह सही है कि पहले की शासन-सत्ता उन्हें पसन्द न थी, तथापि नये "कृषि सुधारकों" ने जो सब्ज़ बाग़ दिखाये थे वे कार्य-रूप में परिणत नहीं हो रहे थे। यद्यपि उत्तरी वियतनाम

के कैथोलिकों की तरह उनका साम्यवादियों से धर्म के विषय में झगड़ा न था, तथापि वे अब दुनिया के उस प्रदेश से निकल भागना चाहते थे। कई लोगों के दूर-दराज़ के सम्बधी उत्तरी लाओस में रहते थे, सो वे छुट-पुट संख्या में इस गाँव पहुँचते थे।

इन शरणार्थियों में एक वृद्ध चीनी दम्पति की करुण स्मृति अब तक मेरे मन में है। ये दम्पति कैंटन से आये थे। हमने उसकी परिचर्या की, उन्हें कम्बल और औषधियाँ दीं और " या मि हेन्ह " दिया। गवर्नर ने अपने निवास-स्थान से ज़रा दूर पर ही एक झोपड़ी उन्हें रहने को दी। कई सप्ताह बाद उस वृद्ध चीनी ने हमारे घर आकर एक उपहार मुझे दिया। मैं ठहरा कुलीन व्यक्ति (मैंडारिन); अतः उसने मेरे ग्यारह नम्बर के पैर के लिए काले कपड़े का एक जोड़ा चीनी जूता बनाया था; उसका माप था सात नम्बर।

एक बार एक धनाढ्य चीनी बर्मी सीमा के मुओंगा सिंग स्थान में आया। उसकी पन्द्रह वर्ष की आकर्षक पुत्री उसके साथ थी। लड़की का ऊपर का होठ फटा हुआ था। हमने उसका इलाज किया और अस्पताल से छुट्टी पाने के बाद बाप-बेटी चीन के निचले भाग में गायब हो गये। चाओ खाओंग का दावा था कि वह आदमी लाल चीन की सेना का कोई अफ़सर था। हम तो इतना ही जानते हैं कि उसने हमारे साथ बहुत सहयोग किया; हम अमरीकियों ने उसकी पुत्री के लिए जो कुछ किया, उसका उसने बहुत उपकार माना। हमने उस लड़की की कुरूपता को मिटा कर उसे काफ़ी रूपवान बना दिया था। मेरा ख्याल है कि अब उसे हमसे घृणा करने में अधिक कठिनाई महसूस होगी।

लोगों का चीन से इस तरह भाग-भाग कर आना बचैनी के उस नासूर का प्रतीक है जो चीन को खोखला किये दे रहा है। शायद किसी दिन साम्यवादियों के जघन्य हत्याकांड, उसकी क्रूरता और भयावहता उस देश में खून की नदियाँ बहा देगी। आतंक की जिस योजना ने अभी चीन को आलोड़ित कर रखा है, शायद एक दिन उसे उठा कर फेंक दिया जायगा और जनता आज़ादी के लिए विद्रोह कर देगी। मैं उपदेश देना नहीं चाहता, परन्तु मैं कामना करता हूँ कि उस समय अमरीका आगे बढ़ कर चीन की जनता को जूते बनाने वाले उस बूढ़े चीनी की सम्बंधी मान कर उसकी सहायता करेगा। सहायता हमें करनी ही चाहिए। इतिहास यही सीख देता है; भले ही कुछ लोग यह कटु उक्ति दें कि इतिहास की एक मात्र सीख यह है कि इन्सान इतिहास से कभी कुछ नहीं सीखता।

हमारा आपरेशन का कमरा लगभग उतना ही व्यस्त रहता था जितना कि अमरीका में वैसे कमरे रहा करते हैं। एक बार हमारे पास एक युवक आया। वह मकान बनाने के लिए जंगल में बाँस काट रहा था। उसका हँसिये जैसा बड़ा-सा चाकू फिसल कर उसकी एड़ी में जा लगा, जिससे उसकी एक महत्त्वपूर्ण रग कट गयी। खून ज्यादा नहीं निकला था। वह हमारे पास पहुँचा। हम उसकी रग को जोड़ने में सफल हो गये और उसकी टाँग की हमने पूरी तरह लम्बा कर दिया। कई महीनों के बाद हमने उसे देखा; उसकी टाँग लगभग पूर्णतया ठीक हो गयी थी।

मई के महीने में एक दिन तीसरे पहर के बाद दो लड़के भागते हुए हमारे घर आये। उन्होंने हाँफते हुए हमें बताया कि किसी बच्चे का हाथ एक विस्फोट में बुरी तरह घायल हो गया है। कुछ मिनटों में ही घायल बच्चा अस्पताल पहुँच गया। उसके खून तो बहुत कम बह रहा था, लेकिन उसके सारे चेहरे, पेट और हाथ पर कलौंस पुत गयी थी। हाथ की जगह माँस का एक लोथड़ा लटक रहा था। उस लड़के को जंगल में कहीं एक कारतूस मिल गया था; शायद लड़ाई के दिनों में पड़ा रह गया होगा। बच्चे जैसे अमरीका में होते हैं, वैसे ही यहाँ भी; कुतूहल-वश उसने कारतूस को चट्टान पर दे मारा। उसके विस्फोट से उसके दायें हाथ का अधिकांश भाग उड़ गया, दायीं आँख चली गयी और पेट बारूद से जल गया। दुर्घटना के कुछ घंटों बाद ही वह आपरेशन के कमरे में पहुँच गया। उचित औषधियाँ मिल जाने से उसे 'गैंग्रीन' (मांस का सड़ाव) नहीं हुई। गैंग्रीन बहुत बुरी बीमारी है।

बाब और जान ने मेरी सहायता की और छोटे-मोटे काम चई ने सम्हाले। मैंने लड़के की उंगलियों के लोथड़े काट डाले और हाथ की हड्डियों के जोड़ अलग कर दिये। शिराओं की जड़ों में हमने 'नोवोकेन' के इंजेक्शन दिये और रक्त-नालियों के मुँह में दोहरे टाँके लगाये। जख्म को खूब साफ़ करके उसको सीं दिया: केवल एक छोटी-सी नली के लिए जगह रखी, ताकि उससे सफ़ाई की जा सके। हाथ किसी काम का रहेगा यह तो उम्मीद ही नहीं थी। इलाज ने असर खूब किया और हाथ का जख्म भरने लगा। आँख के लिए कोई चारा ही नहीं था। उसका एक हाथ और एक आँख चली तो गयी लेकिन जीवन बच गया; इसीके लिए उसने आभार माना।

कुछ दिनों बाद अमरीका से हमारी डाक में मुझे एक पत्र मिला। ऐसे मर्मस्पर्शी पत्र बहुत कम लिखे गये होंगे। एक स्त्री ने लिखा था कि वह हड्डी के कैंसर से

मर रही है परन्तु उसे कोई यह बात बताता नहीं है। उसकी टाँग और बाँह की हड्डियों में असहनीय दर्द होता है, फिर भी यह दर्द पाकर वह प्रसन्न है क्योंकि इस दर्द को भगवान के अर्पण करके वह मेरे जैसे व्यक्तियों के लिए उससे कृपा की भीख माँग सकती है। मुझे लगा कि उसकी प्रार्थनाओं की शक्ति ने ही हमें वह बुद्धि, अवसर और औषधियाँ दीं जिनसे हम उस छोटे से बालक की टूटी-फूटी हड्डियों का उपचार करने में सफल हुए।

फटे हुए होंठ हमने बहुत-से सिये। यह रोग लाओस में कोई असाधारण रूप से फैला हुआ नहीं है, परन्तु बात यह थी कि उस पहाड़ी प्रदेश में यह समाचार सब ओर फैल गया कि गोरे डाक्टर इस जन्मजात विकलता का उपचार करने में समर्थ हैं। कभी-कभी सप्ताह में पाँच-छः व्यक्ति इस शल्य-चिकित्सा के लिए आ जाते थे। इनमें अधिकांश नवयुवक या किशोर होते थे। हम होठों को सुन्न करके गालों की माँसपेशियों से काम लेकर होंठ अच्छी तरह सीं देते थे। इस उम्र का रोगी अधिकतर पूरा सहयोग देता है जिससे नतीजा अच्छा निकलता है। परन्तु बच्चों के मामले में तो लड़ाई-सी लड़नी पड़ती थी। रोते-चिल्लाते बच्चों को बेहोश करना पड़ता था और 'नोवोकेन' देना पड़ता था। बेहोश हो जाने के बाद बालक का आपरेशन मैं यथासम्भव शीघ्रतापूर्वक करता था ताकि आपरेशन बच्चे के होश में आने से पहले ही पूरा हो जाय। आपरेशन को बीच-बीच में मैं इसलिए रोक देता था कि मेरे सहायक इस बीच कृमि-विरहित तौलिये से बच्चे का मुँह ढाँप कर उसे थोड़ी-सी बेहोशी की दवा और सुँघा दें। बच्चे बीच-बीच में बुदबुदाते थे, होंठ बिचकाते थे, परन्तु कुल मिलाकर परिणाम अच्छा ही रहता था।

चई ने एक बार मुझे बताया कि उसने बाज़ार में एक बच्चे को आपरेशन का वर्णन करते सुना था। उस बच्चे का जन्म से ही होंठ भयानक रूप से फटा हुआ था। गोरे डाक्टर जब उसके गाँव में आये, तब उसकी आयु तेरह वर्ष की थी। उसके माता-पिता उसे तुरन्त हमारे पास लाये और हमने उसका आपरेशन किया। आपरेशन बहुत कामयाब हुआ और लड़के के होंठ पर सिलाई का एक निशान मात्र शेष रहा। बड़े जोश के साथ वह लड़का अपने साथियों को आपरेशन का ब्यौरा सुनाता था। "वह गोरा ओझा जो खूब लम्बा है, और बहुत तेज़ी से बोलता है, उसने अपने सहायकों से कहा कि मुझे उठा लें। दोनों सहायक ओझाओं ने मुझे उस लम्बी मेज़ पर लिटा दिया जो उनकी अस्पताल की झोंपड़ी में रखी है। फिर एक सहायक ने मेरे मुँह पर एक तरह का जादू रखा जो दिखता कपड़े के टुकड़े जैसा था। इसके बाद वे मेरी नाक पर बहुत ही मीठी सुगंध का कोई

जादू-भरा तरल पदार्थ टपकाने लगे। मुझे कै होते-होते रह गयी, परन्तु जल्द ही मैं किसी और जगह जा पहुँचा, जैसा सपने में होता है। मुझे इसके बाद कुछ याद नहीं है; परन्तु मैं जब जागा तो उनकी दूसरी ही झोंपड़ी में था। मेरे घर-वाले वहीं थे और उनके पास धातु का एक टुकड़ा था जिसमें उन्होंने मुझसे अपना मुँह देखने को कहा। मैंने अपना चेहरा उसमें देखा, बिल्कुल वैसा ही जैसा कि नदी के स्वच्छ जल में दिखायी देता है। गोरे डाक्टर ने मेरे ऊपर वाले काले होंठ को खींच कर वैसे ही सीं दिया था जैसे माँ अपने सारंग सीती है। माँ ने मुझे बताया कि वह सारी कार्रवाई खिड़की से देख रही थी; मेरे खून की नदियाँ बह रही थीं। वे डाक्टर किसी चीज़ के टुकड़ों में उसे जमा करके ज़मीन पर बाल्टी में डालते जा रहे थे। मेरा चेहरा अब पुराना चेहरा नहीं रहा था; बिल्कुल नया था जैसा कि अब तुम्हें दीख रहा है। अजीब हैं ये गोरे लोग।"

हमारे पास बिजली नहीं थी इसलिए एक्स–रे की व्यवस्था नहीं हो सकी। बाँहों और टाँगों की टूटी हुई हड्डियाँ हम स्पर्श से अनुमान करके बैठाते थे। खूब सारी प्लास्टर लगाते थे और ढेर सी प्रार्थना करते थे, और टूटी हुई हड्डियाँ ठीक-ठीक जुड़ जाती थीं। 'गैंग्रीन' का खतरा हमेशा बना रहता था। मुझे एक आदमी की याद है। वह खेत में काम कर रहा था कि उसकी भैंस ने उसे घायल कर दिया। उसकी बायीं बाँह की हड्डी टूट गयी और टूटे हुए दोनों सिरे माँस को छेद कर बाहर निकल आये। यह दुर्घटना सुबह घटी थी। दिन भर और अगले दिन सुबह तक उस दूर के गाँव में कोई ओझा स्त्री जड़ी–बूटियों, बाँस के पिंजरों, गोबर और मंत्रों से उसका इलाज करती रही। रात को बाँह से बदबू आने लगी और चमड़ी पर आड़े-तिरछे गहरे रंग के चकत्ते उठ आये।

अगले दिन तीसरे पहर ओझा ने रोगी को हमारे पास भेजा। तब तक 'गैंग्रीन' शुरू हो चुका था। हाथ बिल्कुल ठंडा पड़ा था, सूज गया था और फालों से भर गया था। बाँह में त्वचा के नीचे गैस भर गयी थी। बाँह को काट कर अलग कर देना ही एकमात्र इलाज था। परन्तु यह क़दम उठाने से पहले 'गैंग्रीन' से संघर्ष करना था और आदमी को उस बेहोशी-जैसी हालत से चैतन्यावस्था में लाना था। 'एंटी-गैंग्रीन' औषधि के पहले बड़े-से इंजेक्शन से कोई मुसीबत पैदा नहीं हुई, परन्तु दूसरे इंजेक्शन का बुरा असर हुआ जिससे रोगी मरते-मरते बचा। भरपूर 'एंटिबायोटिक औषधियों' परिपूर्ण परिचर्या और बाँह के विघटन ने उसको मौत के मुँह से बचाया और वह स्वस्थ हो कर अपने गाँव लौटा।

हम नाम-था में आनन्द भी मनाते थे। वह दिन हमारे लिए महान और स्मरणीय अवसरों में से है जिस दिन गाँव के बच्चों का एक नये और मनोरंजक कार्यक्रम से परिचय कराया गया। यह कार्यक्रम था दौड़ों और खेल-कूद का। गाँव के स्कूल के अध्यक्ष के सहयोग से योजना बनायी गयी। फिर जीतने वालों के लिए पुरस्कार ढूँढ कर निकाले। हमने तीन टाँग की दौड़ करायी, पचास मीटर की दौड़ करायी, रस्साकशी कारवायी और अपने यहाँ प्रचलित ऐसे दूसरे कई "प्रगतिशील" कार्यक्रमों का आयोजन किया। इनाम के रूप में अपने पास से चाकलेट, पेंसिलें और कैलेंडर दिये। हमारे पास लाओस-नरेश की कुछ प्रचार-सम्बंधी तस्वीरें भी थीं। ये उच्चतम विजेताओं को दी गयीं। फिर हर विजयी बालक की हमने अपने "पोलेरायड" कैमरा से तस्वीर उतारी। प्रत्येक विजेता को अपने उस गौरव की यह स्थायी यादगार मिली।

चीनी सीमा के निकट-वर्ती प्रदेश के गाँवो में साम्यवादी जिस सफ़ाई के साथ गौरांग-विरोधी प्रचार का विष फैला रहे थे, वह आंशिक रूप में हमारे 'टेरामाइसिन' और 'डेका-वि-सोल' के घोलों में घुल कर मिट गया। परन्तु मुझे विश्वास है कि इस सम्बंध में खेल-कूद और गाँवों में पार्टियों आदि के आयोजनों, फिल्मों के प्रदर्शनों तथा बच्चों के साथ हमारे हेल-मेल ने भी उतनी ही सहायता की।

जान, बाब और मैं — हम तीनों कैथोलिक हैं। उत्तर के एकान्त उस प्रदेश में पादरी नहीं है। हमारे आवास-काल में दो बार एक मिशनरी अवश्य वहाँ हमारे पास आये। उस झोंपड़ी में उन्होंने प्रार्थना करवायी। आधे घंटे के लिए वह झोंपड़ी इस प्रकार भगवान का उपासना-मन्दिर भी बनी। बहुत सुखकर था यह प्रसंग। मैंने संसार के भव्य से भव्य गिर्जाघरों में प्रार्थना में भाग लिया है। संसार के अनेक देशों में, यूरोप की प्रायः सभी और एशिया की कुछ भाषाओं में धर्मगुरुओं के उपदेश सुने हैं; परन्तु उनके शब्द मुझे कभी इतने सार-गर्भित प्रतीत नहीं हुए, उन शब्दों में इतनी गम्भीरता और गहनता प्रतीत नहीं हुई जितनी कि उस छोटे-से फ्रांसीसी मिशनरी के सरल-शब्दों में थी।

नाम-था में हमारा रहन-सहन वाँग वियेंग से अधिक अच्छा था। अच्छा रखना दरअसल जरूरी था, क्योंकि यहाँ परिस्थितियाँ दस गुनी ज्यादा खराब थीं। नाम-था मध्ययुग के गाँव जैसा था। अपने घर को 'रहने लायक़" हालत में बनाये रखने का काम हमेशा ही लगा रहता था। बार-बार हमें उसकी रंगाई, सफ़ाई और मरम्मत करनी पड़ती थी। एक दिन तीसरे पहर एक दीवार का निचला भाग पूरा का पूरा धराशायी हो गया। बाँस को बुन कर दीवारें बनायी जाती हैं। गोबर,

धान का छिलका, पान का रस, चूना और कुछ दूसरी चीज़ें जिन्हें या तो वहाँ के लोग ही जानते हैं या उनका भगवान जानता है, मिलाकर लेई-सी बनायी जाती है। यह बुने हुए बाँस पर चढ़ा दी जाती है। इस तरह घर बन कर तैयार हो जाता है, जिससे एक गन्ध निकला करती है।

बहुत-से लोग कहते हैं कि लाओ लोग आलसी होते हैं। लाओ लोगों की तरह, उनकी-सी झोंपड़ी में रह कर मैंने जो अनुभव किया है उसके बल पर मैं कह सकता हूँ कि यह मत मिथ्या है। मैं कुछ कामों की सूची यहाँ देता हूँ जो हर आदमी को वहाँ करने पड़ते हैं। उसे लोहे को गर्म करके गढ़ना पड़ता है, अपना हल बनाना होता है और उसकी मरम्मत करनी होती है, हल का डंडा और जुआ खुद बनाना होता है। जुताई और बुवाई के लिए हल का फल बार-बार नया बनाना पड़ता है। अपने घर की बराबर मरम्मत करनी होती है, नयी दीवारें बुननी पड़ती हैं, छत के लिए घास-फूस और पत्तों की व्यवस्था करनी होती है, रसोई के उपकरणों की मरम्मत करनी पड़ती है। अपनी गाड़ी उसे ठीक हालत में रखनी पड़ती है, बैलों को चारा-पानी देना पड़ता है, रस्से-रस्सियाँ बनानी होती हैं। ज़रूरी चीज़े खुद जमा करके जाल बनाना पड़ता है और भोजन के लिए मछलियाँ पकड़नी पड़ती हैं। घर के लिए करघा बनाना पड़ता है ताकि पत्नी और लड़कियाँ कपड़ा बुन सकें। परन्तु इसके लिए पहले रूई उगा कर उसे धुनना, साफ़ करना और रंगना पड़ता है। अपने बीमार मवेशियों की देख-भाल उसके ज़िम्मे रहती है। वह खेती करता है, अपने धार्मिक कर्तव्यों का पालन करता है, मुर्गे-मुर्गियाँ और बत्तखें पालता है, बाग़ लगाता है। इतने काम करने वाला आदमी आलसी नहीं हो सकता।

वह अज्ञानी हो सकता है, परन्तु हाथ-पर-हाथ धर कर बैठने वाले सर्व-ज्ञानी व्यक्ति से निकम्मी चीज़ ईश्वर की इस सृष्टि में कोई नहीं होती। लाओ लोगों की अपनी संस्कृति है, एक निश्चित दिशा का ज्ञान उन्हें है; यह ज्ञान संकीर्ण अवश्य है, परन्तु गहन है।

अमरीकी व्यक्ति अपनी कार्य-क्षमता में ह्रास का सन्देह होते ही कई स्फूर्तिदायक वस्तुओं का सहारा लेता है। भोजन के पूर्व बोरबोन (एक प्रकार की मदिरा) और पानी, काफ़ी में थोड़ी-सी अतिरिक्त केफ़िएन (एक औषधि), औषधियों की एक-आध स्फूर्तिदायक गोली भी। लाओ लोगों को ये साधन उपलब्ध नहीं हैं। उनका भोजन न नियमित होता है न विशेष पुष्टिकर। चिपचिपा चावल उनकी खुराक की मुख्य चीज़ है। भाप से पका कर और कई तरह की चटनियाँ मिला

कर वे यह चावल खाते हैं। मछली, मिर्च और दूसरे मसालों से वे अपने भोजन को स्वादिष्ट बनाते हैं। सबसे प्रिय वस्तु का नाम है "पादेक।" नमक और मछली की यह भयावह तरकारी पूर्व की मिर्चों का चटपटा व्यंजन होता है। वियत नाम में इसी को न्यूओक मोम कहते हैं। भोजन में अंडे एक महत्त्वपूर्ण चीज होते हैं। मुर्गी को लाओ में "काइ" कहते हैं और अंडे को "काइ काइ।" दूध की चीज़ें खायी ही नहीं जातीं। गाय, सूअर और मुर्गी के व्यंजन त्यौहारों और दावतों में ही बनाये जाते हैं। इन अवसरों पर चावल की देशी शराब भी पी जाती है। मेरी ज़बान को तो यह शराब मिट्टी का तेल मालूम होती थी।

अफ़ीम के साथ तम्बाकू की खेती होती है। पहाड़ के लोगों के पास जब चावल घट जाता है, तब वे पड़ौस के किसी गाँव में जा कर अफ़ीम या तम्बाकू के बदले चावल ले आते हैं। पाँच-पाँच छः-छः बरस के बच्चों का बड़े-बड़े सिगार पीना कोई असाधारण बात नहीं है। लगभग सभी उम्र के मर्द और औरतें धूम्रपान करती हैं। तम्बाकू उनकी अपनी होती है और उसे केले के छोटे से पत्ते में लपेट कर वे सिगरेट-सा बना लेते हैं।

हमारे भोजन में पूर्व और पश्चिम के व्यंजनों का मेल रहता था। हम वहाँ के दुवले-पतले मुर्गे और अंडे अपने भोजन के साथ मिला कर खाते थे। वहाँ की मछली की तरकारी बन्द डिब्बों के माँस के साथ खाते थे। एक बार बाघ का माँस खाने की भी कोशिश की, लेकिन वह ऐसा लगा जैसे टेनिस के पुराने जूते।

उनके गंदे बच्चे हमारे लिए मनोरंजन का साधन थे। उनका दल हमेशा ही मौजूद रहता था। दिन भर और रात को काफ़ी देर वे हमारे आस-पास घूमते हुए हमें घूर-घूर कर देखते रहते थे। अजीब अमरीकियों को भोजन करते देखने में उन्हें विशेष रूप से आनन्द आता था। कभी उनके चेहरे उतरे रहते थे, कभी खिले रहते थे; परन्तु उनमें कुतूहल और जिज्ञासा की भावना बराबर बनी रहती थी। कुछ बच्चे हमारे सफ़ेद चमकदार चेहरों और हाथों को देख-देख कर आपस में बातें करते थे और कुछ बैठ कर सिर्फ़ देखा करते थे। डूली के इस डेरे में बच्चों पर ही नहीं, किसी पर भी कोई प्रतिबंध नहीं था। कई बार शर्मीले बच्चे अपनी माताओं के साथ आते थे और बार-बार हमारी ओर देख कर अपनी माँ की ओर ताकते थे मानो इस तरह उससे आश्वासन प्राप्त करते हों।

कुछ समय तक एक मेओ लड़का वहाँ रहा था। वह कभी-कभी संध्या को हमारे पास आ बैठता था। मेओ क़बीले के लोग बहुत ऊँचे पर्वतों में रहते हैं। कहते हैं कि ३२०० फ़ीट से कम ऊँचाई पर वे जिन्दा ही नहीं रह सकते। मैंने उस

लड़के से पूछा कि उसके घर वाले हमेशा पहाड़ों की चोटियों में ही क्यों रहते हैं। इसका उत्तर वह न दे सका। उसने कहा कि वह अपने पिता से पूछ कर बतायेगा। कुछ दिन बाद लौट कर उसने बताया कि उसने अपने पिता से पूछा था; परन्तु उसे भी इसका कारण ज्ञात न था और उसका पिता अपने पिता से पूछेगा। बूढ़े का उत्तर था कि उसका दादा वहीं पर्वत के शिखर पर रहता था, और उसके पुरखे वहीं पर दफ़न थे; उस जगह को छोड़ कर कहीं और जाने का कोई कारण उसे दिखायी नहीं देता था।

ये मेओ लोग बहुत-कुछ तिब्बत-वासियों जैसे दीखते हैं और सू-चुआन के प्राचीन मंगोल राज्य से आये हुए हैं। उनकी ज़बान याओ ज़बान से सम्बंधित है। ये लोग ढीली-ढाली नीली पतलूनें और ढीली-ढाली कमीज़ें पहनते हैं, जो कमर के ऊपर तक ही रहती हैं। कमर में ये भड़कदार लाल दुपट्टे बाँधते हैं। गले, कलाइयों और एड़ियों में चाँदी के बड़े-बड़े छल्ले डालते हैं। पुरुष मजबूत और गठे हुए शरीर के होते हैं। उनकी नंगी कमर में पेट की मोटी-मोटी माँसपेशियाँ दिखायी देती हैं। फ्राँसिसियों का कहना है कि लाओस में सबसे अच्छे सैनिक मेओ ही होते हैं। प्रत्येक मेओ के हाथ में आपको एक लम्बी-सी बन्दूक़ दिखायी देगी। ये बन्दूकें घोड़ेदार होती हैं। इनके लिए ये लोग भैंस के सींग को खोखला करके उसमें बारूद भर कर चलाते हैं। बन्दूक़ों की नाल लगभग तीन फ़ीट होती है और हत्थे की बनावट पिस्तौल जैसी होती है। यह बन्दूक़ बड़ी मेहनत के साथ बनायी जाती है। कहा जाता है कि सदियों पहले 'जीसट' सम्प्रदाय के ईसाई मिशनरियों ने चीनी लोगों को कुछ बन्दूकें दी थीं। उन्हीं के नमूने पर ये बन्दूकें आज तक बनती आ रही हैं।

कई बार शाम को इस उत्साहहीन आँखोंवाले मेओ लड़के जैसे अन्य लड़के हमारे साथ देर तक ठहरते थे। हमें अपने पार्सल खोलने में आनन्द आता था और प्रत्येक व्यक्ति, विशेषकर हमारे ये मेहमान, हमें देखने में आनन्द लेते थे। एक ही डाक से इतनी चीज़ें आ जाती थीं कि उन्हें खोलने में घंटों लग जाते थे। हम दवाइयों के नमूने, उपकरण, विटामिन की गोलियाँ, चाकलेट और पत्रिकाएँ, सब-कुछ गौर से देखते थे। हमें ज्ञात हुआ कि मनोरंजन के लिए शराब घर, सिनेमा या टेलिविज़न अनिवार्य नहीं हैं: जीवन की छोटी-मोटी सरल-सहज चीज़ें ही आनन्द प्रदान कर सकती हैं।

कीड़े-मकोड़ों के झुंड-के-झुंड हवामें उड़ते रहते थे। यह सबसे ज्यादा परेशान करने वाली मुसीबत थी। इनके मारे रात में शल्यचिकित्सा करना असम्भव था।

जब किसी संकटापन्न रोगी का आपरेशन रात में करना ही पड़ता था, तो कीड़े बत्तियों के गिर्द उड़ते रहते थे, हमारे बालों में घुस जाते थे, बार-बार चेहरे से टकराते थे और ज़ख्मों तक में पहुँच जाते थे। जालियाँ, पर्दे वगैरे लगा कर हम हार गये; वे किसी चीज़ से रुकते ही नहीं थे। हवा में उनके ठट्ठे जमे रहते थे। कभी तो रातों को हमें बत्तियाँ बुझानी ही पड़ती थीं, क्योंकि उन कीड़ों के मारे जीना भी दुश्वार हो जाता था। हम हार मानकर बत्तियाँ बुझा देते थे और मच्छरदानियों में घुस कर नींद के इंतज़ार में करवटें बदलते रहते थे।

पावी और उसके मित्र जो इसी घर में रहते थे, बराबर हमारे पास आते-जाते थे। वे कोच पर बैठ कर कभी हमसे बातें करते थे, कभी पत्रिकाओं के पन्ने पल्टा करते थे और कभी हमारी ओर केवल ताकते ही रहते थे। दीवार गिराने और बनाने, बारिश का पानी जमा करने, घर की मरम्मत, मकान की बेरौनक़ी घटाने के लिए तस्वीरें चिपकाने, या चमगादड़ पकड़ने के कामों में वे अक्सर हमारा हाथ भी बँटाते थे। पावी के छोटे-छोटे बच्चे घुटनों के बल चलकर हमारे कमरों में आ पहुँचते थे और थोड़ा-सा पेशाब करके लौट जाते थे।

जो थोड़े-से लोग हमसे मिलने नाम-था पहुँचे, उनमें एक महिला भी थीं। उनका नाम था मेरियन डिक्स। आप हालिवुड की फोटोकार और लेक्चरर थीं। उन्होंने हमारे विषय में सुन रखा था। उन्होंने "भाईचारा कार्रवाई," वियत नाम और दक्षिण-पूर्व एशिया के दूसरे हिस्सों के बारे में लघु-चित्र (Documentaries) बनाये थे। उन्होंनें हमें पत्र लिख कर नाम-था आने की इच्छा प्रकट की। हमारा स्वीकृति-सूचक उत्तर उन्हें महीनों बाद मिला; परन्तु उसके प्राप्त होने पर कुछ सप्ताह में ही वे आ पहुँचीं।

अधिकांश लोग डूली से मिलने आने से डरते थे। अनेक तितली-नुमा औरतें तो नाम-था के पास फटकने की बात सोच भी नहीं सकती थीं। कई अमरीकी पुरुष चीन की सीमा के इतने निकट आने और वहाँ पर फँस जाने का ख़तरा उठाने को तैयार न थे। परन्तु मेरियन डिक्स साहसी महिला थीं। उन्होंने हालिवुड की चमक-दमक को नमस्कार किया और एक रोज़ पीठ पर अपना सामान लादे और पतलून पहने नाम-था की उड़न-पट्टी पर उतरीं। सौ पौंड वज़न के कैमरे उनके साथ थे।

एक सप्ताह से कुछ अधिक वे हमारे साथ ठहरीं और हमारे घर के स्नान के फ़व्वारे का भी उन्होंने उपयोग किया। (हमारे फ़व्वारे का उपयोग करने वाली वे पहली और अंतिम महिला थीं।) मैंने मेरियन से कहा कि हम सब उन्हें एक

महान स्त्री मानते हैं। इतनी दूर से नाम-था आना यों ही खतरनाक था; बरसात के मौसम में आने में तो खतरा दुगना था। हमने उनसे इस बात के लिए क्षमा माँगी कि उन्हें हम पुरुषों के बीच ही रहना था; स्त्री कोई न थी। उन्होंने उत्तर दिया–" हर औरत इसीके सपने देखा करती है!" हमारा खाना बनाते-बनाते उन्होंने यह बात कही। इसीसे ज्ञात हो जाता है कि घर में औरत का होना कितना हितकर है।

एक और क़िस्सा मई महीने का है। मिलने-जुलने वाला तो कभी-कभास पहुँचता था और जब पहुँचता था तो वह समय हमारे लिए बड़ा आदन्दमय होता था। यद्यपि हम हमेशा और ज्यादा-से-ज्यादा ज़िन्दादिल बने रहने की कोशिश करते थे, फिर भी अकेलापन हमें काफ़ी खलता था। मेरियन के आने से पहले एक बात हुई। हमने श्रीमती काविन की चौथी प्रसूति करायी। बच्चे की आँखें कुछ नीले रंग की थीं। इसकी गाँव में खूब चर्चा हुई। रंग पर सबसे पहले ग़ौर चाओ खुओंग ने किया था और खूब ज़ोरों से उसने इसकी घोषणा की। इस चौथे बच्चे के जन्म की खुशी में काविन ने हमें शैम्पेन (बढ़िया किस्म की एक शराब) की एक बोतल दी। उसने यह बोतल महीनों से छिपा कर रखी थी। शैम्पेन की इस बोतल की भी एक कहानी थी। राजधानी में काविन का कोई दोस्त था। अपने चौथे बालक के जन्म पर भेंट देने की योजना बना कर कई महीने पहले यह बोतल काविन ने उसी दोस्त से राजधानी से मँगवायी थी। बोतल की कहानी यहीं खत्म नहीं होती।

पहले मैं यह बता दूँ कि हमारा रहन-सहन उन लोगों के निकट था जिनके बीच हम काम कर रहे थे। बिजली के बड़े-बड़े जेनरेटर, पानी के नल, 'हि-फ्री' रेकार्ड-प्लेयर, वगैरा शानदार चीज़ें हमारे पास नहीं थी। इतना ही इन्तज़ाम था कि जीवन असहनीय न होने पाये और साथ ही, जीवन का जो स्तर हमें यहाँ अपनाना पड़ा था, उसके अनुसार कुछ आमोद-प्रमोद भी रहे। निश्चय ही हमें अक्सर अमरीकी जीवन की याद आती थी। जो चीज वहाँ साधारण थी वह यहाँ के लिए ऐश्वर्य का साधन थी। परन्तु आदिम युग के जंगल और छोटे-से गाँव में हम यथासम्भव आराम से रहते थे। हम साफ़-सुथरे रहते थे, कपड़े बदल कर भोजन करते थे, रोज़ दाढ़ी बनाते थे, कभी काम-काज के दबाव में भले ही कोई ऐसा-वैसा शब्द मुँह से निकल जाता था, अन्यथा श्रेष्ठ भाषा का प्रयोग करते थे, और एक शान्तसुखी परिवार की तरह रहते थे। यह सब था, लेकिन 'शैम्पेन' पीने को नहीं मिलती थी।

हमारे एक मित्र श्री बिल डेवीज़ फिलिपाईंस में स्क्विब फार्मास्युटिकल कम्पनी का काम करते थे। उन्होंने हमें लिखा कि वे अपनी कम्पनी के व्यापारियों से मिलने के लिए एशिया के दौरे पर जाने वाले थे। इस यात्रा में वे वियंतियेन आ रहे थे सो उन्होंने पूछा था कि नाम-था आने की भी गुंजाइश थी या नहीं। हमारे काम में उन्हें दिलचस्पी थी। यह स्पष्ट ही है कि हमें स्क्विब फ़ार्मास्युटिकल कम्पनी में दिलचस्पी थी। हमने उन्हें पूरा ब्यौरा लिख दिया कि अगर बरसात से पहले इधर आयें तो कैसे हवाई जहाज़ किराये कर के वे यहाँ आ सकते थे तथा हम उनके आगमन के लिए कितने लालायित थे। मेहमानों से हमें मोहब्बत थी, लेकिन लोग आते ही कभी-कभी थे। अपनी छुट-पुट यात्राओं में एक विमान हमारा यह पत्र ले गया और कई महीने बाद श्री डेवीज़ नाम-था आये। वे हवाई जहाज़ से उतरे तो धूल में नहाये हुए थे। उनका पहला क़दम उड़न-पट्टी की कीचड़-मिट्टी में पड़ा और हमारे मुख पर तुरन्त मुस्कान फूट पड़ी। ये हमारे मेहमान थे—बड़ा कीमती सूट, रेशम की टाई, और उनके कथनानुसार "अट्ठाईस डालर (लगभग सवा सौ रुपये) का जूता।" कीचड़ में धँसते क़दमों से चल कर वे हमारे घर पहुँचे और स्नायविक तनाव से थक कर पड़ गये। उन्होंने कहा कि जीवन में कभी इतनी खौफ़नाक और खतरनाक उड़ान उन्होंने नहीं की थी; उनके विमान का चालक उत्तर की ओर उड़ता ही जा रहा था और उन्हें विश्वास था कि वे बहुत दूर लाल चीन की सीमा में चले आये थे। उनका यह भी कहना था कि जिस कम्पनी में उन्होंने अपना बीमा करा रखा था अगर वह उस हवाई जहाज़ को देख लेती तो उनकी तमाम पालिसियों को फौरन रद्द कर देती। आखिर जब चालक ने नाम-था की उड़न-पट्टी उन्हें दिखायी तो बिल डेवीज़ को वह "बच्चों के खेलने की गली" जैसी लगी।

हमने उनसे कहा कि भोजन करने से पहले वे बरसात के मीठे पानी से फ़व्वारे के नीचे बैठ कर नहा लें। इससे उन्हें आराम पहुँचेगा। उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ कि स्नान का यह "सभ्य" साधन हमारे पास मौजूद था। हमारा प्रस्ताव उन्होंने तुरन्त स्वीकार कर लिया और वे बड़े आनन्द से नहाये। फिर उन्होंने हमारे साफ़ खाकी कपड़े पहने और भोजन करने के लिए तैयार हो गये। हमने अपना बैटरी का टेप-रिकार्डर चला कर कुछ शास्त्रीय संगीत सुना। यह यंत्र बिल डोनोवन ने अमरीकी सूचना सेवा (USIS) सैगोन से भेजा था। उसमें न विज्ञापन थे, न बाजारू संगीत; श्रेष्ठ संगीत मात्र था। इस अवसर के लिए जान और सी ने बहुत ही उम्दा खाना पकाया था। भोजन

के बाद हमने काविन से प्राप्त हुए मेहनताने के रूप में दुर्लभ 'शैम्पेन' का सेवन किया। शराब बहुत ठंडी तो नहीं हो सकी थी, लेकिन जंगल के जीवन में हमारा यह "ठाठ और शान" देख कर डेवीज़ चकित हो गये। कुछ दिन बाद वे हवाई जहाज़ से वियंतियेन वापस लौट गये। इस बार भी उनकी यात्रा आशंकाओं से रहित तो नहीं ही थी। कई महीनों बाद उन्होंने हमें धन्यवाद का पत्र भेजा। पत्र लिखने में विलम्ब करने पर उन्होंने क्षमा माँगी थी और लिखा था कि वे "कांफ़िडेंशियल" पत्रिका के लिए एक लेख लिखने में व्यस्त थे। लेख के लिए उन्होंने शीर्षक सोचा था "गर्म जल के फव्वारे और ठंडी शैम्पेन" अथवा "डूली मिशन की वास्तविकता।"

हमारा जीवन दो दुनियाओं में बँटा हुआ था। कुछ क्षण तो हम ऐसे आचरण करते थे जैसे अमरीका में बैठे हुए हों। ये क्षण आनन्द के होते थे। इसी बीच एकाएक कोई विभीषिका हमारे सामने आ कर हमें उस नर्क की याद दिला देती थी जिसके कि किनारे पर हम बैठे थे। बिल का खत आये कुछ दिन ही बीते थे और हम उस पर हँस रहे थे कि कुछ लोग एक रोगी लड़के को लेकर अस्पताल आये; इसने हमें फिर उसी गन्दगी में धकेल दिया।

उस दिन तीसरे पहर थाइ दाम क़बीले के चार आदमी हमारे पास आये। वे थक कर चूर हो रहे थे। उन्होंने अपने कंधों पर दो बल्लियाँ उठा रखीं थी, जिनसे एक पालकी-सी टँगी हुई थी। पालकी में एक पतले-से गद्दे के ऊपर और सूती कम्बलों के नीचे से एक लड़के का दुबला-पतला उदास चेहरा और बालों से भरा हुआ सर दिखाई दे रहा था। उसका भाई और मित्र कई दिन चल कर उसे अपने गाँव से नाम-था लाये थे। किसी तरह पहाड़ों और घाटी को पार करके वे लोग वहाँ पहुँचे थे। अस्पताल के सामने उन्होंने उस दयनीय प्राणी का बोझा कंधों से उतार कर धरती पर रखा और वहीं जा कर हमने उस लड़के की परीक्षा की। पहली चीज़ जो हमने देखी, वह थी जुँओं की भरमार। सर उसका जुँओं से भरा था और शरीर में खुजली हो गयी थी। कम्बल हटाते ही एक दर्दनाक दृश्य हमने देखा। लड़का ऐसा दीखता था मानो अभी-अभी दाशाऊ कन्सेंट्रेशन कैम्प (बन्दी-शिवर) से छूट कर आया हो। उसका शरीर ऐसा हो रहा था जैसे दर्द के मारे सदा के लिए ऐंठ गया हो। बायीं टाँग की माँसपेशियाँ सड़-सी गयी थीं। उसका रोग बहुत पुराना हो चुका था। चूँकि वह हर समय लेटा रहता था और कभी हिलता-डुलता नहीं था, इसलिए उसका बाकी शरीर अकर्मण्यता के कारण बेकार हो गया था; मानो लक़वा मार गया हो। उसकी दूसरी टाँग में कोई

ख़राबी न थी, लेकिन उसकी जाँघ सूखकर मेरी कलाई के बराबर रह गयी थी। उसका घुटना सूजा हुआ था और उसमें मवाद पड़ गया था। पिंडली की माँसपेशियाँ ऐसी लगती थीं जैसे मेंढक भी टाँगों का माँस। उसकी पीठ और रीढ़ लेटे रहने के कारण फ़ालों से भर गयी थी। गन्दा इतना था कि सर्व-व्यापी मक्खियाँ वहीं उसके चेहरे पर आ पहुँची, उसके मुँह, कानों और आँखों में घुसने लगीं। उसका भाई बराबर उन मक्खियों को उड़ाता जाता था।

हमने उस लड़के को अस्पताल में रखना स्वीकार कर लिया। उसका नाम था नई। परन्तु हमने पहले उसके सामने यह शर्त रखी कि वह नदी पर जा कर खूब अच्छी तरह नहा कर आये। न्यू जर्सी रीड कार्निक फ़ार्मास्युटिकल हाउस ने हमें क्वेल नामक शैम्पू भेजा था जो जुँओं को मारने में रामबाण था। वहीं से एक मरहम भी आया था, जिसके एक बार लगाने से ही खुजली मिट जाती थी। नई जीवन में पहली बार साबुन लगा-लगा कर नहाया और हमने उसे वार्ड में दाखिल कर लिया।

अगले दिन सुबह मेरे साथियों ने हड्डियों के इलाज का ख़ास तरह का पलंग तैयार कर दिया। एक मजबूत चारपाई ले कर उसके कोनों पर सागवान के चार मजबूत खम्भे लगाये गये और उनके ऊपर एक चौखटा जड़ा गया। इस चौखटे से कसरत करने के लिए एक डंडा लटकाया गया। शल्य-चिकित्सा, 'एंटी बायोटिक' औषधियों और मवाद के निकल जाने से जख्म कुछ ही दिन में ठीक होने लगा। अब मुश्किल शारीरिक व्यायाम-उपचार की थी। नई को ठीक होने के लिए कई महीने व्यायाम करने की जरूरत थी। माँसपेशियों को फिर से शक्ति प्राप्त कर यथाविधि काम करने योग्य बनाने की कसरतें उसे हमने सिखायीं। उसकी एड़ी के रग-पट्ठे एक स्थिति में जकड़ गये थे जिसके फल-स्वरूप उसका पाँव टाँग के साथ लगभग सीधा हो गया था और वह अपने पाँव को ऊपर की ओर मोड़ नहीं पाता था। उसका छोटा भाई अस्पताल में रह कर उसकी सुश्रूषा करता था। उसने वे सब कसरतें करना सीख लिया और वह सारा दिन अपने भाई के हाथों और पैरों को उन कसरतों के रूप में हिलाया-डुलाया करता था। वह नई से स्वयं व्यायाम करने का आग्रह भी करता जाता था। मेरा विश्वास है कि इस आदिम जाति में परिवार के सदस्यों में परस्पर जो प्रेम और निष्ठा है उससे तलाक़ प्रथा-ग्रस्त अमरीका को सबक लेना चाहिए।

कई महीनों के बाद नई एक लाठी के सहारे जो उसके भाई ने बना दी थी, अपने पलंग के पास खड़ा होने लगा। जल्द ही चारपाई का चौखटा पकड़ कर

चलने भी लगा। फिर वह वार्ड में चलने-फिरने लगा और एक दिन हमारे पास पहुँचा। वह सारा अहाता पार करके अस्पताल के मुख्य भाग तक पहुँचा था। गर्व से छाती फुलाये हुए वह हमारे सामने खड़ा था। हमें भी उस पर गर्व था। नई ने अपने रोग को जीत लिया था और अपने ही बल से उसने अपनी मॉसपेशियों की अकर्मण्यता पर भी विजय पायी। वह बालक जो मरणासन्न अवस्था में हमारे पास पहुँचा था, कुछ सप्ताह बाद अपने गाँव लौटा। उसका सिर ऊँचा उठा हुआ था, उसके क़दमों में दृढ़ता थी, अमरीकी खाकी कपड़े उसने पहन रखे थे और उसका स्वास्थ्य उसके चेहरे पर दमक रहा था।

नई को कुरूपता और दुख के चंगुल से मेरे साथियों और उसके भाई की सहानुभूति और स्नेह की शक्ति ने निकाला था। इस शक्ति के प्रति आस्था संसार के देशों के बीच सबसे शक्तिशाली कड़ी है। एक एशियाई भाई और कुछ अमरीकी सहायक, इन दोनों की सुश्रूषा ने उस पीड़ित बालक को फिर से अपने पैरों से चलना सिखाया। सहानुभूति और स्नेह भगवान को प्रिय हैं और इनमें मनुष्य को तुरन्त वश में कर लेने की शक्ति है। अब यह लड़का और इसके भाई कभी किसी अमरीकी से नहीं लड़ेंगे। वे हमें प्रेम की भावना से याद करेंगे।

नई जैसे सैकड़ों बीमार हमारे पास आते थे जिनको उपचार से स्वस्थ करना हमारे वश में था। और उस कोढ़-ग्रस्त लड़की जैसे रोगी भी आते थे जिनके स्वस्थ होने की सम्भावना नाममात्र को भी न थी।

हमारा सारा समय दुख-दर्द में ही नहीं बीतता था। उसमें हर्ष और आनन्द की घड़ियाँ भी रहती थीं; वैसे हमारा काम भी हमारे लिए सुख का साधन था। नाम थ में हमारी कुछ अत्यंत आल्हादमयी घड़ियों का कारण था "डैमिट"। मेरे साथी कहीं से एक पालतू लंगूर ले आये थे। उसी का नाम था डैमिट। उसका सारा शरीर कोयले जैसा काला था; केवल चूतड़ लाल थे और उसकी मूँछे सफ़ेद थीं। उसकी आँखों का सफ़ेद भाग भी लगभग काला ही था और मेरा ख़याल है कि उसका व्यक्तित्व भी निस्सन्देह काला था। जब इस दो-फुट प्राणी को हमने अपना स्थायी मेहमान बनाने का निश्चय कर लिया तब उसका नाम रखने के विषय में बहस छिड़ गयी। लाटरी डाली गयी। जीत पीट की हुई। मेहमान की देखभाल करने और उसका नाम रखने का भार पीट के कमजोर कंधों पर आया। लाओ भाषा में काले को "डोम" कहते हैं। इस प्राणी से ज्यादा काली कोई चीज नहीं हो सकती। इसलिए डोम सर्वथा उपयुक्त था। और "डैम" डोम का अत्यंत सहज

अपभ्रंश हो गया। डैम के साथ 'इट' का स्वाभाविक मेल है। अतः नाम पड़ा "डैमिट"। और यही नाम हमेशा रहेगा।

उसकी एक-एक बाँह कंधे से उंगलियों तक तीन-तीन फ़ीट लम्बी थी परन्तु चोटी से एड़ी तक लम्बाई कुल दो फ़ीट थी। इसी से उसकी शक्ल कुछ भद्दी दिखाई देती थी और उसकी चाल भी ऐसी अजीब हो गयी थी जैसी कि मैंने आज तक नहीं देखी। वह अपने पैरों पर सीधा खड़ा हो कर चलता था, एक विशेष वर्ग के अमरीकियों की तरह; परन्तु अपने शरीर का संतुलन बनाये रखने के लिए वह बाँहों को सिर के ऊपर उठा कर, कोहनियां मोड़ लेता था; कलाइयाँ और हाथ पीछे की ओर झूलते रहते थे। वह आगे की ओर झुक कर कुछ उन खिलौनों की तरह डगमगाता हुआ चलता था जो फेरी-वाले गली-गली बेचते फिरते हैं, जब उन्हें ढालू तख्ते पर खड़ा कर दिया जाता है तो वे डगमगाते हुए ढाल पर उतरने लगते हैं। इस चाल के अलावा डैमिट के व्यक्तित्व के और भी कई पहलू थे जिन्हें मैं उल्लेखनीय मानता हूँ। एक था उसका गहरा प्रेम और दूसरे थी उसकी घृणा। पीटर शेरर केसी, जान डीविट्री और राबर्ट वाटर्स तथा और जो भी पास से गुज़रे उन सबके प्रति वह प्रेम दर्शाता था। मेरे सभी साथी और आदमी उसके प्रेमपात्र थे। जहाँ तक सवाल टाम डूली (लेखक) का है, डैमिट को वह फूटी आँख नहीं सुहाता था। डूली उसके पास नहीं फटक सकता था और कभी भूले से पहुँच ही जाता तो डैमिट पेशाब करने में अपनी अचूक निशानेबाज़ी का तुरन्त प्रमाण दे देता था।

डैमिट सबका प्यारा था इसलिए उसकी खूब मनुहार होती थी। मेरे साथी दिन भर लाओ लोगों की देख-भाल करने के बाद रात को उसकी सेवा करते थे। उसका साप्ताहिक स्नान देखने की चीज थी। मुझे यह स्नान देखना बहुत पसन्द था, क्योंकि मैं समझता था कि अगर मिनट भर को भी मेरे साथियों की पीठ मुड़ी तो मुझे उस लंगूर को आसानी से डुबा देने का मौक़ा मिल जायगा। परन्तु क़िस्मत ने साथ ही नहीं दिया!

नहाने के लिए मामूली पानी काम में नहीं लिया जाता था। पसन्द बरसात का पानी आता था लेकिन कभी-कभी नदी का भारी पानी इस्तेमाल करना पड़ता था। चीनी मिट्टी का जो बेसिन हम दाढ़ी बनाने के लिए काम में लाते थे, वह सुकुमार डैमिट का शाही टब बन जाता था। पानी बड़ी सावधानी से तैयार किया जाता था; बढ़िया बढ़िया साबुनों से उसमें झाग उठाये जाते थे, पीट खुद अपनी दूध जैसी सफ़ेद कलाई डुबा कर पानी का तापमान देखता था, और दाढ़ी बनाने के बाद

मुँह पर लगाने वाला लोशन (जो शायद मेरा ही होता था।) डाल कर पानी को सुगंधित किया जाता था। श्रीमान के नंगे पैर पानी में डूबें इसके पहले वह दो-एक लातें जमा देता था और तब धीरे-धीरे उन्हें पानी में उतारा जाता था, बहुत सावधानी से, बहुत धीमे से। आखिर जब उसका शरीर कंधों तक साबुन के झाग में डूब जाता था और बाँहें भी जल-मग्न हो जाती थीं, तब वह राजाओं की-सी बेपरवाही और संतोष की मुद्रा बना लेता था। इस स्नान के बाद कई बार साफ जल में उसे धोया जाता था। यह साफ़ जल पहले से परीक्षा करके तैयार रखा जाता था। इस तरह स्नान पूरा होने के बाद किसी के बढ़िया तौलिये से उसका बदन खूब रगड़-रगड़ कर पोंछा जाता था। डैमिट को यह अत्यन्त प्रिय था। प्रिय किसे नहीं होगा? फिर उसके ज़रा-सा वही लोशन लगाया जाता था (ज्यादा पानी से बदन में खुश्की आ जाती है न!) और सुगंधित कश्मीर बूके पाउडर (जो हमने हाँगकाँग से मँगवाया था) मला जाता था ताकि उसे सुरक्षित होने की अनुभूति रहे; यह अनुभूति होना बढ़ते हुए बन्दरों के लिए बहुत जरूरी है। ऐसे साफ सुथरे और नाजुकमिज़ाज बन्दर को बाहर उस पेड़ से भला कैसे बाँधा जाता जिसके कि नीचे उसका आवास था। इतनी मेहनत के बाद यह सम्भव ही नहीं था। इसलिए कुछ दिन वह घर के अन्दर ही रहता था। मेरे बहुत जोर देने पर ही (मैं दल का प्रधान अधिकारी जो था!) मेरे साथी डैमिट के लंगोटी बाँध देते थे। अपने फुर्सत के समय में वे उसे उठाये-उठाये फिरते थे। साफ़-सुथरी लंगोटी और बच्चों का बनियान – यह उसकी पोशाक होती थी। इस पोशाक में वह आदमी के बच्चे जैसा लगता था।

एक रोज हम गाँव में एक रोगी को देखने उसके घर गये थे। डैमिट पीट के साथ था। सड़क पर सात फुट लम्बा और मेरी कोहनी जितना मोटा साँप सामने आ गया। मैं निश्चित रूप से तो नहीं जानता कि वह कौन-सी जाति का था, परन्तु शायद अजगर रहा होगा। पीट कूद कर हटा और साँप को मारने के लिए उसने पिस्तौल साधी। डैमिट हमेशा की तरह पीट के पेट पर सवार था। अपनी बाँहें उसने पीट के गले मे डाल रखी थीं और टाँगों से उसकी कमर जकड़ रखी थी। डैमिट साँप को देखते ही बारह बरस की लड़की की तरह चीखने लगा। उसकी पकड़ और मजबूत हो गयी। पीट उसे छाती से चिपटाये हुए अजगर को गोली मारने की कोशिश कर रहा था। मुझे बरबस यूनाइटेड स्टेट्स के सरकारी भवनों में लगे हुए वे चित्र याद आ गये जिनमें अमरीका के पश्चिमी भाग के प्रारम्भिक युग का चित्रण किया गया है; विशेषकर वह चित्र जिसमें पश्चिम को बसाने वाले अग्रणियों की एक दृढ़-चित्त महिला अपने बच्चे को छाती से लगाये खड़ी है।

शिकारी था और जंगल में अक्सर बाघों से मल्ल-युद्ध किया करता था। परन्तु दुर्भाग्य से वह रूपवान नहीं था। एक बार वह शिकार पर गया हुआ था कि उसकी भेंट चालेनस्री से हुई और वह उससे प्रेम करने लगा। चालेनस्री बहुत सुंदर थी, परन्तु नीचे घराने की थी। तुरन्त उनका विवाह हुआ और दोनों कई महीने सुख से रहे। दोनों साथ-साथ शिकार करने जाया करते थे। एक बार रास्ते में उन्हें एक डाकू ने रोका। डाकू के चेहरे पर नक़ाब था। लम्बा और सीधा उसका क़द था और उसका बदन लगभग नरेश जैसा ही था। डाकू ने नरेश से सारा धन माँगा। उसने धन दे दिया। फिर डाकू ने सब आभूषण माँगे। वे भी उसने दे दिये। फिर डाकू ने नरेश से उसकी पत्नी माँगी। लेकिन पत्नी देने से उसने इन्कार कर दिया और इस अपमान का बदला लेने के लिए उसने डाकू पर आक्रमण कर दिया। दोनों बराबरी के वीर थे। दोनों कई घंटे लड़ते रहे। डाकू का नक़ाब फट गया। चालेनस्री ने देखा कि वह अत्यन्त रूपवान था। नरेश लगभग जीत ही गया था और यदि उसकी पत्नी ने उसकी तनिक भी सहायता की होती तो नरेश निश्चित रूप से विजयी हो जाता। परन्तु रानी उस डाकू पर वार न कर सकी, क्योंकि दुष्ट होते हुए भी वह सुन्दर था। अन्त में डाकू ने नरेश को धरती पर पटक दिया और अपने चाकू के एक ही घातक वार में नरेश को घायल कर दिया। फिर वह उस बेवफ़ा औरत को अपनी सहगामिनी बनाने के लिए उसकी ओर बढ़ा। वह अब तक जिस प्रकार चुपचाप बैठी हुई दोनों की लड़ाई देखती रही थी, उसी प्रकार अब अपने पति को आहत दशा में मरते देख रही थी। डाकू ने अपना हाथ उसकी तरफ़ बढ़ाया परन्तु वह हाथ तो काले गिबन बन्दर का था; उस पर घने और काले-काले बाल थे। दयालु और सुजान नरेश की हत्या से अप्रसन्न हो कर देवताओं ने डाकू को कांग बन्दर बना दिया था। रानी पर भी वे उतने ही अप्रसन्न थे। अतः उसे उन्होंने सुनहरे रंग की चानी बंदरिया बना दिया।

दक्षिण-पूर्व एशिया के जंगल चानी बन्दरों से भरे हुए हैं। "पू आह" "पू आह" वे पुकारा करते हैं। लाओ भाषा में इस शब्द का अर्थ है "पति।" रानी ने अपने पति की सहायता नहीं की, इसलिए देवताओं ने उसकी संतानों को यह दंड दिया; और चानी व कांग सदा के लिए परस्पर विवाह करने के सुख से वंचित हो गये।

एशियाई बालक बड़े आकर्षक होते हैं। यहाँ उत्तरी लाओस में तो लगता है मानों सब परिवार अपने-अपने बच्चों के केशों को सुन्दर और विभिन्न ढंगों से सँवारने में परस्पर होड़ करते हैं। कुछ अपने बच्चों के केवल एक चोटी रखते है,

बाक़ी का सिर मूँड देते हैं। चोटी पूँछ की तरह बढ़ती रहती है। उत्तर के कौटोनीज़ वर्ग में यह शृंगार प्रचलित है। वे चोटी को गूँथते हैं। कुछ परिवार लड़कों के सिर इस तरह मूँडते हैं कि सिर्फ़ सामने की तरफ़ बालों की कुछ लटें रह जाती हैं। ये बाल टट्टुओं के अयाल जैसे दीखते हैं। कुछ परिवारों में सिर के और सब केश तो मूंड दिये जाते हैं; सिर में चारों ओर एक घेरा-सा छोड़ दिया जाता है, कुछ वैसा, जैसा कि फ्रांसिस्कन वर्ग के पादरी रखते हैं।

पहाड़ों में लड़कियाँ बाल कटवाती ही नहीं, उन्हें खूब लम्बा बढ़ने देती हैं और जूड़ा बाँधती हैं। जूड़े में तरह-तरह के आभूषण लगाती हैं जैसे चांदी की लम्बी-लम्बी सलाइयाँ, चाँदी के काँटे जिनमें घुंघरू लगे रहते हैं, चाँदी की मुद्रियाँ और चाँदी की बारीक काम की जंजीरें आदि। यह शृंगार अत्यंत सुन्दर दिखायी देता है। अधिकांश स्त्रियों के बाल घुटनों-घुटनों तक आते हैं। नदी नहाते समय वे अपने केश खोल देती हैं। वह दृश्य बड़ा भव्य और आकर्षक होता है। केशों के शृंगार के लिए वहाँ दुकानें नहीं हैं; बालों को घुंघराले करने के साधन महिलाओं के पास नहीं हैं, बाल जमाने के तेल आदि भी उन्हें प्राप्त नहीं हैं। उत्तर में थाई दाम युवतियाँ जूड़ा या तो सिर के पीछे बाँधती हैं या सिर के ऊपर। अविवाहित युवतियों के जूड़े गर्दन के पिछले भाग में नीचे झूलते रहते हैं और पति का चुनाव करने के बाद जूड़े का स्थान सिर के ऊपरी भाग में हो जाता है।

लाओस में हम सबने स्थानीय भाषा बोलना सीखी। निस्सन्देह हम धाराप्रवाह नहीं बोल पाते थे, परन्तु काम चलाने लायक़ बोल लेते थे। डाक्टरी लाओ भाषा तो आसान है। "चेप" शब्द का अर्थ है पीड़ा। "ली" का अर्थ है अत्यधिक। वास्तव में "ली" सभी बातों में अधिकता का परिचायक है। इस शब्द को बोलने में जितना लम्बा खींचा जाय और जितनी ऊँची आवाज़ में बोला जाय, उतनी ही अधिक तीव्रता उससे प्रकट होती है। शरीर के अंगों के नाम सीखना ही पर्याप्त है, या उसका काम रोगी के इशारों को देखने से भी चलाया जा सकता है। जैसे रोगी सिर की ओर इशारा करते हुए कहे "चेप हुआ ली ई ई ई ई ई" तो समझ जाइये कि दर्द कहाँ है। यद्यपि हमने रोगी और उपचार की समस्याओं को समझने तथा अस्पताल में अपनी बात समझाने लायक़ भाषा का ज्ञान प्राप्त कर लिया था, तथापि गवर्नर के साथ भोजन करने में हमेशा ही कठिनाई का अनुभव होता था। शब्दों का हम हमेशा ही गलत ढंग से उच्चारण कर जाते थे। उदाहरण के लिए, चूज़े, अंडे, बुखार, दूर या नजदीक—इन सब शब्दों के लिए लाओ भाषा में एक ही शब्द है "काई।" इस शब्द को बोलने में लम्बा कर दीजिये तो अर्थ कुछ और

होता है और छोटा कर दीजिये तो कुछ और। अब आप समझ सकते हैं कि इससे कितनी उलझन पड़ सकती है।

डाक्टरी की कई ऐसी समस्याएँ थीं, जिनके लिए हमने कोई व्यवस्था नहीं की थी। इनमें एक थी दाँत का इलाज। दाँतों के कोई औजार मैं नहीं लाया था। उनसे कुछ लाभ भी न होता, क्योंकि इस विज्ञान का मुझे ज्ञान ही नहीं था। जब लोग दाँत हिलने की शिकायत ले कर आते थे तो उपचार तो स्पष्ट ही था। शुरू के एक पखवाड़े तक तो बेकर के औज़ार काम देते रहे। कम से कम दाँत निकालने के लिए तो उनका उपयोग हो ही सकता था। उन प्रारम्भिक दिनों की वियंतियेन की यात्राओं में एक बार हम स्वास्थ्य-मंत्री के पास पहुँचे। उन्होंने सरकार के दवाइयों और डाक्टरी औजारों के संग्रह से कुछ भी लेने की स्वतंत्रता हमें दी थी। इसमें अधिकांश औषधियाँ और उपकरण लाओ सरकार को अमरीकी सहायता के रूप में मिले हुए थे। चूँकि राज्य में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के अनुसार कुल एक ही डाक्टर था, इसलिए अधिकांश औषधियाँ केवल संग्रहालय की ही शोभा बढ़ाती थीं। मैं यह देख कर हैरान रह गया कि बढ़िया से बढ़िया औषधियाँ और उपकरण वहाँ रखे थे, परन्तु उनका कोई उपयोग नहीं हो रहा था। हमने दाँतों के इलाज के सामान की अल्मारी सम्हाली और आवश्यकता का सब सामान ले लिया। अधिकांश औजार देख कर लगता था कि उनसे काम लेना आसान नहीं था। उनसे मैं अपरिचित तो निश्चय ही था। कौन जाने किसका क्या उपयोग था?

मैंने सेंट लुई के एक दाँत के डाक्टर, डा. कार्ल स्ट्रोबाश को अपनी समस्या लिख भेजी। कब दाँत निकालना चाहिए, कब नहीं निकालना चाहिए, और कैसे निकालना चाहिए—यह सब उन्होंने मुझे ब्यौरेवार लिख भेजा। साथ में स्पष्ट चित्र भेजे। दाँतों की कुछ बुनियादी बीमारियों के इलाज भी उन्होंने लिख कर भेजे। बाद में उन्होंने कुछ नये किस्म के नाजुक औज़ार भी भेजे जिन्हें हम पुराने औजारों की जगह, काम में लाने लगे।

अस्पताल में जितना समय हमें रोगियों की देख-भाल में लगता था, उसमें लगभग दसवाँ भाग दाँतों के इलाज में लगने लगा। समस्या कुछ भी होती हमारे पास इलाज एक ही था—दाँत निकालो। हर बार दाँत निकालने में पहले हम रोगी को पेनिसिलीन का इंजेक्शन लगा देते थे ताकि कोई नयी मुसीबत उस पर न आये। वे लोग यह कभी नहीं समझे कि तकलीफ़ दाँत में होने पर भी हम सूई उनकी कमर के भी नीचे क्यों लगाते थे। मेरा विश्वास है कि दाँत निकालना हमारी कठिनतम समस्याओं में से था। बड़ी मुश्किल से हम इस काम के अभ्यस्त

हुए। दाँत निकाल कर मैं और मेरे साथी अपने हाथों को कई मिनट तक अल्कोहोल (मद्यसार) से साफ किया करते थे। मुझे तो इस काम से घृणा ही थी, इसलिए मैं यह काम अपने साथियों पर ही डालता था।

इस तरह दिन और रातें गुजरती गयीं। सप्ताह और महीने बीतते गये। त्वचा की भयंकर बीमारियाँ, दाद, खुजली, अजीर्ण, कोढ़ आदि नारकीय यंत्रणाओं से नाम-था में नित्यप्रति मुकाबला होता था। दुख-दर्द का राज था—आँखों में गन्दगी और मवाद, शरीर पर कपड़ों की जगह चीथड़े, दुर्बल और दयनीय; ये बच्चे "हमारे" बच्चे बन गये, उनकी समस्याएँ "हमारी" समस्याएँ बन गयीं। जब उनकी हालत सुधरती तो हमें भी खुशी होती। और जब वे धन्यवाद देते तो हमें और कुछ लेना शेष न रहता। छोटी-छोटी सी सिद्धियों में ही हमें सन्तोष की अपार निधि मिल जाती थी। ऐसे ही क्षणों में कभी-कभी हमें लगता था जैसे ईश्वर हमसे कह रहा हो कि वह हमारे काम से प्रसन्न है।

कालेज में हमें ईश्वर की सर्व-व्यापकता का पाठ पढ़ाया गया था। परन्तु स्थूल भौतिकता में डूबे रह कर अणु-अणु में ईश्वर के दर्शन करना कठिन होता है। मैं तो शानदार मर्सीडीज-बेंज़ मोटर देखते हुए हर्गिज़ भी ईश्वर के दर्शन नहीं कर सकता। जंगल में उसके दर्शन करना अपेक्षाकृत सरल है। यहाँ हम ईश्वर को अधिक अच्छी तरह जान सकते हैं। कदाचित् एकान्तता इसका कारण हो। उष्ण कटिबन्ध क्षेत्र की वर्षा में, बरसाती कीचड़ में, पहाड़ों में चलते समय धरती से जो मधुर गंध आती है, उस गंध में हमें ईश्वर के दर्शन हो जाते हैं। फूल-पत्तों में, इमली के विशाल वृक्षों में, घास-फूस की छतों में, पहाड़ियों और घाटियों की शान्ति में, नदी की ठंडक और ताज़गी में, रात की अंधियारी में, बाज़ार की चहल-पहल में—सब में। हम जितना समझते हैं उससे कहीं अधिक घनिष्ठता से ईश्वर हमारे अन्तर में ही विद्यमान है। हमें कुछ क्षणों के लिए अपने अन्तर में पैठ कर उसे खोजना चाहिए। जीवन का अर्थ बहुत महान हो सकता है। हमें अपने अन्तर की आवाज़ को सुनना चाहिए। आवश्यकता इतनी ही है कि हम उसे अच्छी तरह कान दे कर सुनें और अपनी आँखों से गहराई तक देखें। यदि मनुष्य प्रकाश को देख ले, मधुर गंध को ग्रहण कर ले, ध्वनि को सुन ले तो वह आत्मा को तृप्त करने वाले संतोष में डूब जाता है।

अपनी आध्यात्मिक शक्ति के संग्रह का सहारा लिये बिना संसार में कुछ भी करना मनुष्य के लिए वैसा ही होता है जैसे दो इंजनों वाले विमान को केवल एक

इंजन के बल पर उड़ाना। शायद वह अपने लक्ष्य को प्राप्त कर ले, परन्तु कठिनाई बहुत होगी। अक्सर बहुत रात गये बाब, जान और मैं अपनी चारपाइयों के पास घुटने टेक कर बैठ जाते थे और मुँह से बोल कर ईश्वर की प्रार्थना करते थे। जब हमें बाइबल के निम्नलिखित शब्द याद आये तो हमारे सारे कार्य का अर्थ ही बदल गया : "मेरे भाइयो, जो कुछ भी तुमने किसी छोटे से छोटे जीव के लिए किया है, वह तुमने मेरे लिए किया है।"

अध्याय ८

शाही मेहमान

लाओस में दस महीने गुजरने के बाद मैंने समझा कि राजनीतिक स्थिति के बारे में मेरी जानकारी अब भी उतनी ही थी जितनी कि शुरू में थी। ऐसा लगता था मानो देश का राजनीतिक अस्तित्व ही नहीं हो; उसमें केवल अदृश्य छायाएँ रहती हों। संघर्ष-रत शक्तियों और हर दम के ख़तरों का आभास बराबर बना रहता था तथापि उन्हें स्पष्ट रूप में देखना और पहचानना असम्भव था।

वहाँ की अजीब आन्तरिक परिस्थिति कुछ अंशों में इसके लिए जिम्मेदार थी। लाओस के शाही राज्य में अन्दरूनी फूट पड़ी हुई थी। बूढ़े नरेश सिसावांगवोंग जो "फ्रांसीसी संघ के अन्तर्गत स्वतंत्र राज्य" के शासक थे, प्राचीन राजधानी लुआंग परबंग में इस तरह जीवन बिता रहे थे जैसे सब कामकाज से अवकाश ले चुके हों। उनके तीन भतीजे थे। लाओस की राजनीति में शक्तियाँ इन्हीं तीनों की थी।

एक भाई राजकुमार सूवानाफूमा प्रधान मंत्री था और वह लाओस को पश्चिम के प्रति मित्रता की भावना से युक्त संवैधानिक राजतंत्र के रूप में कायम रखने को प्रयत्नशील था। दूसरा भाई राजकुमार सूफानूवोंग का झुकाव चीन और उत्तरी वियतनाम के साम्यवादियों के प्रति था। तीनों सौतेले भाइयों में सबसे बड़ा था राजकुमार फेटसेराथ। इसे कभी-कभी "लाओस का जार्ज वाशिंगटन" कहा जाता था। इसने राजनीति में सक्रिय भाग लेना बन्द कर दिया था और अपने दोनों भाइयों में समझौता करवाने के अजीब प्रयत्न कर रहा था। परन्तु तीनों भाइयों का कहना था

कि उनके राजनीतिक मतभेद "पारिवारिक मामले" है जो शान्तिपूर्वक और धीरे-धीरे निबट जायेंगे।

१९४० में जब फ्रांस की विची सरकार ने इंडो-चीन पर जापान के कब्जे को स्वीकार कर लिया था, तब राजकुमार फेटसेराथ ने यह रुख अपनाया था कि अपने इस निर्णय के परिणाम-स्वरूप फ्रांस ने लाओस को उपनिवेश अथवा सुरक्षित राज्य रखने का सब अधिकार गँवा दिया है। इसके बाद १९४५ में जापान ने पराजित हो कर प्रयाण करने से पहले लाओस को स्वतंत्र राज्य घोषित कर दिया। नरेश सिसावंगवोंग अपना देश छोड़ कर थाइलैंड में जा बसे और राजकुमार फेटसेराथ लाओस गणराज्य के अध्यक्ष बने। यह गणराज्य १९४५ से १९४६ तक ही कायम रहा।

१९४६ में फ्रांस ने लाओस को फिर से जीता और नरेश सिसावंगवोंग को वापस गद्दी पर बैठाया। तीनों राजकुमार और स्वतंत्र लाओस दल के कोई दस हज़ार सदस्य बैंकाक भाग गये। उसी वर्ष के अन्तिम भाग में फ्रांस और इंडो-चीन का युद्ध छिड़ गया। तीन वर्ष बाद १९ जुलाई, १९४९ को युद्ध-रत फ्रांस ने लाओस को फ्रांसीसी संघ के अन्तर्गत स्वतंत्र देश घोषित कर दिया। तीनों राजकुमार अपने अनुयायियों सहित लौट आये परन्तु राजनीतिक रूप से परस्पर सहमत न हो सके। राजकुमार सूवानाफूमा प्रधान मंत्री बने। राजकुमार सूफानूवोंग ने पाथेत लाओ (स्वतंत्र लाओ) आन्दोलन की बागडोर सम्हाली और साम्यवादी वियतमिन्ह से गठबंधन कर लिया। "बुजुर्ग राजनेता" राजकुमार फेटसेराथ ने राजनीति से अवकाश लेने की घोषणा की।

फिर १९५३ में साम्यवादी वियतमिन्ह ने वियतनाम से उत्तरी लाओस पर आक्रमण किया और पाथेत लाओ से सहयोग किया। १९५४ में जिनीवा सम्मेलन में संधि की शर्तें तय की गयीं। उनके अनुसार पाथेत लाओ ने अपनी सेनाएँ दो उत्तरी प्रान्तों साम न्यूआ और फोंग सैली में सीमित कर लीं। यह भी तय हुआ कि शाही सरकार "पाथेत लाओ के साथ मिलकर" इन प्रान्तों का प्रशासन करेगी। सूफानूवोंग और सूवानाफूमा ने कई प्रयत्न किये कि दोनों में किसी प्रकार का सहयोग हो जाय। राजकुमार फेटसेराथ मध्यस्थ थे। १९५७ के अन्त में जब मैं लाओस से रवाना हुआ तब तक ये प्रयत्न सफल नहीं हुए थे।

मुझे जल्द ही पता चल गया कि यह "पारिवारिक मामला" बहुत नाज़ुक चीज़ थी। लाओ सरकार के सदस्य पाथेत लाओ को स्नेहपूर्वक "हमारे विपक्षी भाई" कहते थे। वे ज़ोर दे कर कहते थे कि राजकुमार सूफानूवोंग और पाथेत

लाओ साम्यवादी नहीं थे। नाम-था में भी चाओ खुओंग कभी यह नहीं मानता था कि लूट-मार और अत्याचार करने वाले साम्यवादी लुटेरे लाओ लोग थे। उसका कहना था कि वे लोग बर्मी, चीनी, वियतनामी या ग़ैर-लाओ क़बीलों के सदस्य थे।

पाथेत लाओ के प्रति इस रुख से बरबस ही मुझे चीन के साम्यवादी होने से पहले के युग के "निर्दोष कृषि-सुधारकों" की याद हो आती थी। पूर्व-साम्यवादी चीन से लाओस की एक और भी समानता थी जिससे मुझे बहुत खतरा मालूम होता था; वह थी लाओ किसान जनता की राजनीतिक अनभिज्ञता।

लाओ जनता, विशेषकर उत्तर की जनता साम्यवाद अथवा जनतंत्र से बिल्कुल अपरिचित थी। वह न पश्चिम समर्थक थी, न पश्चिम-विरोधी। ये ऐसे बड़े विषय थे कि उनकी समझ और जानकारी से ही परे थे। उनमें बेचैनी थी और इसमें कोई सन्देह नहीं है कि ये बेचैनी उनमें उकसाई जा रही थी। चाओ खुओंग को सन्देह था कि गाँव के "अध्यापक" इस आन्दोलन के प्रमुख थे। मुझे विश्वास है कि यह सन्देह सही था।

बड़ी चतुराई के साथ यह आन्दोलन ऐसे विषयों से जोड़ा गया था जिन्हें जनता समझ सकती थी। आन्दोलन शाही लाओ सरकार, विदेशियों और विशेषतया गौरांग लोगों के विरुद्ध था। फरंग-विरोधी आन्दोलन था यह।

पहले-पहले तो मैं इस शब्द "फरंग" से जो लाओस में हर जगह सुनने में आता है, बहुत हैरान हुआ। लोग अक्सर मुझे "थान्ह मो फरंग" कह कर बुलाते थे। 'थान्ह' का अर्थ है माननीय और 'मो' का अर्थ है औषधि अथवा डाक्टर। कुछ समय बाद मेरी समझ में आया कि फरंग "फ्रेंके" अथवा फ्रांसीसी का अपभ्रंश है। प्रारम्भ में यह शब्द घृण्य औपनिवेशिक प्रशासकों के लिए प्रयुक्त होता था। फिर धीरे-धीरे सभी गौरांग विदेशियों के लिए प्रयुक्त होने लगा। हमारे दुभाषियों ने लोगों को समझाया कि मैं फरंग नहीं था और उन्हें मुझे 'थान्ह मो अमेरिकन' या केवल 'थान्ह मो' कह कर सम्बोधन करना चाहिए।

लाओ लोगों की राजनीतिक अज्ञानता अथवा साम्यवादी आदर्शों के प्रति उनका अज्ञान मेरे लिए शान्ति का कारण हर्गिज नहीं था। उल्टे, चीन की बात याद कर के मुझे इस परिस्थिति से भय होता था। इस परिस्थिति का अर्थ होता था कि दल चाहे शाही लाओ हो चाहे पाथेत लाओ, चाहे जनतंत्रवादी हो चाहे साम्यवादी जो भी इन लोगों को मौजूदा परिस्थियों को बदल देने के सब्ज बाग दिखायेगा, वही उनके दिल और दिमाग को जीत लेगा।

एकाएक हमें बताया गया कि लाओस के वाइसराय, हिज हाईनेस राजकुमार फेटसेराथ दो दिन में हमारे गाँव आ रहे हैं। अमरीकी डाक्टरी दल से उनकी भेंट निश्चित थी। हम लोग अपने को राजनीति से बिल्कुल बचा कर चल रहे थे, परन्तु अब लग रहा था कि हमें शायद अपनी इच्छा के विरूद्ध उसमें धकेल दिया जायगा।

सारी दोपहर और अगले दिन सुबह सारा गाँव शाही मेहमान के स्वागत की तैयारी में बहुत व्यस्त रहा। फलों और झाड़ों के तोरण-द्वार बनाये गये, 'लान' साफ किये गये और चाओ खुओंग ने जो लाओ ध्वज बाँट दिये थे, वे जगह-जगह लगाये गये। राजकुमार फेटसेराथ लाओ में बहुत लोकप्रिय हैं।

उनके आगमन के दिन ठीक दोपहर से कुछ पहले सेना, गाँव के लोग, बच्चे और नाम था का हर व्यक्ति (जिनमें हम चार अमरीकी भी शमिल थे), उड़नपट्टी से चाओ खुओंग तक रास्ते के दोनों ओर कतार बाँध कर खड़े हो गये। चाओ खुओंग, मेयर व गाँव के अधिकारियों ने कलफ लगे हुए सफेद कोट पहन रखे थे जो अमरीकी नौसेना की ग्रीष्मकालीन वर्दी जैसे मालूम होते थें। कोट के साथ उन्होंने बैंगनी रंग की रेशमी बिरजिस पहन रखी थी और उसके ऊपर दोनों टांगों के बीच झूलती हुई कपड़े की एक पट्टी-सी कमर से बाँध रखी थी। काले लम्बे मोजे और काले जूते भी शाही वर्दी का अंग थे।

दोपहर बीत गयी और उसके बाद भी कई घंटे बीत गये। बच्चों ने ही नहीं, उनके बड़ों ने भी कतारें तोड़ दी थीं। हम हवाई अड्डे की झोंपड़ी के पास जा बैठे और सोचने लगे कि राजकुमार उस दिन के बजाय कहीं अगले हफ्ते तो नहीं आयेंगे। जान डीविट्री पीट को फ्रांसीसी बोलने का अभ्यास कराने लगा। पीट डाक्टरी के बहुत से फ्रांसीसी शब्द जानता था; और फ्रांसीसी वार्तालाप का अर्थ भी समझ लेता था, परन्तु फ्रांसीसी भाषा में किसी राजकुमार का अभिवादन करना उसे नहीं आता था। मुझे और जान को भी नहीं आता था। इसलिए हमने चाओ खुओंग से दरियाफ़्त किया। उसने फ्रांसीसी भाषा के उपयुक्त शब्द हमें बता दिये।

आखिर हवाई जहाज की आवाज सुनायी दी। सब लोग फिर से अपनी-अपनी जगह जा कर खड़े हो गये। बौद्ध भिक्षुओं ने उस जगह निशान लगा दिया जहाँ हवाई जहाज से राजकुमार को उतरना था। हम भाग कर कतार में अपने निश्चित स्थान पर खड़े हो गये। हवाई जहाज उतरा और उतर कर रुका। कुछ उनींदे-से सैनिक उतरे। वह राजकुमार का विमान नहीं था। राजकुमार के अग्रगामी सैनिक

रक्षकों का विमान था वह। सभी ने निराशा व्यक्त की। चाओ खुओंग की अभिव्यक्ति सब से जोर की थी।

कुछ देर बाद आसमान से एक और विमान की आवाज आने लगी। आखिर राजकुमार ने नाम-था की धरती पर पाँव रखा। चुस्त और बूढ़े राजकुमार ने फेल्ट हैट लगा रखा था। पोशाक वही सफेद और लाल थी। हाथ में छड़ी थी, परन्तु सहारे के लिए नहीं थी। राजकुमार ने भिक्षुओं के सामने झुक कर उनकी अभ्यर्थना की और फिर तेजी से बच्चों की कतारों के बीच चलने लगे। प्रत्येक बच्चा उन्हें वे गुलदस्ता देता था और वे गुलदस्ते को अपने दल के आदमियों को पकड़ा देते थे। आदमी गुलदस्तों को चाँदी के गुलदानों में रखते जाते थे। ये गुलदान इसी अवसर के लिए लाये गये थे। हर आदमी एक घुटने के बल बैठ कर हाथ जोड़ता था और हाथों की उंगलियों को नाक से लगा कर सर झुकाता था। लाओ लोग राजकुमार का इसी तरह अभिवादन करते हैं। हमने तुरन्त सोच लिया कि चूँकि यह अमरीकी विधि नहीं है, इसलिए हम आदर के साथ केवल हाथ मिलायेंगे।

हमारी पंक्ति में पीट सब से आगे था। उस टेक्सास-वासी को देख कर राजकुमार को बहुत आश्चर्य हुआ। उन्होंने चाओ खुओंग की ओर देखा और उसने बताया कि यह नाम-था में आये हुए अमरीकी डाक्टरी दल का एक सदस्य था। इस गड़बड़ी में पीटर ने अपना हाथ बढ़ाते हुए फ्रांसीसी भाषा में कहा: "मैं पीटर हूँ।" यह सुन कर मेरी बड़ी प्रबल इच्छा आगे यह कहने की हुई कि "और इस चट्टान पर मैं अपना गिर्जाघर बनाऊँगा।" राजकुमार मुस्करा दिये। मैंने कुछ कहा। यह तो याद नहीं कि क्या कहा लेकिन वे चाओ खुओंग द्वारा बताये गये अभिवादन के शब्द तो नहीं ही थे। बाब ने हाथ मिलाकर कहा, "हलो, श्रीमान्!" हमारे कूटनीतिज्ञ जान ने बड़ी आसानी और सफाई के साथ अभिवादन के सही मुहावरों का प्रयोग किया।

शाम को चाओ खुओंग ने छोटा-सा राजकीय भोज किया। हमें उसमें आमंत्रित नहीं किया गया था और न हमें आमंत्रण की अपेक्षा थी, क्योंकि यह एक राजकुमार की राजकीय यात्रा थी। परन्तु स्पष्ट था कि राजकुमार का मत कुछ और था। अन्तिम क्षण मुझे हुक्म मिला कि सात बजे मैं भोज में उपस्थित होऊँ। नाम-था में मेरे पास औपचारिक कपड़े तो थे नहीं, खाकी कपड़े थे और पहाड़ों में काम देने लायक थे। मैंने एक साफ-सुथरी पतलून निकाली और कोट काबिन से मँगनी लिया। मेरे पास एक सफेद कमीज थी और एक हरी टाई थी। इस तरह जिन्दगी में पहली बार जब मैं किसी शाही खान्दान के आदमी के साथ भोजन करने

बैठा, तब मैं खाकी पतलून, सफेद कमीज, हरी टाई और भूरे रंग का बहुत तंग कोट पहने हुए था।

राजकुमार ने मेरी सारी हिचकिचाहट तुरन्त दूर कर दी। बड़े आकर्षक ढंग से वे पेश आये। मेरे काम में उन्होंने बड़ी दिलचस्पी दिखायी। मुझे जिन राजनीतिक सवालों में फँस जाने का डर था वे "खतरनाक" सवाल उन्होंने उठाये ही नहीं। हमने अमरीका के रंगभेद के दंगों, या विदेश मंत्री डलेस की मान्यताओं या राजदूत पार्सन्स की राजनीति की बिल्कुल चर्चा नहीं की। उन्होंने मुझसे अपने भाई के विषय में मेरे स्पष्ट विचार नहीं पूछे और न वे साम्यवादी शब्द अपनी जबान पर लाये। हम बातें करते रहे प्रसूति के बारे में, मुर्गियाँ पालने और 'लान' को भैंसों से बचाने के बारे में, गाँव-वालों को गन्दे पानी का अजीर्ण से सम्बंध समझाने के बारे में। बातचीत हुई फ्रांसीसी भाषा में।

मैंने "केअर" के प्रसूति के साज-सामान के थैलों के बारे में उन्हें बताया। उन्होंने वह थैला देखने की इच्छा से मुझे अस्पताल से एक थैला ले आने को कहा। मैंने पूछा "अभी?" मेरी इस मूर्खता पर चाओ खुओंग का दम खुश्क हो गया। राजकुमार ने जवाब दिया—"और क्या; अभी।" सो लगभग ग्यारह बजे रात को मैं अस्पताल से वह दाइयों वाला एक थैला लाया। राजकुमार ने उसकी सारी चीजें निकाल कर मेज पर रख दीं और एक-एक चीज को ध्यान से देखने लगे। मेरा खयाल था कि राजा लोग बहुत-सी बातें नहीं जानते, परन्तु राजकुमार को उनका बहुत अच्छा ज्ञान था।

जब मेरे चलने का समय हो गया (चाओ खुओंग को एक टक अपनी ओर देखते हुए देख कर मुझे इसका आभास हो गया) तब मैंने राजकुमार को नमस्कार किया; सीधे खड़े हो कर (अमरीकी ढंग से) मैंने हाथ जोड़े और विनम्रतापूर्वक सर झुकाया (लाओ ढंग से) और कहा "शुभ रात्रि, श्रीमान्" (फ्रांसीसी भाषा में)। राजकुमार ने पूछा कि हम नाश्ता किस समय करते हैं। मैंने कहा—"लगभग सूरज निकलने के समय।" उन्होंने जवाब दिया—"बहुत अच्छा, मैं आऊँगा।"

मैंने घर पहुँच कर अपने साथियों को जगाया और उनसे कहा कि सुबह राजकुमार हमारे साथ नाश्ता करने आ रहे हैं। हमने उसी समय घर को झाड़-बुहार कर साफ किया, आधी रात को ही। सुबह जल्दी ही जान अपनी ठाटदार काफी बनाने में लग गया और हमारे दुभाषिये सी, चई और किउ तो डर के मारे पत्थर की मूर्तियाँ बन कर बैठ गये। सी की समझ में नहीं आ रहा था कि वह मेज पर

काफी कैसे प्रस्तुत करेगा, क्योंकि राजकुमार बैठे होंगे कुर्सी पर और उस हालत में अपना सर राजकुमार के सर से नीचे स्तर पर रखने के लिए भी जमीन पर बैठ कर ही सरक सकता था। "हाथ में गर्म काफी की केटली पकड़ कर मैं सरकूँगा कैसे?" यह उसकी समस्या थी। हमारे पास इसका कोई हल नहीं था।

राजकुमार एकाएक अपने दल-बल के सहित सीढ़ियों तक आ पहुँचे। अब सीढ़ियाँ उतरता था, तो उनसे टकरा जाता। और यहाँ दस फीट की ऊँचाई पर खड़ा रहना अमरीकी रीति से भी शिष्टाचार के विरुद्ध जान पड़ता था। परन्तु राजकुमार ने जल्दी-जल्दी सीढ़ियाँ चढ़ कर यह समस्या हल कर दी। कोई दुर्घटना भी नहीं घटी। फिर उन्होंने हमारे घर की एक-एक चीज़ देखनी शुरू की—चटाइयाँ, दीवारें, प्रेसिडेंट आइसनहावर और लाओस-नरेश की तस्वीरें, बल्लियाँ, हाथ धोने का बेसिन, नहानेका फव्वारा, किताबों की अलमारी, बक्स, सोफा, दवाइयों की अल्मारी, मिट्टी के तेल के लैम्प, मिट्टी के तेल का कोल्मन स्टोव और दूसरी छोटी-मोटी चीजें।

फिर वे शाही ठाठ से बैठ गये। जान ने पूछा—"कोई साहब काफी लेंगे?" राजकुमार ने नाश्ता नहीं किया इसलिए किसी और ने भी नहीं किया। राजकुमार सूरज निकलने से कई घंटे पहले उठ जाते हैं और नाश्ता लेकर व पूजा-उपासना करके काम करने निकलते हैं।

उन्होंने मेरा टेप रिकार्डर देखा और उसमें बड़ी दिलचस्पी ली। हमने एक टेप चला कर उन्हें सुनाया भी। मैंने राजकुमार को बताया कि टेप रिकार्ड करके हम अमरीका में सेंट लुई रेडियो स्टेशन को भेजते हैं। उन्होंने पूछा कि हम उनमें कहते क्या हैं। मैंने कहा—"वे ही बातें जिनकी रात को हमने चर्चा की थी।" उन्होंने अस्पताल का निरीक्षण किया। फिर एकाएक हवाई अड्डे पर गये और नाम-था से रवाना हो गये। हम थके हुए से घर लौटे और कुर्सियों पर पड़ गये। शाही मेहमान के स्वागत की कठिन परीक्षा समाप्त हुई। पीटर अब भी अभ्यर्थना के फ्रांसीसी शब्द बुदबुदा रहा था। तब हमें ज्ञान न था कि राजकुमार से यह हमारी अन्तिम भेंट नहीं थी।

अध्याय ९

बान फू वान और "आणविक फ्ल्यू"

पीट केसी को मई में स्वदेश के लिए प्रस्थान करना था। उसी समय बरसात शुरू होती है और चूँकि मौसम का कोई ठीक नहीं रहता, इसलिए हवाई-जहाज दोपहर में नाम-था पहुँच कर और पीट को लेकर उसी समय लौटनेवाला था ताकि अंधेरा पड़ने से पहले ही वियंतियेन पहुँचा जा सके।

जिस दिन पीट को जाना था उसी दिन सुबह कुछ दूर के एक गाँव से एक दाई ने एक खतरनाक प्रसूति की सूचना हमें भिजवायी। जच्चा के बहुत बुरी तरह रक्त-स्राव हो रहा था और उसकी तुरन्त देखभाल करना आवश्यक था। मैं अस्पताल छोड़ नहीं सकता था, और मेरे अतिरिक्त पीट ही एक मात्र व्यक्ति था जो ऐसे रोगी को सम्हाल सकता था। मैंने उससे बहुत कहा कि यदि वह उस गाँव गया तो हवाई जहाज़ निकल जायगा जिसका अर्थ होगा कि रास्ते में जहाँ-जहाँ उसे हवाई जहाज़ बदलने थे वहाँ भी कोई जहाज़ उसे नहीं मिल सकेगा, परन्तु उसने कहा कि वह रोगिणी की देख-भाल करके बहुत समय रहते ही लौट आयेगा। अतः उसने अपना बैग उठाया और एक लाओ नर्स को साथ ले कर पैदल चल पड़ा।

पीट ठेठ और स्पष्टवादी टेक्सास-वासी था और इस पर उसे गर्व भी था। वह दुबला-पतला, कठोर और निडर आदमी था, परन्तु इस कठोरता के नीचे कोमलता, ममता, करुणा, संवेदनशीलता और कर्तव्य के प्रति निष्ठा का सागर लहराता था। नाम-था के बच्चे उसे बहुत चाहते थे। कभी-कभी शाम को हमारे घर के बरामदे में बच्चे उसे घेर कर इतना शोर-गुल करते थे कि मैं उसे बच्चों को घर रवाना कर देने का आदेश दे देता था।

और इस पर वह कहता था—"क्या कहते हो, डाक्टर? बच्चों के मामले में तुम न पड़ो। जन-सम्पर्क के लिए इनका बहुत महत्त्व है।"

किसी खतरनाक रोगी के बुलावे पर आधी रात को उठने में पीट कभी आनाकानी नहीं करता था, परन्तु मुझसे हमेशा इतनी ज्यादा मेहनत न करने के लिए बहस करता रहता था। अक्सर मैं इस दुविधा में पड़ जाता था कि दूर पहाड़ों में जा कर उस रोगी को सम्हालूँ जिसे शल्य-चिकित्सा की आवश्यकता थी (क्योंकि यह चिकित्सा केवल मैं ही कर सकता था), अथवा उसका ध्यान छोड़ कर अपने अस्पताल

के नियमित काम को सम्हालूँ। ऐसे समय पीट यही सलाह देता था कि "अपनी जगह मत छोड़ो। दुनिया भर के काम तुम नहीं कर सकते; कोई न कोई काम तो तुम्हें छोड़ना ही पड़ेगा!"

मैं कहता—"नहीं, मैं रोगी को यों मरने के लिए नहीं छोड़ सकता। यह नैतिक (Moral) दायित्व का मामला है।" पीट मेरे इस कथन को हमेशा हँस कर, यों ही उड़ा दिया करता था; उसके लिए "नैतिक" (Moral) शब्द का केवल एक ही अर्थ था—"स्त्री-पुरुष सम्बन्ध।"

तो उस रोज़ पीट के लिए विमान जिस समय पहुँचा, लगभग उसी समय घने बादल उमड़ने लगे। जान को यह आदेश दे कर उड़न-पट्टी पर भेज दिया गया था कि विमान के आते ही वह उसके चालक को अस्पताल ले आये ताकि यदि आवश्यकता पड़ जाय तो हम पीट के लौटने तक उसे रोके रहें। फ्राँसीसी चालक मौसम और विलम्ब के बारे में बड़बड़ाता हुआ आया। मैं एक तरफ़ बहाने बनाता रहा, बातें करता रहा, उसकी ख़ुशामद करता रहा और दूसरी ओर मनाता रहा कि पीट के लौटने तक मौसम ख़राब न हो।

आखिर जब वह लौटा तब तक मेरा धीरज चुक गया था। पीट थका हुआ था, परन्तु उसके मुख पर आकर्षक मुस्कान खेल रही थी जिसका अर्थ था कि रोगिणी की हालत ठीक थी। फिर भी, मैं उस पर बरस पड़ा।

"तुम्हें इतना भी ध्यान नहीं था कि इस फ्रॉसीसी को रोकने में हमें कितनी मुश्किल होगी? तुम रक्त-स्राव की छोटी-मोटी व्यवस्था करके रोगिणी को मेरे जाने तक दाई के सहारे क्यों नहीं छोड़ आये?" मैंने प्रश्न किया.

पीट ने चकित हो कर मुझे देखा और फिर बरस पड़ा—"यह कैसे कर सकता था, मूर्ख कहीं के!" वह मुस्करा कर बोला—"इसके अतिरिक्त रोगिणी के पास ठहरने का मेरा नैतिक (Moral) दायित्व भी तो था।"

हम दोनों हँस पड़े और इतना हँसे कि हमारी आँखों से पानी बहने लगा। हम जब उड़न-पट्टी पर पहुँचे तो फ्रॉसीसी चालक गुस्से में भरा हुआ विमान को चालू कर रहा था। विमान रवाना हुआ और मेरे देखते-देखते उमड़ते हुए बादलों में उड़ गया। वाह पीट, वाह! उसने मुझसे अपनी जवानी के छः महीने देने का क़रार किया था, परन्तु दिये दस महीने। मेरी कामना है कि वह टेक्सास की विशाल विभूतियों के पीछे छिपने न पाये। इंडो-चीन के सीधे-सादे जन-समूह के लिए तो वह जन-साधारण से कहीं अधिक महान है और बना रहेगा।

नाम-था के गौरांग लोगों के अस्पताल की शोहरत फैलती गयी और दूर-दूर से रोगियों का आना हमारे लिए साधारण बात हो गयी। परन्तु चीनी रोगियों की वृद्धि से मुझे आश्चर्य हुआ। इनमें कुछ तो शरणार्थी थे जो उत्तरी लाओस में बस गये थे। परन्तु सावधानी से पूछ-ताछ करने पर मुझे पता लगा कि हमारे बहुत-से रोगी सीमा-पार लाल चीन के युन्नान प्रांत से आते थे। कई रोगी कैंटन से भी आये। कैंटन उत्तरी वियत नाम के रास्ते से आठ सौ मील से भी ज्यादा दूर पड़ता है।

एक बार एक बहुत पढ़ा-लिखा चीनी अपनी पन्द्रह वर्षीय पुत्री को ले कर अस्पताल आया। उस लड़की का होठ फटा हुआ था, जिससे उसका चेहरा विकृत हो रहा था। उसने यह बात छिपाने का ज़रा भी प्रयत्न नहीं किया कि वह युन्नान से आया था और बर्मी सीमा पर स्थित मुओंग सिंग नामक स्थान से उसने लाओस में प्रवेश किया था।

चाओ खुओंग को उस पर बहुत सन्देह था। उसका कहना था कि वह आदमी लाल चीन की सेना का कोई उच्च अधिकारी था। शायद हो भी। मुझे तो इतना मालूम है कि हमारे आपरेशन से जब उसकी पुत्री की कुरूपता मिट गयी, तो उसने बहुत आभार माना। यदि वह वास्तव में लाल चीन का अधिकारी था तो मुझे काफी विश्वास है कि अमरीका-विरोधी प्रचार के प्रति उसके मन में अब कुछ सन्देह हो गया होगा।

इस रोगिणी के उपचार का अजीब परिणाम हुआ। इसके बाद फटे हुए होठ वाले रोगियों की संख्या बढ़ गयी। मेरा ख़याल है कि यह एक प्रकार के प्रचार का परिणाम था, जिससे मेरी प्रसिद्धि पहाड़ों में भी जा पहुँची और जिसने मुझे लाओस का पहला 'प्लास्टिक सर्जन' बना दिया!

समय गुज़रने के साथ-साथ बाब और जान चिकित्सा-कार्य में दक्ष होते गये और मार्के का काम करने लगे। डूली को संतुष्ट रखना आसान न था। ये लोग जल्द ही ऐसे दुख-दर्द के बीच घिर गये, जिसके अस्तित्व की इन्होंने स्वप्न में भी कल्पना नहीं की थी। दोनों में से किसी को भी सेना का अनुभव न था और न ये कठोर अनुशासन के अभ्यस्त थे। मैं किसी का भी उलट कर जवाब देना सहन नहीं कर सकता था और अपने दल का संचालन सैनिक टुकड़ी की तरह करता था। यद्यपि दोनों इस परिस्थिति में अचानक ही आ पड़े थे, तथापि इन्होंने इसे ख़ूबी के साथ झेला। हमें हमेशा यह ज्ञान रहता था कि कहीं हम साम्यवादियों के चंगुल में न आ जायें; इसलिए हम हर वक्त सतर्क रहते थे। सैनिक अनुभव से यह सिद्ध हो चुका था कि ऐसी परिस्थिति में नेतृत्व की बागडोर एक आदमी के हाथ में

रहनी चाहिए और बाक़ी लोगों की बिना किसी प्रकार का विचार किये उसकी आज्ञाओं का पालन करना चाहिए।

जान का शान्त कूटनीतिक ढंग मेरे आवेग के मुक़ाबले में संतुलन बनाये रखता था। अपने अन्तिम छः महीनों के आवास में हमें जो सफलता मिली उसका बहुत कुछ श्रेय जान डीविट्री को है। बाब वाटर्स हालाँकि अभी इक्कीस वर्ष का भी पूरा नहीं हुआ था, फिर भी उसके हाथ में यश था और उसने डाक्टरों का हृदय पाया था। यद्यपि उसने फ्रांसीसी भाषा का अध्ययन किया और वार्तालाप का अर्थ भी समझ लेता था तथापि यह भाषा वह बोल नहीं पाता था। वह हमेशा डाक्टरी की किताबें पढ़ा करता था और मुझसे सवाल पूछता रहता था। आपरेशन के तौर-तरीक़ों में वह बहुत कुशल हो गया और डेनी के जाने के बाद यह विभाग उसने सम्हाल लिया। ये दोनों ही मलेरिया, पेचिश और थकान से बार-बार पीड़ित होने के उपरान्त भी शारीरिक परिश्रम खूब करते थे। जिस तरह का हमारा जीवन था उसमें इन तकलीफों से कोई बच ही नहीं सकता था।

बाब को चूहों से मानो दुश्मनी थी। चूहे टाइफ़स, प्लेग और दूसरी बीमारियों के वाहक होते हैं; अतः वह बराबर इन्हें पकड़ने के पिंजरे और फन्दे लगाता रहता था। रोज़ सुबह वह गिरफ्तार अपराधियों को बाहर ले जा कर जला देता था ताकि कोई कीड़ा-मकोड़ा भी जीवित न बचे। परन्तु बाब ये घृण्य जीव चाहे जितने मारता था, रोज़ और नये-नये पैदा होते ही रहते थे।

जान और चई की बड़ी घनिष्ठता हो गयी थी। दोनों घंटों बातें किया करते थे। चई श्रेष्ठ सहायक बन चुका था और दया-ममता जो डाक्टरों आदि के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण गुण है, उसके अन्तर में व्याप्त थी। गन्दे-से-गन्दे, बेहाल कोढ़ी के साथ चई कोमलता से पेश आता था। रोते-चिल्लाते बच्चों के लिए उसके मुख पर मुस्कान रहती थी; उनकी माताओं की चिन्ता वह क्षण भर में दूर कर देता था। गौरांग ओझा डूली से डरनेवाले बच्चों को चई अपने शब्दों से बहला कर स्टेथोस्कोप की पहुँच के भीतर ले आता था। गुब्बारे और खिलौने बाँटते समय वह न्याय की साक्षात् मूर्ति बन जाता था; बाज़ार में खरीदारी करते समय बड़ा चौकस रहता था। भूत, प्रेत, और आत्माओं के प्रति आस्था रखने वाला यह चई हमारे दल का सबसे महत्त्वपूर्ण सदस्य था। शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व का सिद्धान्त अपना कर हमने उन भूतों, प्रेतों और आत्माओं को स्वीकार कर लिया था।

बहुत से रोगी मुझे बताते थे कि वे बान फू वान से आये थे। यह जगह बर्मी सीमा के पास पहाड़ों की ऊँचाइयों में कोई तीस मील दूरी पर थी। वे रोगी बताते

थे कि बान फू वान प्रगतिशील गाँव था ; तथापि उसमें कई रोगी ऐसे भी थे जो नाम-था तक पहुँचने में असमर्थ थे।

कम-से-कम एक वार बान फू वान जा कर रोगियों को देखने के लिए मैं बहुत उत्सुक था, परन्तु चाओ खुओंग जो अपने को मेरी सुरक्षा के लिए व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी मानता था, इसके विरुद्ध था। वह कहता था कि पहाड़ी रास्ते अविश्वसनीय हैं, वह इलाक़ा डाकू-लुटेरों से भरा हुआ है और नाम-था के गौरांग ओझाओं को गिरफ़्तार कर लेने से ज्यादा अच्छी चीज़ साम्यवादियों के लिए कोई हो नहीं सकती। आख़िर जब मैंने कई कुली और सशस्त्र रक्षक अपने साथ ले जाना स्वीकार किया, तब उसने मुझे अनुमति दी।

हमने अपना डेरा लगाने का सामान और दवाइयाँ वगैरा तीन तिब्बती टट्टुओं पर लादीं और उन्हें बाब वाटर्स के ज़िम्मे किया। उसे यह दल ले कर आगे रवाना होना था। नाम-था के पश्चिम में अगले पहाड़ के पार उसे डेरा करना था। अगले दिन जान और मैं वहीं से दल के साथ होने वाले थे।

बाब के प्रस्थान करने के बाद शाम को एक आश्चर्यजनक घटना घट गयी। मुझे तुरन्त आह चान के घर बुलवाया गया। आह चान गाँव का शायद सबसे धनी व्यक्ति था और नाम-था की एक मात्र चावल की मिल उसी की थी। जान और मैं भाग कर पहुँचे। दरवाज़े पर गाँव-वालों की भीड़ लगी थी। सब रो-पीट रहे थे। भीड़ को चीर कर हम आगे पहुँचे। आह चान धरती पर पड़ा था। उसके दिल ने धड़कना बिल्कुल बन्द कर दिया था; परन्तु शरीर अभी गर्म था। इसलिए हमने कृत्रिम श्वास-प्रश्वास की क्रिया की और उसके हृदय में सीधे एड्रिनेलिन का इंजेक्शन लगाया। लेकिन हमें देर हो चुकी थी। आह चान संसार से विदा हो चुका था।

उसकी मृत्यु की परिस्थितियाँ हैरतअंगेज़ थीं। आह चान का स्वास्थ्य बहुत अच्छा था। दस मिनट पहले वह अपने दोस्तों से हँस-बोल रहा था। एकाएक बिना किसी तरह की तकलीफ़ के वह बस लुढ़क गया। मैं कुछ मिनटों के अन्दर ही वहाँ पहुँच गया, लेकिन तब तक उसके प्राण पखेरू उड़ चुके थे।

हो सकता है कि उसे हृदय-रोग का या किसी मस्तिष्क के रोग का दौरा पड़ा हो; परन्तु हृदय के रोग दुनिया के इस हिस्से में बहुत ही कम देखने में आते हैं। फिर आह चान की आयु अभी तीस वर्ष की भी न थी। उसके शरीर को चीर-फाड़ कर देखने की सुविधाएँ मेरे पास नहीं थी। इसके अतिरिक्त उसके

घर-वाले मुझे यह परीक्षा करने की अनुमति देते, इसमें भी मुझे सन्देह है। इसलिए मैं केवल अनुमान लगा सकता था।

आह चान नाम-था में सब से लोकप्रिय व्यक्तियों में से था। उसकी मृत्यु से सारा गाँव ही दुखी था। किसी ने मेरे प्रति किसी तरह विरोध तो प्रदर्शित नहीं किया, परन्तु लोगों की निगाहों को अपनी ओर उठते देख कर मैं समझ रहा था कि आह चान के मामले में मेरी असमर्थता से "गौरांग ओझा' के रूप में मेरे मान को जरूर धक्का पहुँचेगा। परन्तु परिणाम और भी आश्चर्यजनक हुआ।

अगले रोज़ सुबह आह चान की मृत्यु की परेशानी लिए हुए ही जान और मैं साइकिलों से रवाना हुए। काविन की उस बेहाल "सड़क" पर दस मील चलने के बाद हमने साइकिलें जंगल में छोड़ीं और पहला पर्वत पार करके बाव के डेरे पर पहुँच गये। बाक़ी दिन हम लोग अगले पर्वत पर चढ़ते रहे।

पथ-प्रदर्शक आगे-आगे थे और हम चलते ही जा रहे थे। हमने एक बार ठहर कर चावल और कैंडी का भोजन किया। पीने के लिए पानी काफी था। जंगल में एक फल भी हमें मिल गया जिसका स्वाद रास्पबैरी जैसा लगता था। घना जंगल बड़ा शानदार था। पेड़ों से छन-छन कर तहाँ-जहाँ प्रकाश पड़ रहा था वहाँ भाप सी उठती दिखाई देती थी। भरी दोपहर में जंगल प्रकाश से भर गया परन्तु एक घंटे बाद ही वापस अंधकार छा गया; प्रकाश जहाँ-तहाँ ही बच रहा। सूरज जब ठीक सिर पर होता था तभी उसकी किरणें पेड़ों के पार आ पाती थीं। सूरज जहाँ ज़रा नीचे उतरा नहीं कि संध्या का-सा झुटपुटा हो जाता था। हमें ऐसा लग रहा था मानो हम छोटे-छोटे जानवर उस जंगल के फ़र्श पर चारों हाथ-पैरों से चले जा रहे हों। वे पेड़ किस शान से सिर उठाये खड़े थे! जंगली हिरन भागते-फिरते थे और चिड़ियाँ उड़-उड़ कर रंगों का एक अनोखा समा बाँध रही थीं। यह अनुप्राणित जंगल मनुष्य के मन में भगवान की महानता के प्रति श्रद्धा पैदा कर देता है।

हर जगह हमें केले के पेड़ दिखायी देते थे जो पीले-पीले गदराए फलों से लदे हुए थे। पत्तों ने उन फलों पर छाया कर रखी थी। अंजीर के विशाल वृक्ष और बेलें जंगल में भरी पड़ी थीं। हम उस कोमल और घनी हरियाली में आगे बढ़ रहे थे। कहीं मोड़ लेते ही सामने ऐसी ऊँची दीवार-सी नज़र आती थी कि जिसमें कुछ फ़ीट से आगे दिखायी ही नहीं देता था। चक्करदार पगडंडियों पर हम चलते रहे। फिर एक ऊँचा पर्वत आया। उस पर हम चढ़ने लगे। वह भी घने जंगल से ढका हुआ था। एकाएक हम जंगल के अंधकार से निकल कर उसके छोर पर आ पहुँचे; पहाड़ी-शिखर निकट ही था। वहाँ हवा ऐसी स्वच्छ और शुद्ध थी

कि वर्णन नहीं किया जा सकता। चारों ओर के पहाड़ों का शानदार नजारा हमने वहाँ से देखा। ऐसा लगा मानो हम पृथ्वी के शिखर पर पहुँच गये हों। हमारी हँफनी हमें इसका विश्वास दिला रही थी। कुछ ही ऊँचाई पर आगे गाँव था। दोपहर में ही हम वहाँ पहुँच गये।

बान फू वान लाओस के दूसरे गाँवों जैसा ही था; गन्दा कुछ ज्यादा था। आस-पास कहीं पानी न था। नीचे घाटी में ही एक जलधारा थी। इसलिए लोग जितनी बार चाहिए उतनी बार स्नान नहीं कर सकते थे। बान फू वान के मकान आयताकार थे, पूर्णतया लकड़ी के तख्तों और बाँस के बने हुए मकान लकड़ियों के ढेर पर अवस्थित होने के कारण ऊँचाई पर बने हुए दीखते थे। उनकी छतें घास-फूस की थीं। बल्लियाँ, दरवाजे और शहतीर बड़ी सावधानी से लगाये गये थे और ताड़ की बनी हुई डोरियों से बाँधे हुए थे।

इन पहाड़ी मकानों के अन्दर एक तरफ़ बराम्दा-सा रहता है। सोने के कमरों के दरवाजे इस बराम्दे में रहते हैं। मकान में एक बड़ा सा कमरा सबके उठने-बैठने के लिए होता है। चारों तरफ़ बराम्दा होता है जिसमें स्त्रियाँ मुर्गियों की देख-भाल करती हैं और अपने बच्चों का नहलाना-धुलाना करती हैं। मकान के एक भाग के नीचे काम करने का कमरा रहता है। मुख्यतया इसमें कपड़ा बुना और रंगा जाता है, औजारों की मरम्मत भी की जाती है। मकान के नीचे लकड़ी का जो आधार रहता है उसके आस-पास मकान के मुख्य भाग के नीचे जानवर बाँधे जाते हैं। उनकी गंध अमरीकियों को चाहे न सुहाये, परन्तु उन आदिवासियों के लिए वह समृद्धि की प्रतीक होती है।

बान फू वान लाओस के दूर-दराज के किसी एक कोने में बसे हुए गाँवों में से था। यहाँ पहुँच कर हमें एक अजीब अनुभव हो रहा था मानो हम इस युग में न हों; किसी समय-यंत्र (Time machine) ने हमें बाइबल के युग में ले जा कर खड़ा कर दिया हो।

सैकड़ों आदमी मकान को घेर कर खड़े थे और दर्जनों उसके अन्दर थे। हवा में घुटन थी और लोगों के शरीर की बदबू भी फैल रही थी। हमने दवाइयों के बक्स खोले, गोलियों की थैलियाँ निकालीं और छोटी-मोटी शल्य-क्रिया के औजार बाहर रखे। बाँस की बाल्टियों में लोग पानी ले आये और रोशनी के गुजर के लिए दीवार का एक हिस्सा निकाल दिया गया। हमने बहुत सारा पानी उबाला और शल्य-क्रिया के औजार तैयार कर लिये। चार-पाँच घंटों में मैंने चई, बाब और जान की सहायता से कोई डेढ़ सौ रोगियों की परिचर्या की।

वहाँ के स्कूल का अध्यापक, फ्या वोंग इस बीच मेरे पास बना रहा। वह युवक बुद्धिमान जान पड़ता था। उसने हमें बताया कि उसने इसी गाँव में जन्म लिया था परन्तु शिक्षा उसने १९५४ में उत्तरी वियत नाम में पायी थी। इस बात से मेरी जिज्ञासा जागी क्योंकि साम्यवादियों का आम रवैया है कि प्रत्येक दूरवर्ती गाँव से वे एक अत्यंत बुद्धिमान लड़का चुन लेते हैं, चीन या उत्तरी वियत नाम में कुछ समय उसे शिक्षा देते हैं (यानी साम्यवाद की) और मास्टर बना कर उसे वापस उसके गाँव में भेज देते हैं। चाओ खुओंग हमेशा कहता था कि लाओस में ये "अध्यापक" साम्यवादियों के सबसे सक्रिय एजेंट हैं।

फ्या वोंग फ्रांसीसी बोल सकता था। अत्यंत आकर्षक उसके तौर-तरीके थे और उसने हमें बहुत सहयोग दिया। परन्तु राजनीति पर वह किसी प्रकार से भी बात-चीत करने को तैयार नहीं हुआ। चूंकि गाँव में वह सबसे अधिक पढ़ा-लिखा व्यक्ति था, इसलिए मैं बहुत-सी जरूरी और बुनियादी दवाइयाँ उसे दे आया। उसने भी वचन दिया कि भविष्य में वह गम्भीर रोगियों को नाम-था के अस्पताल भेजता रहेगा। मुझे बिलकुल नहीं मालूम कि हमारे प्रति उसके क्या विचार थे, परन्तु कम से कम बाकी गाँव-वालों की तरह उसे भी अब इतना तो मालूम हो गया था कि सभी गौरांग राक्षसी स्वभाव के नहीं होते।

लौटते हुए घाटी के तल के पास एक आदमी ने हमें रोका। उसने हमसे अपने बच्चे को देखने की विनती की। उसके कथनानुसार बच्चे को "सिर का रोग" था। रास्ते से कुछ ही हट कर उसका गाँव-था और उसमें पूरी दस झोंपड़ियाँ भी नहीं थीं। हम उसके साथ हो लिये। दृढ़ क़दमों से और तेजी के साथ वह हमें रास्ता दिखाते हुए आगे-आगे चलने लगा, परन्तु वह डरा हुआ था। आखिर हम उसके गाँव पहुँचे जो मृत्यु की गोद में सोया-सा जान पड़ता था। उसकी झोंपड़ी में तेल का दिया जल रहा था। एक अंधेरे कोने की ओर उसने उंगली उठायी और कहा-"नी"। वहाँ उसका लड़का लेटा था। चार बरस का बालक दीन कुत्ते की तरह मिमिया रहा था। मैंने उसकी परीक्षा की। उसे मस्तिष्क का एक रोग था और उसकी माँसपेशियाँ पूर्णतया निष्क्रिय हो गयी थीं। उसकी टाँगें और बाँहें गाँठदार लकड़ियों जैसी हो रही थीं। उसके फूले हुए पेट से पता चलता था कि उसमें कीड़ों ने राज जमा रखा था। लड़का एक चटाई पर अपने पेशाब में पड़ा था। वास्तविकता से उसका कोई सम्पर्क नहीं रहा गया था। उसके मस्तिष्क के क्षति-ग्रस्त होने के लक्षण स्पष्ट थे।

मैं उस बालक के लिए कुछ भी नहीं कर सकता था। निरापद और साफ़-सुथरे आधुनिक अमरीकी अस्पतालों के आशाओं के भंडार में भी मुझे उसके लिए कोई आशा दिखायी नहीं देती थी। मैंने यथासम्भव स्थिति को स्पष्ट किया। उस आदमी ने मेरी राय को दार्शनिक की तरह भवितव्यता के रूप में स्वीकार किया। अपने पुत्र के लिए उसकी अन्तिम आशा मुझ गौरांग ओझा पर टिकी हुई थी। यह सोच कर कि मुझे रोगी से उसकी आशा की अन्तिम किरण नहीं छीननी चाहिए, मैं स्थिति का पूर्णतया अंधकारमय चित्रण करने से डरता था। मैंने आशा का थोड़ा-सा प्रकाश क़ायम रखने का प्रयत्न किया, परन्तु मेरी आत्मा मुझे ज्यादा उम्मीद बँधाने से रोक रही थी। उस आदमी ने बताया कि गॉव में इस तरह के मरीज़ अनेक हैं। बाद में मैंने जान और बाब के साथ इस रोग के बारे में विचार-विनिमय किया और हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि यह कोई पारिवारिक रोग होगा।

अंधेरा पड़ने से पहले ही हम उस डेरे पर पहुँच गये जहाँ हमने साइकिलें छोड़ी थीं। पिछली रात जंगल में सोने के बाब के प्रयत्नों की बात याद करके हम तीनों ने साइकिलों से सीधे नाम-था चले जाने का फ़ैसला किया। मज़दूर और किउ टट्टुओं और सामान के साथ अगले दिन आने वाले थे। रात पड़ने में लगभग एक घंटे की देर थी। हमने सोचा कि हम इतनी देर में पहुँच जायेंगे। लगभग एक घंटे तक हम चलते रहे। हम अपनी दुखती हुई टाँगों से जितनी तेज़ हो सकती थी उतनी तेज़ साइकिलें चला रहे थे। सड़क सूखी हुई थी; कभी कहीं पानी रास्ते पर जमा मिल जाता था।

एक जगह पर रास्ते की तंगी को देखते हुए हम ढाल पर बहुत ज्यादा तेज़ी से चले जा रहे थे। रास्ते के एक तरफ़ सैकड़ों फ़ीट गहरा खड्ड था। एक मोड़ लेते हुए साइकिल मेरे काबू से बाहर हो गयी। पहिये फिसल गये और मैं हैंडल के ऊपर से जमीन पर आ गिरा। पेट के बल मैं सड़क पर फिसला चला जा रहा था और ठीक सामने था खड्ड। मुझे इतना याद है कि मैंने अपनी गति को रोकने के लिए बाँहें फैला कर हाथ ज़मीन में गड़ाये। इसके बाद मुझे कुछ याद नहीं है।

क्षण भर बाद मेरी चेतना लौट आयी। उस समय मैं सड़क के सिरे पर पड़ा था, परन्तु था सड़क पर ही। मेरा सीना और पेट बुरी तरह छिल गया था। मेरी क़मीज़ का सामने का हिस्सा रक्त और धूल से सना हुआ था। मैंने अपने हाथ पर नज़र डाली और यह देख कर घबरा गया कि बाँयें हाथ का अंगूठा कलाई से नब्बे अंश का कोण बना रहा था। अँगूठा अपनी जगह से हट गया था और कलाई की

एक हड्डी टूट गयी थी। मुझे याद आया कि इस हालत में क्या करना चाहिए। जितने ज़ोर से हो सकता था उतने ज़ोर से मैंने अँगूठे को आहिस्ता-आहिस्ता खींचा। दर्द से जान तो निकल-सी गयी लेकिन अँगूठा ठिकाने पर आ गया।

इतनी देर में बाब और जान भी मोड़ पार आ गये। मेरी टूटी-फूटी साइकिल से बचने के प्रयत्न में उन्होंने कठिनाई से अपनी साइकिलें रोकीं। उनके मुँह से इतना ही निकला, " भाग्यवान हो जो खड्ड में नहीं गिरे।" एकाएक हमें खयाल आया कि मुझे किसी डाक्टर के पास जाना होगा और एक्स-रे कराना होगा। लेकिन इस इलाके में डाक्टर सिर्फ़ मैं था और एक्स-रे की मशीन हमारे पास थी नहीं।

डाक्टर को खुद अपना इलाज न करने की तालीम दी जाती है। लेकिन टूटी हुई और अपने स्थान से हटी हड्डी को बैठाना ज़रूरी था। एक डाक्टर के लिए जिसके कि पेशे में हाथों का बहुत महत्त्व रहता है, इस तरह की चोट बहुत भयावह थी। परन्तु वान फू वान के मार्ग में डा. टामस डूली की यह चोट " लाओस कार्रवाई " की कहानी में अत्यन्त तुच्छ चीज़ थी।

साइकिल कुछ मुड़ गयी थी। उसे हमने पत्थर से ठोक कर सीधा किया। रोगियों की परिचर्या का मेरा छोटा बेग साइकिल के पीछे बँधा हुआ था। अपने हाथ को जो तेजी से सूजता जा रहा था, बैग से इलास्टिक की पट्टी निकाल कर बाँधा और हम वहाँ से चल पड़े। इस यात्रा के अन्तिम तीस मिनटों में बरसात भी खूब ज़ोर से होती रही।

जिस समय हम नाम-था पहुँचे उस समय अँधेरा हो चुका था। सी सीढ़ियों पर बैठा हुआ हमारा इंतज़ार कर रहा था। उसका मन उससे कह रहा था कि हम एक दिन पहले ही लौट आयेंगे। अपने लौटने की उस झुटपुटी घड़ी में हमें अपना घर बहुत प्यारा और भला मालूम हुआ। मैं खून और धूल में सना हुआ था और मेरे हाथ में बड़ी-सी पट्टी बँधी थी। बाब थकावट से और खटमलों के काटने से इतना शक्ति-हीन हो गया था कि उसके लिए सरकना भी दूभर था। जान थकान से संज्ञा-शून्य हो रहा था। कोई घंटे भर हम फ़र्श पर ही पड़े रहे। सी ने वहीं हमें काफ़ी दी। आखिर हम तीनों ने बारी-बारी से स्नान किया और बिस्तर पर पड़ गये। मेरा हाथ दर्द कर रहा था, सूजन बढ़ती जा रही थी और मैं सोच रहा था कि एक्स-रे की मशीन तक पहुँचूंगा कहाँ और कैसे? आखिर पहुँचना नहीं ही हुआ। प्लास्टर, भाग्य और भगवान की कृपा ने मेरा हाथ ठीक किया और जोड़ में खराबी नहीं आयी।

अगले दिन सुबह जल्दी ही हम अस्पताल पहुँचे । सारे गाँव में आह चान की अन्त्येष्टि की शानदार तैयारियाँ की जा रही थीं । परन्तु जब आह चान की मृत्यु का कारण हमें ज्ञात हुआ तो हम हैरान रह गये ।

नाम-था में हर आदमी को मालूम था कि आह चान की जिस रोग से मृत्यु हुई थी उसका नाम था " क्रिआ एटोमिक " (आणविक ज्वर) जिसका साधारणतया अर्थ हो सकता है आणविक फ्ल्यू ! सबसे पहले स्वयं चाओ खुओंग ने हमें इसके विषय में बताया लेकिन साथ ही यह भी कहा कि यह बिल्कुल मूर्खतापूर्ण बात है । वह जानता था कि कोई भी बुखार या इन्फ़्लूएंज़ा बिजली की सी इस तेजी से प्राण नहीं ले सकता । उसने बताया कि यह अफ़वाह आग की तरह फैली थी और सबको इस पर विश्वास था ।

अफवाह शुरू कैसे हुई ? सारे नाम-था में कुल दो या तीन रेडियो थे । हमारे घर में सी ने शपथ ले कर कहा कि रेडियो पीकिंग पर यह समाचार नहीं आया था । हमारे छोटे-से रेडियो पर केवल यही स्टेशन सुना जा सकता था ! सारे प्रान्त में एक मात्र शक्तिशाली रेडियो चाओ खुओंग के यहाँ था और उसने बताया कि किसी भी स्टेशन से उसने " क्रिआ एटोमिक " की चर्चा नहीं सुनी थी ।

आह चान की अन्त्येष्टि के संस्कार नौ दिन तक होते रहे । हरकारे सब तरफ़ खबर देने दौड़ाये गये थे और दूर-दूर के गाँवों से सम्बन्धी और मित्र नाम-था आये थे । शोक की यह लम्बी अवधि बहुत ही अजीब थी । बौद्ध भिक्षु प्रार्थना करने के साथ सुगंधित बत्तियाँ जलाते जाते थे, शोक प्रकट करने वाले रोते थे, संगीतज्ञ अपने वाद्य और मंजीरे बजाते थे तथा बहुत रात गये तक खाना-पीना होता रहता था । अन्त में नवें दिन आह चान का शव लाओस की प्राचीन धार्मिक राजधानी लुआंग परबंग की तरफ़ सिर करके लकड़ी के एक मंच पर रखा गया और उसे अग्नि दी गयी ।

परन्तु " क्रिआ एटोमिक " की चर्चा उस अग्नि की लपटों के साथ समाप्त नहीं हुई । आश्चर्य की बात है कि इसी समय, १९५७ की जून में पश्चिमी जगत एशियाई फ़्ल्यू में चिन्तित था । दूर पूर्व के इस कोने में जिसका संसार के संवाद-वाहन साधनों से कोई सम्बंध न था, किसी व्यक्ति ने उस इंफ़्लूएंज़ा के एक ऐसे प्रतिरूप का आविष्कार कर डाला था जिसकी उत्पत्ति अमरीका में हुई थी । मैं मानता हूँ कि यह सूक्ष्म प्रचार का आदर्श उदाहरण था, और गौरांगों की डाक्टरी सहायता पर करारा वार था, क्योंकि डाक्टरी सहायता नाम-था में बहुत लोकप्रिय हो रही थी ।

आह चान की आकस्मिक मृत्यु, बान फू वान के पास पहाड़ों में उस बालक की मरणासन्न अवस्था, जिसके कि रोग के सामने मैं पूर्णतया असमर्थ रहा था, मेरे हाथ की चोट, हमारी यात्रा की थकान, और इस बात पर हीनता का अनुभव कि हमारे सामने जो काम पड़ा था उसके मुकाबले हमारी सफलताएँ कितनी तुच्छ थीं, लाखों आदमियों के लिए हम कुछ नहीं कर सकते थे—इन घटनाओं और चीजों ने मुझे निराशा के गहरे गर्त के किनारे ला पटका। तभी एक पत्र आया। इस समय मुझे उसीकी आवश्यकता थी।

मेरे डाक्टरी स्कूल के भूतपूर्व अध्यक्ष, डा. मेल्विन कास्बर्ग का पत्र था वह। उन्होंने लिखा—" टाम, तुम्हारे सामने गहन निराशा के क्षण भी आयेंगे, जब तुम्हें इस विशाल कार्यक्षेत्र में अपने तमाम प्रयत्न उपेक्षणीय प्रतीत होंगे। लेकिन यह याद रखना, टाम, कि मानवता की प्रगति के प्रत्येक चरण का उद्गम, खोजने पर, किसी एक व्यक्ति, किसी छोटे-से समूह में दिखायी देगा। इसलिए हिम्मत मत हारना, और जैसा कई बरस पहले सेंट पाल ने कहा था, ' अपने विश्वास को अडिग रखना '।"

अध्याय १०

नदी से यात्रा

नदी से यात्रा करने का सुझाव जान डीविट्री का था। जब नाम-था से प्रस्थान करने का समय निकट आने लगा तब उसने प्रस्ताव किया कि सीधे वियंतियेन जाने के बजाय हम लोग छोटी-छोटी नौकाओं में नाम-था नदी से प्रस्थान करें और रास्ते में अलग-से पड़े हुए गाँवों में रोगियों को देखते चलें।

चाओ खुओंग ने इस योजना का तीव्र विरोध किया। उसका कहना था कि नदी का मार्ग खतरनाक था और यात्रा के योग्य नहीं था। इसके अतिरिक्त उस मार्ग में पड़नेवाले गाँवों के लोग गोरे लोगों से शत्रुता रखते थे। उसने कहा कि उसके जेलखाने में अधिकांश राजनीतिक बन्दी उसी इलाके के थे; स्वयं उसके सैनिक शान्ति और व्यवस्था के लिए नदी में कुछ मील से अधिक दूर जाने का साहस नहीं करते थे। फिर उसे इसमें सन्देह था कि हमें इस यात्रा के लिए नाविक भी मिल सकेंगे जो अपने को खतरे में डालने को तैयार हों।

मैंने डा. औदोम को सन्देश भेजा और उन्होंने तुरन्त स्वीकृति दे दी। बूढ़े गवर्नर ने तुरन्त हथियार डाल दिये और कहा कि उस पर अब कोई ज़िम्मेदारी न थी। फिर भी उसने सशस्त्र रक्षकों का एक अग्रगामी दल भेजने की व्यवस्था की और चार बन्दूक़-धारी हमारे साथ जाने को तैनात किये।

हमें एक विशेष प्रकार की नौकाओं से जाना था। ये नौकाएँ कोई बारह फ़ीट लम्बी होती हैं। सिर्फ़ इसी प्रकार की नौकाएँ नदी के तेज़ प्रवाह में चल सकती थीं। नाविकों के विषय में गवर्नर की बात बिलकुल सही निकली; नाविक तय करने में हमें बहुत कठिनाई हुई। किसी भी नाविक ने पहले यह यात्रा नहीं की थी; फिर डाकुओं और तेज़ बहाव का खतरा था और इनके ऊपर मौसम बरसात का था। इसलिए घनघोर बरसात का मुक़ाबला करना था। किसी तरह कुछ अतिरिक्त पैसे के लालच और चाओ खुओंग के दबाव से काम बन गया।

जान ने तीन नावें तय कर लीं। प्रत्येक में चार-चार नाविक थे। दो नाव को खेने के लिए बीच में बैठते थे; बाक़ी दो दोनों सिरों पर खड़े हो कर लम्बे-लम्बे चप्पुओं से नाव को मोड़ते थे। हमने दवाइयों, भोजन-सामग्री और डेरे लगाने के समान को तीनों नावों में इस प्रकार बाँटा कि यदि कोई नाव डूब भी जाय तो भी हमें खाने, सोने और मरीज़ों को देखने में कोई कठिनाई न हो।

प्रस्थान के लिए सूर्योदय का समय निश्चित किया गया था परन्तु लाओ रीति-नीति के अनुसार व दोपहर से कुछ पहले ही हम चल सके। हम समय पर तैयार हो कर अपने सामान के साथ नौकाओं पर पहुँच गये। प्रमुख नाविक कुछ मिनटों में आने वाला था परन्तु आया एक घंटे के बाद। आया भी तो उसने हमें देखा और यह कह कर चल दिया कि काग़ज़ लाने के लिए उसे वापस चाओ खुओंग के पास जाना पड़ेगा। दुभाषियों का कहना था कि नाविकों की हिम्मत जवाब दे रही थी: लुटेरों और नदी के ख़तरों से वे परिचित थे अतः ये; ख़तरे उठाने के लिए ज्यादा मेहनताना चाहते थे। मैं उन्हें दोष नहीं दे सकता।

नाविक आख़िर गवर्नर के पास से लौटे और हमने एक बार फिर अपने उन दस-बारह मित्रों से विदा ली जो पेड़ों के नीचे बैठ कर अपने को हल्की-हल्की बरसात से बचाने के प्रयत्न कर रहे थे। मैं एक नाव के बीच में बनी हुई बाँस की झोंपड़ी में जा बैठा और नाविकों के आ जाने के बाद मैंने नौसेना के तरीके से लंगर उठाने का आदेश दिया; परन्तु लंगर उठा नहीं। अमरीकियों और नाविकों ने सारा सामान नावों में जिस ढंग से जमाया था वह प्रमुख नाविक को जँचा नहीं।

अतः सारा सामान उतारा गया और वज़न के बारे में प्रमुख नाविक के सुझाव तथा मूल्य के बारे में मेरी आज्ञा के अनुसार उसे वापस चढ़ाया गया। इस तरह आख़िर सामान की लदाई पूरी हुई और हम अच्छी तरह दुआ-बंदगी किये बिना ही किनारा छोड़ कर चल दिये। अब तक बारिश जोर से होने लगी थी और चार दिन तक नहीं रुकी। बरसात में भीगते हुए मित्रों से हमने हाथ हिला कर बिदा ली।

जल के तेज़ बहाव में पहले दिन की यात्रा जितनी ख़तरनाक रही उतनी ही दिलचस्प भी। दो-दो नाविक हर नौका में अगले और पिछले सिरों पर खड़े हो कर लम्बे-लम्बे चप्पुओं से नावें को इधर-उधर मोड़ते जाते थे। दो-दो नाविक बैठे हुए छोटे चप्पुओं से नावें खे रहे थे। उन्हें चप्पू बहुत नहीं चलाने पड़ते थे क्योंकि नदी की धारा ही हमें बहाये लिये जा रही थी। नावें लहरों पर डोलती हुई चली जा रही थीं।

यह सोच कर कि हम लोग ही नहीं हमारा सामान भी सुकुमार होगा, नाविकों ने नौकाओं में ताड़ के पत्तों की छतें-सी बना दी थीं। नाव के गीले फ़र्श पर इनके नीचे किसी तरह बैठा जा सकता था। ये ढालू छतें हमारा सिर छूती थीं। अविराम वर्षा में इतना बचाव भी बहुत था, परन्तु कुछ ही समय में बरसात का पानी छतों के पार आने लगा और हम भीग गये; उस छत के नीचे बैठना या खुले में बैठना बराबर हो गया।

तीन घंटे सफ़र करने के बाद हमने पहला क़याम किया। नाविक नौकाओं से उतर कर पानी को पार करके जंगल में गये, इस उद्देश्य से कि नावों की बग़ल में लगाने के लिए कुछ हरे बाँस काट लायें। नावें बुरी तरह हिचकोले खा रही थीं इसलिए बाँस लगाना जरूरी जान पड़ता था। बहाव अनुमान से कहीं ज्यादा तेज था। यहाँ नदी के किनारा था ही नहीं। बरसात की बाढ़ से पानी इतना बढ़ गया था कि बड़ी-बड़ी झाड़ियाँ और पेड़ नदी के पाट में आ गये थे और किनारों की जगह केवल पेड़ दिखायी देते थे जिन पर कई फ़ीट ऊँचा पानी चढ़ा हुआ था। जब हमें किसी तरह पहला ढालू किनारा दिखायी दिया तो एक बार फिर हमने नावें रोकीं।

इस बार हमें अपना अत्यन्त मूल्यवान सामान लेकर उतरना पड़ा। हम पैदल घने जंगल में चल पड़े। हम जल के किनारे-किनारे चल रहे थे और नौकाएँ तेज़ बहाव में चल रही थीं; कहीं चट्टानों से टकराती थीं, कहीं लकड़ी के लट्ठों के बीच से गुजरती थीं। जल के सफ़ेद घने झाग ने उन्हें घेर रखा था। एकाएक वे जल के

एक शान्त भाग में आ पहुँचीं और नाविकों ने उन्हें जल के किनारे लगा दिया। हम कैमरा और दूसरा सामान अपने सिरों पर उठाये हुए घुटनों-घुटनों पानी में खड़े थे। ऊपर से बारिश गिर रही थी। इस तरह कभी नाव से उतर कर और कभी नाव में चढ़ कर, रुकते और चलते हुए पहला दिन पूरा हुआ। बरसात बराबर होती रही।

पहली रात हम एक छोटे गाँव में पहुँचे। उस समय वहाँ केवल कुछ बूढ़ी औरतें ही थीं। अपने चार बन्दूक-धारी सैनिकों के साथ हम डाक्टरी सहायता देने वाले परोपकारी दल के बदले कोई आक्रमणकारी दल ही प्रतीत होते थे। औरतें डर गयीं। उन्होंने बताया कि पुरुष जंगल में शिकार के लिए गये हैं और कुछ देर बाद लौटेंगे। हमने उनसे कहा कि हमें तो सिर छुपाने को एक खाली झोंपड़ी की जरूरत है ताकि हम अपने कपड़े वगैरा सुखा कर भोजन की व्यवस्था कर सकें। गाँव भी टूटी-फूटी अतिथिशाला हमें दिखा दी गयी। किसी तरह हमने हाथ-मुँह धोये, आग के पास बैठ कर कपड़े सुखाये, अपना वही सी-राशन का खाना गर्म करके भोजन किया। फिर तुरन्त ही हमनें मच्छरदानियाँ लगायीं और बिस्तर खोल कर निद्रा देवी की गोद में चले गये। रात को गर्मी पहुँचाने वाली शराब और पुख्ता जमीन के सपने देखते रहे।

सुबह झोंपड़ी के पास गाँव-वालों की भीड़ जमा होने की आवाजों से मेरी नींद टूटी। हमें किसी क़िस्म का भय न था, क्योंकि यह गाँव नाम-था के काफ़ी नजदीक था और हमें मालूम था कि यहाँ के कई आदमी हमारे अस्पताल आ चुके थे। कुछ पुराने बीमारों को हमने पहचाना। यहाँ ज्यादा लोगों को डाक्टरी इलाज की आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि ये लोग अक्सर नाम-था आया करते थे।

यद्यपि मौसम में जरा भी सुधार नहीं हुआ, फिर भी हमारी यात्रा दसगुनी अधिक रोचक हो गयी। हम गहरी घाटियों से गुज़र रहे थे, परन्तु किनारों पर यहाँ ऊँची-ऊँची चट्टानें नहीं थीं, हरे-भरे विशाल जंगल खड़े थे। हम अपनी-अपनी नावों में बैठे हुए अपने साथियों को बार-बार पुकारते और कहते जाते थे—"देखो, कैसा जानवर है वह! उसे देखा, कौन सी चिड़िया थी वह? बन्दर तो नहीं था?" वगैरह।

उस रोज हमने कई गाँवों में मुक़ाम किया। एक गाँव में हमने अपना वही भोजन किया। नदी के किनारे का हर गाँव अपने अलग रोग से पीड़ित था। कोई भी रोग ऐसा न लगता था जो एक से दूसरे गाँव आया हो या आ सकता हो। ये गाँव एक-दूसरे से बिलकुल असम्बद्ध हैं। इनमें परस्पर न व्यापार होता

है न आवागमन। जहाँ तक प्रगति का प्रश्न है यह स्थिति हानिकर है, तथापि इससे यह लाभ भी है कि संक्रामक रोग नहीं फैल पाते। कुछ गाँवों में हैजा था, कुछ में पेचिश। खुजली, दाद, बेरी–बेरी, मलेरिया, पेट में कीड़े और फफोले सभी गाँवों में समान रूप से फैले हुए थे। इस दुर्दशा को सहन करने की शक्ति मुझमें कभी नहीं आयेगी।

हमने दूसरी रात जिस गाँव में काटने का फ़ैसला किया था, उसके बारे में हमारा ख़याल था कि वहाँ विरोधी प्रचार ने कुछ असर किया होगा। इसलिए हम कुछ शंकित थे। गाँव बहुत गरीब था और बहुत ही अलग पड़ता था। नाम-था से भी उसका सम्बंध न था। जंगल की बग़ल से चल कर हम गाँव पहुँचे। एक पहाड़ से सट कर वह बसा हुआ था। हमने मुखिया के घर का पता पूछा। हमें रास्ता बता कर सारा गाँव ही हमारे पीछे–पीछे उस ओर को चल दिया। एकाएक एक आदमी अपने लड़के को लेकर भीड़ से बाहर निकल आया। लगता था कि वह आदमी गाँव का कोई प्रमुख व्यक्ति था। हमारे पास आ कर वह घुटनों के बल बैठ गया। अपने हाथ अपने मुख के सामने कर के वह हमें धन्यवाद देने लगा और अपने गाँव में उसने हमारा स्वागत किया। नाम-था में शुरू के दिनों में हमने उसके लड़के के 'काशिओरकोर' रोग का इलाज किया था। हमने लड़के को स्वस्थ कर के पिता को रोग की पुनरावृत्ति रोकने के उपाय बता दिये थे। लड़के ने जान के पास आ कर अपने हाथ उसकी कमर में डाल दिये। उसके मन में किसी प्रकार का डर न था क्योंकि मेरे साथियों की दया-ममता का उसे अनुभव हो चुका था। इससे गाँव में तुरन्त ही हमारे प्रति सद्भावना पैदा हो गयी और तास्सीएँग ने अपने घर की सीढ़ियों पर आ कर हमें अन्दर बुला लिया।

यह बूढ़ा तास्सीएँग खूब आदमी था। उससे हमने कई सवाल पूछे। हमने पूछा कि अपने गाँव में कभी पहले भी उसने गोरे लोग देखे थे। उसने कहा–"नहीं।" फिर हमने पूछा कि उसे या उसके परिवार के दूसरे लोगों को जो सब वहीं बैठे थे, हम कुछ अजीब लोग तो नहीं दिखायी देते। उसने ईमानदारी से जवाब दिया–"हाँ" जैसे-जैसे सन्ध्या बीतती गयी उन लोगों के प्रति हमारी और हमारे प्रति उन लोगों की दिलचस्पी बढ़ती गयी। हमने उससे पूछा कि उसने अपने गाँव में चीनी लोग भी कभी देखे थे या नहीं। उसने जवाब दिया–"हाँ; चीनी लोग यहाँ अक्सर आते हैं, पर हाल में कुछ दिनों से नहीं आये हैं।" मैंने पूछा–"कब से?" बूढ़े ने बताया–"यही कोई दस मौसमों से।"

यदि इस गाँव में प्रचार हो रहा था तो इस क़बीले के लोग ही कर रहे थे, चीनी लोग नहीं। बहुत बार साम्यवादियों ने उत्तरी लाओस के क़बायली युवकों और युवनियों को चाँदी का लोभ देकर युन्नान और कैंटन बुलाया था। उन चीनी प्रदेशों में धीरे-धीरे और नर्मी से, लेकिन दृढ़तापूर्वक साम्यवादी धारणाएँ उनके मस्तिष्क में बैठायी जाती थी। साम्यवादी इन लोगों को तरह-तरह के सब्जबाग़ दिखाते थे और विशेषतया "प्रगति" के सपने दिखाते थे। इन युवकों और युवतियों के मन में यह विश्वास बैठ जाता था कि ये नये भूमि-सुधारक उनके पिछड़े हुए गाँवों का कुछ हित करेंगे। तब वे अपने पूर्वजों के गाँवों को लौट कर असत्य के प्रचारक बन जाते थे। अपने गाँवों के अज्ञानी लोगों से वे कहते थे—"हम स्कूल बनायेंगे। हमें पढ़ना-लिखना आता है और हम चाहते हैं कि आप लोग भी ज्ञान प्राप्त करें।" और भोले-भाले लोग ज्ञान प्राप्त करने की लालसा ले कर उन्हें सहयोग प्रदान करते थे।

इन गाँववालों को राजनीतिक क्षेत्र की किसी भी बात का पता नहीं है। उन्हें मालूम नहीं है कि दुनिया में कैसी खाई पड़ गयी है। दो विभिन्न विचार-धाराओं का उन्हें ज़रा भी ज्ञान नहीं है—एक ईश्वर के प्रति आस्था रखने वालों की और दूसरी अनीश्वरवादियों की। उन्हें ख़याल तक नहीं है कि अमरीका क्या है और कहाँ है?

इन लोगों के मन में घृणा पैदा करना कठिन है। यह इस देश की रीति है कि गाँव में जो भी अतिथि आये उसका आदर-सत्कार करना चाहिए। आम तौर पर गाँव का कोई बड़ा-बूढ़ा चाँदी के एक बर्तन में पुष्प, मोमबत्तियाँ और भेंट की अन्य वस्तुएँ ले कर हमारा स्वागत करने के लिए नदी पर उपस्थित रहता था।

इस छोटे-से गाँव में एक अनोखापन था; इसमें चलने वालों के लिए मार्ग पर पटरी बनी हुई थी। सारे देश में मैंने सिर्फ़ इस गाँव में ही ये पटरियाँ देखीं। एक ख़ास बात यह थी कि यहाँ पटरी सड़क के बीच में थी। बरसात से सड़क पर इतना ज्यादा और गहरा कीचड़ हो गया था कि गाँव-वालों ने सड़क के बीच ऊँचा रास्ता बना दिया था। उसके दोनों किनारों पर मुंडेर भी लगी थी। मिट्टी के ढेले और पत्थर जमा कर यह पटरी बनायी गयी थी, ताकि चलने वालों के पैर रपटने से बचे रहें।

इन लोगों को हम अमरीकी दर्शनीय वस्तु लग रहे थे। हमारा डिब्बे खोल कर भोजन बनाने का सामान निकालना, खाना पकाना, कुछ अजीब से उप-करणों से भोजन करना, काफ़ी का काला पाउडर, दूध का सफेद पाउडर,

और शक्कर मिला कर उसमें खौलता हुआ पानी डाल कर काफ़ी बनाना— यह सब विचित्र रंग-ढंग देख कर उन्हें बड़ा आनन्द आ रहा था; जिसने ये चीज़ें पहले कभी न देखी हों उसके लिए हैं भी बहुत अजीब। इन गॉव-वालों के लिए हम संसार की सबसे मनोरंजक और दर्शनीय चीज़ थे तथा हमारी औषधियों का चमत्कार अत्यंत ग्राह्य। उन्होंने हमारे बारे में थोड़ी-बहुत बातें सुन रखी थीं और हमें सशरीर देखने को वे उत्सुक थे। इस गॉव में कई लोग रोगों से पीड़ित थे, परन्तु लाओस में मानसिक रोगों का नामो-निशान भी नहीं था। अपने साल भर के आवास में मैंने वहाँ मामूली-से मानसिक रोग का भी कोई रोगी नहीं देखा।

प्राचीन नक्शे के अनुसार नेल गाँव पर हमारा आधा रास्ता तय होता था। तीसरे दिन तीसरे प्रहर के बाद हम इस गाँव में पहुँचे। दूसरे गाँवों जैसा ही यह गाँव था, कुछ बड़ा ज़रूर था और पुलिस की चौकी भी थी इसमें। बरसात तो हो ही रही थी। उस बरसात में ही गॉव का मुखिया हमारा स्वागत करने आया। इस आदमी को लिखना और पढ़ना आता था और फ्रांसीसी भाषा भी थोड़ी-बहुत बोल लेता था। काफ़ी बड़ा और बढ़िया मकान था उसका। फ्रांसीसी प्रशासन के ज़माने में कई बरस वह राजधानी वियंतियेन में रह चुका था।

उसके मकान से लगा हुआ था छोटा-सा औषधालय, जिसमें एक पुरुष नर्स के रूप में नियुक्त था, लेकिन जिसके पास दवा के नाम पर एस्पिरिन, कुनैन और पट्टियाँ भी नहीं थीं। कानूनी रूप से वह शाही राज्य के जन स्वास्थ्य-विभाग के मातहत था, परन्तु नियमित रूप से उसके पास दवाइयाँ आदि पहुँचाने का कोई उपाय ही नहीं था। शाही सरकार इस क्षेत्र में बड़ी मात्रा में दवाइयॉं और सामान भेजने से डरती थी कि कहीं वे चीज़ें लुटेरों के हाथ में न पड़ जायें।

यहॉं हम बहुत रात गये तक रोगियों को देखते रहे। एक औरत के गाँठ थी; एक लड़के की आँख में वह बीमारी थी जिसमें आंख की पुतली सफ़ेद और उभरी हुई गोली-सी बन जाती है; कंठमाला कई औरतों के थी; और एक पुरुष हर्निया (आंत उतर जाने की बीमारी) से पीड़ित था।

मैंने दवाओं के कई बक्स उस पुरुष नर्स को दे दिये। वह काफ़ी बुद्धिमान जान पड़ता था। उसने हमारा बहुत आभार माना। यहाँ की सारी बातें हमने बाद में मंत्री महोदय को बतायीं।

मुखिया ने हमें भोजन कराया। भोजन में हमारी अपनी चीज़ें भी शामिल थीं। भोजन करने के बाद हमें अतिथि-कक्ष में ठहराया गया। रक्षकों के अग्रगामी दल ने उसे हमारे आगमन की सूचना पहले से दे दी थी, इसलिए उसने हमारे लिए

चारपाइयाँ बनवा दी थीं। "ये अजीब गोरे आम लोगों की तरह पत्तों की चटाइयाँ बिछा कर फ़र्श पर नहीं सोते। न जाने क्यों ये अपने गद्दे एक लकड़ी के चौखटे पर बिछाते हैं और उसे चारपाई कहते हैं।" उसने यह चारपाइयाँ हमारे लिए बनवायी थीं, परन्तु नाप में गड़बड़ हो गयी थी। वे चौड़ी इतनी ही थीं कि उन पर आदमी चाहे पेट के बल, चाहे पीठ के बल चुपचाप सीधा पड़ा रह सकता था। करवट लेने की कोशिश करता तो सीधा ज़मीन पर आता। छः फ़ुट लम्बे बाब बेचारे की रात बड़ी मुश्किल में बीती।

अगले दिन सुबह जल्दी ही हम वहाँ से चल दिये। कई घंटों के बाद एक नाव बड़ी तेज़ी से हमारा पीछा करती हुई आती दिखायी दी। जब वह हमारे करीब पहुँच गयी, तो उसमें बैठे हुए आदमी ने हमें बताया कि वह नेल के उत्तर में कहीं रहता था। नेल में उसकी बहन रहती थी। रात को हमारे पहुँचने पर उसकी बहन को जब मालूम हुआ कि हम लोग ही नाम-था के वे गौरांग डाक्टर हैं, जिनकी चर्चा वहाँ भी लोगों ने सुन रखी थी, तब वह तुरन्त अपने भाई के गाँव को पैदल ही रवाना हो गयी और उसे साथ ले कर सुबह वापस पहुँची। लेकिन तब तक हम लोग रवाना हो चुके थे। अतः एक नाव ले कर वे हमारे पीछे आये। उस आदमी की लड़की मरणासन्न अवस्था में थी।

नदी और जंगल के कारण आस-पास कहीं ठहरना सम्भव न था। इसलिए हम अगले गाँव तक चलते गये। वहाँ वह आदमी अपनी पुत्री को अतिथिगृह में लाया। उसे बहुत खतरनाक क़िस्म का निमोनिया था। उसकी साँस में अंतिम क्षणों की घरघराहट सुनायी दे रही थी। उसके दिल की धड़कनें इतनी धीमी पड़ गयी थीं कि मैं बहुत मुश्किल से उन्हें सुन पाया। उसके होठ आक्सीजन की कमी से नीले पड़ गये थे। हमने उसके लिए भरसक कोशिश की, उसे दवाइयाँ दीं, और अन्त में उसके पिता को कई दिन तक इलाज जारी रखने के लिए पर्याप्त औषधियाँ दे दीं। मैं जानता था कि वह सारा इलाज बेकार था क्योंकि उसका जीवित रहना सम्भव न था। उसकी आयु केवल तीन वर्ष, यानी मेरी भतीजी की आयु के बराबर थी।

वह रात हमने खा-खो गाँव में गुज़ारी। यह छोटा-सा गाँव घृणाजनक था। यहाँ हम पर सबको वास्तव में सन्देह था। गाँव के हर बच्चे को कुक्कुर खाँसी हो रही थी। रात का वातावरण उस खाँसी की आवाज़ों से गूँज रहा था। हमारे पास 'टेट्रामाइसीन' जो इस रोग की रामबाण औषधि है, बहुत थी; परन्तु बच्चों के गले में अचल रूप से अटका हुआ ऐसा कफ़ मैंने और कहीं नहीं देखा। रात जागते हुए कटी और सुबह हम अपना सामान लाद कर चल पड़े।

सामान का वज़न अब काफ़ी हल्का हो गया था। हम और कई गाँवों में रुके। दोपहर के लगभग सूर्य ने दर्शन दिये जो बहुत भला मालूम हुआ।

हम चलते गये और रात पड़ते-पड़ते मिकोंग नदी पर पहुँच गये। बान-पीक-था गाँव में नाम-था नदी विशाल महानद मिकोंग में जा मिलती है। यह पुराना गाँव बहुत सुन्दर है। दोनों नदियों के बीच की उपजाऊ और हरी-भरी धरती पर बसा हुआ है। गाँव छोटा ज़रूर था और कीचड़ से भरा भी था, तथापि उसकी एक प्रकार की शान दिखायी देती थी।

गाँव का मुखिया हमें एक बड़े परन्तु जीर्ण-शीर्ण घर में ले गया। दीमक ने उस घर पर क़ब्ज़ा कर रखा था। किसी ज़माने में वह घर सुन्दर रहा था क्योंकि वह प्रान्त के गवर्नर का निवासस्थान था। लापरवाही और मौसम ने उसे लगभग उसी मिट्टी जैसा बना दिया था जिससे उसका निर्माण हुआ था। गवर्नर का स्थान उठ कर उत्तर में नाम-था चला गया था। हमें ठहराने के लिए मुखिया के पास यही सबसे बढ़िया मकान था और हमें भी वह उस समय तो बकिंघम महल से किसी तरह कम नहीं दिखायी पड़ा। भोजन के बाद आधी रात तक हम बीमारों को देखते रहे। किउ इस यात्रा में हमारे साथ आया था और दुभाषिये का काम वही कर रहा था। चई को मैंने अपने साथियों के सामान के साथ हवाई जहाज़ से वियंतियेन भेज दिया था, क्योंकि नदी की यात्रा समाप्त होते ही वे अमरीका को रवाना होने वाले थे। उनका सामान बहुमूल्य होने के कारण नदी के ख़तरों में नहीं डाला जा सकता था।

किउ अच्छा दुभाषिया था। मैं यह कभी नहीं भूल सकता कि एक रोज़ रात को नाम-था में जब मैं साइकिल पर सवार हो कर गवर्नर के घर गया था, तो लौटने पर मुझे उसने नम्रतापूर्वक डाँटा था। गवर्नर का घर पास ही था, परन्तु मेरी चल कर जाने की इच्छा नहीं हो रही थी। मैंने कहा कि आख़िर साइकिल पर सवार हो कर जाने में बुराई क्या है। उसे चिन्ता थी "मान" की। प्रत्यक्षतया इस "मान" पर मैं पर्याप्त ध्यान नहीं देता था। जान यूरोप में रह चुका था। अतः उस बात को वह ज्यादा अच्छी तरह समझता था। जान हर मौक़े पर उचित बात कहने में प्रवीण था और कभी किसी को नाराज़ नहीं करता था। परन्तु मेरा तेज़ मिज़ाज कभी-कभी बड़ी मुश्किल पैदा कर देता था।

उस रात को मैं बहुत थका हुआ था और मेरा मिज़ाज बिगड़ा हुआ था। बीमारों की भीड़ वैसे ही पेश आ रही थी जैसे कि अक्सर आया करती है; सब लोग मुझ पर गिरे पड़ रहे थे जिससे मुझे साँस लेने में भी कठिनाई हो रही थी,

स्टेथोस्कोप से रोगियों के सीनों के अन्दर की आवाजें सुनने की तो बात ही क्या! मैंने किउ को आदेश दिया कि वह रोगियों से पीछे हट जाने को कहे क्योंकि मेरा दम घुटा जा रहा था। उसने अपने सिखाये-पढ़ाये, शरीफाना ढंग से कुछ कहा; परन्तु लोग सरके तक नहीं। मैंने उससे भीड़ को पीछे हटा देने के लिए फिर कहा। मुझे कुछ डर-सा लग रहा था। उसने फिर कुछ कहा। आखिर मैं उसकी ओर मुँह करके चिल्लाया कि वह लोगों से पीछे हटने को कहे अन्यथा मैं रोगियों को नहीं देखूँगा। मुझे गुमान तक न था कि मेरे इस तरह चिल्लाने से दुभाषिये के "मान" पर बन जायेगी। किउ भी थका हुआ था और उसका मिजाज भी शायद मेरी ही तरह बिगड़ा हुआ था, सो मेरे चिल्लाते ही वह वहाँ से चल दिया और काम करने से उसने इन्कार कर दिया। जान मेरी तरफ से उससे माफी माँगने और उसे लौटा लाने की कोशिश करने उसके पास गया; परन्तु असफल रहा क्योंकि यह उसके "मान" का प्रश्न था। हमें उसके बिना ही रोगियों को देखना पड़ा। हम सब पर, लाओ लोगों पर भी एक तनाव-सा छाया हुआ था। अतः हम अगर यों चिड़चिड़ा उठते थे तो इसमें अचरज ही क्या!

बाल्टी भर कर नदी के पानी से नहाते समय, भोजन करते समय या रोगियों को देखते समय लोग जमा हो कर हमें देखते रहते थे। वे खाँसते जाते थे, थूकते जाते थे और हमें देखते रहते थे। परन्तु उनकी मुस्कान इतनी सुन्दर और वास्तविक होती थी कि मैं वास्तव में कभी उनसे नाराज न हो पाता था।

उस रोज रात को बहुत देर बाद जब हम रोगियों को देख चुके, तब बान-पाक-था के मुखिया ने हमें अपने घर आमंत्रित किया। हम किसी तरह बचना चाहते थे; परन्तु जाना पड़ा और जाने के बाद हम प्रसन्न ही हुए। उसने हमारे लिए दावत का प्रबंध किया था। हमें बढ़िया शोरबा मिला, बढ़िया लाओ शराब मिली और आलू भी मिले, जो एशिया में हमने कुछ बार ही खाये होंगे।

दूसरे दिन सुबह हमने नावें बदलीं। अब हम मिकोंग नदी से सभ्य संसार के निकट पहुँच रहे थे। यहाँ बड़ी और मोटर वाली नावें चलती थीं। ये नावें लुआंग परबंग से बान-पाक-था और यहाँ से आगे बर्मी सीमा तक चावल ढोती हैं। ऐसी ही एक नाव पर हमें जगह मिल गयी और चावल के बोरों के ढेर पर हमने अपना आसन जमाया। अपने पास की शेष औषधियाँ हमने बान-पाक-था में स्कूल के अध्यापक को दे दीं थी। अपना व्यक्तिगत सामान, तथा लोगों से मिले हुए उपहार लेकर हम बान-पाक-था से लुआंग परबंग को रवाना हुए।

ये बड़ी-बड़ी मोटरवाली नौकाएँ मिसिसिपी नदी पर चलने काले शिकारों जैसी होती हैं। हमारे सामने प्रश्न यह था कि हम मुख्य डेक पर बोरों पर बैठे हुए खटमलों का शिकार करें या दूसरे डेक की टीन की छत पर पड़े-पड़े अपने शरीर को सूरज की तेजी में तपने दें। मेरा रंग कुछ ज्यादा गोरा है और अब तक मैं खटमलों का काफी अभ्यस्त भी हो गया था, इसलिए मैं तो बोरों पर ही डटा रहा; परन्तु मेरे साथी दूसरे डेक पर चले गये और धूप में उन्होंने अपने शरीर को खूब सेका भी। मैंने दूरदर्शिता का परिचय देते हुए एक किताब साथ ले ली थी, सो बोरों के ढेर पर बैठ कर मैं "दि ग्रेट एलायंस" पढ़ता रहा। यह पुस्तक विंस्टन चर्चिल द्वारा लिखित युद्ध के इतिहास का एक खंड है। अपने महान मित्र इंग्लैंड के विषय में ज्ञानार्जन करने के लिए इस लम्बी-चौड़ी दुनिया में एशिया की विशाल नदी, मिकोंग से ज्यादा अच्छी जगह कौन सी हो सकती थी?

आठवें दिन अपराह्न में हम अभी मिकोंग नदी के इस "क्वीन मेरी" जलपोत पर जानवरों, औरतों, मजदूरों और सूखे हुए माँस जैसी तरह-तरह की चीजों के बीच पड़े हुए थे कि किउ ने, जिसका मिजाज अब पहले से बहुत ठंडा हो चुका था, आ कर हमें बताया कि पोत के चालक से उसने सुना था कि हम लुआंग परबंग के निकट पहुँच गये हैं। हम तुरन्त उठ कर छत पर पहुँचे और कुछ ही देर में लुआंग परबंग का प्राचीन सुन्दर नगर दृष्टिगोचर होने लगा। सबसे पहले दिखायी दिया मुख्य पगोडे का सुनहरा उच्च शिखर। वसन्त ऋतु में पेरिस या शरद् ऋतु में मनहट्टन भी हमें उससे अधिक सुन्दर न जान पड़ता।

जैसे ही मल्लाहों ने उतरने का तख्ता लगाया हम लोग पोत से उतर पड़े और किनारे पर चढ़ कर सड़क पर आ पहुँचे। यहाँ ठोस धरती पर पैर रखने के बाद हमें अनुभव हुआ कि नदी की यात्रा वास्तव में समाप्त हो गयी थी। हमें लगा मानो ये कुछ अन्तिम दिन पिछले पूरे महीने से अधिक उपयोगी रहे थे। हमने सचमुच अमरीकी मानवता को इस देश के अत्यंत अज्ञात और अछूते प्रदेश में पहुँचा दिया था। हमें लगा जैसे हमने अपने देश, इन्सान और ईश्वर के नाम पर कुछ सेवा-कार्य किया।

दो साइकिल-रिक्शाओं में बैठ कर हम लुआंग परबंग में अमरीकी सूचना विभाग (यूनाइटेड स्टेट्स इंफारमेशन सर्विस) के प्रमुख डोल्फ ड्रोज के घर पहुँचे। डोल्फ ने हमें देख कर कहा कि हम ऐसे लग रहे थे जैसे अभी साम्यवादियों के पंजे से छूट कर आये हों। परन्तु गर्म पानी से स्नान करने और ठंडी बीयर पीने के बाद हमारी सूरत ही नहीं बदली, हममें नयी उमंग भी आ गयी।

वियंतियेन लाओस की प्रशासनिक राजधानी है; परन्तु लुआंग परबंग प्राचीन धार्मिक राजधानी है। नरेश का महल यहीं है। सब राजकुमार यहीं रहते हैं, दरबार यहीं लगता है। दूसरे दिन अपराह्न में हमने लाओस के वाइसराय, हिज हाईनेस राजकुमार फेटसेराथ से भेंट करने का निश्चय किया। मेरे साथी कुछ ही दिन में विमान से बैंकाक जानेवाले थे; इसलिए यही समय उपयुक्त ठहराया गया। हमने डोल्फ से कहा कि वह कैमरा ले कर साथ चले और हमारे लिए कुछ तस्वीरें उतारे। इसमें डोल्फ को विशेष रूप से दिलचस्पी थी क्योंकि राजकुमार फेटसेराथ अपनी बातों से सदैव अमरीका के पक्ष में नहीं जान पड़ते थे। राजकुमार के राजनीतिक विचार कुछ भी रहे हों, उनका सामाजिक और मानसिक आचरण बहुत आकर्षक था। अपनी जनता के प्रति उन्हें गहरी दिलचस्पी थी और इसे वे छिपाते नहीं थे। उन्होंने थाईलैंड की बहुत ही अच्छी नस्ल की कुछ मुर्गियाँ हमें भेजी थीं।

हम उनके महल में गये। लुआंग परबंग के बाहर ही नदी के मोड़ पर बड़ी सुन्दर जगह में वह बना हुआ है। अत्यन्त सुन्दर बाग है उसका और उसकी देख-भाल भी खूब होती है। एक घंटे तक हम राजकुमार से बातें करते रहे। इस बीच डोल्फ ने कुछ सुन्दर चित्र उतारे। राजकुमार ने हमारी नदी की यात्रा के प्रति और इस यात्रा में जो-जो रोग हमने देखे थे इनके प्रति बहुत दिलचस्पी दिखायी। फिर उन्होंने मुझसे अस्पताल की समस्याओं के बारे में पूछा और यह भी पूछा कि हर रोगी के पीछे चावल का क्या खर्च बैठता था।

डोल्फ ड्रोज अपने प्रमुख हैंक मिलर के समान उन व्यक्तियों में से है जो राजाओं के साथ उठते-बैठते हैं, परन्तु रहते हैं जनता जनार्दन के साधारण सदस्य ही। उसके पिता मोंटाना में आ कर बस गये थे। डोल्फ ने संवाददाता से ले कर नाइटक्लबों में विदूषकों तक, अनेक प्रकार का काम किया था। छः फीट सात इंच उसका कद है। (उसके प्रमुख हैंक मिलर का सिर्फ छः फीट छः इंच है।) डोल्फ ने राजकुमार को बताया कि जब वह थाईलैंड में था तब लोग उसे "प्रेत" कहा करते थे। राजकुमार इस बात को तुरन्त समझ गये। प्रतीत होता है कि प्राचीन स्याम में "प्रेत" एक विशालकाय राक्षस का नाम था जो ताड़ के पेड़ जितना लम्बा और उतना ही दुबला था। यह राक्षस झुक कर दुष्ट लोगों को पकड़ कर खा जाया करता था। इस अवसर पर मैंने राजकुमार को अपनी भावी योजना बतायी। मैंने कहा कि मेरा धन तो लगभग सब चुक गया है और मेरे दोनों साथी

अब अमरीका जा रहे हैं, क्योंकि अगले सत्र से उन्हें नाटर डेम विश्वविद्यालय में दाखिल होना है। अगस्त का महीना तो यह था ही।

हमने बताया कि स्थानीय आदमियों को हमने पर्याप्त रूप से प्रशिक्षित कर दिया है और हमें उम्मीद है कि हमारे बाद वे काम चला लेंगे। मैंने हँस कर कहा कि मैं आया था लाओ लोगों की सहायता करने; परन्तु किया यह कि अपना काम ही समाप्त कर दिया! अब वहाँ मेरी अनुपस्थिति में भी काम चलाया जा सकता था! राजकुमार ने तुरन्त कहा—"यह तो बहुत अच्छी बात है!" मुझे आश्चर्य-चकित हुआ देख कर उन्होंने कहा "सहायता ऐसी ही होनी चाहिए डाक्टर!—सहायता से लोगों को सहायता करने वाले व्यक्ति या उसके देश पर ज्यादा निर्भर नहीं होना चाहिए। सहायता का रूप ऐसा होना चाहिए कि वह अपनी आवश्यकता ही समाप्त कर दे।" विचार करने पर मुझे भी इस कथन से सहमत होना पड़ा।

कुछ और योजनाओं पर हमने विचार किया। राजकुमार ने मुझे वियंतियेन पहुँचने पर स्वास्थ्य मंत्री और प्रधान मंत्री से भेंट करने की सलाह दी। अगले दिन हम वेहा अखत के छोटे विमान से प्रस्थान करने वाले थे। मेरे दोनों साथियों को कुछ दिन बाद बैंकाक और वहाँ से अमरीका जाना था। मंत्रियों से मिलने का काम मेरे जिम्मे था।

जब हम लोग चले तो राजकुमार महल से जीप तक हमें विदा करने आये। जनतांत्रिक अनुसार हमसे हाथ मिलाते हुए उन्होंने कहा—"मेरी जनता के निमित्त आप लोगों ने जो कुछ किया है, उसके लिए धन्यवाद। फिर हमारे देश में आइयेगा।"

अध्याय ११

मंत्री महोदय की सहमति

अगस्त के प्रारम्भ में हम वियंतियेन पहुँचे। जान और बाब फरवरी से नाम-था में थे। इस बीच उन्हें काम से छुट्टी बहुत कम मिली थी; फिर भी काम उन्होंने बहुत खूबी से किया था। डाक्टरी की कोई शिक्षा उन्होंने पहले नहीं पायी थी, इसलिए उन्हें बिलकुल विश्वास न था कि जिन बातों का ज्ञान इस काम में आवश्यक था उन्हें वे कभी सीख भी सकेंगे। परन्तु बहुत कम समय में ही वे असाधारण काम करने लगे। पीड़ा, भूख और अज्ञान हमेशा से चले आ रहे हैं तथा दुनिया की

और सब चीजों से अधिक अन्तर्राष्ट्रीय हैं। अमरीका इनसे लोहा लेने के लिए अच्छी तरह सुसज्जित है। करुणा, बुद्धि और लगन इन पर विजय प्राप्त कर सकती हैं, इसका प्रमाण मेरे साथियों ने दिया। साथ ही इस विजय में जान और बाब ने उस निर्मल और तीव्र हर्ष का अनुभव किया जो सेवा में प्राप्त होता है। उनकी प्रशसा में मैं यही कह सकता हूँ कि वे श्रेष्ठ अमरीकी हैं और मुझे इसका गर्व है कि वे मेरे दल में सम्मिलित हुए।

विर्यंतियेन से उनके रवाना होने के बाद मैं अकेला रह गया। परन्तु काम अभी पूरा नहीं हुआ था। मैं अपने प्रस्थान की योजना बनाने के लिए स्वास्थ्य मंत्री से मिलने गया। मैंने अपना कार्यक्रम तैयार कर लिया था। मैं मंत्री महोदय के सामने अपने प्रस्ताव पेश करके एक विनती करना चाहता था। हमने नाम-था में अस्पताल कायम कर दिया था और अब यही आश्वासन चाहते थे कि हमारे जाने के बाद भी अस्पातल चलना रहेगा। हमने सारा काम इस ढंग से किया था कि हमारे प्रस्थान से हमारी जगह पूर्णतया रिक्त न हो। हमने एक्स-रे का साज-सामान नहीं लगाया था, न बिजली की कोई बड़ी मशीनें लगायी थी। हमारे पास उलझन-भरे और बहुत नाजुक उपकरण भी नहीं थे। हम दस-बारह बुनियादी 'एंटिबायोटिक' औषधियाँ और कुछ दूसरी दवाएँ काम में लेते थे। अतः उनके उपयोग और मात्राएँ, वे स्थानीय व्यक्ति जो नर्स का काम करते थे, खूब अच्छी तरह जान गये थे। "केअर" उपकरण हमने दाईयों को दिये थे जिससे वे प्रसूति के मामलों में आत्मनिर्भर हो गयी थीं। टीके लगाने का काम स्थानीय व्यक्तियों के द्वारा हो रहा था। इससे ऊँचाई पर घाटियों में रहने वाले हजारों आदमियों को रोगों से सुरक्षित रहने की शक्ति प्राप्त हो रही थी। गन्दगी और बीमारियों का आपसी सम्बंध उन्हें प्रशिक्षा के द्वारा समझाया गया था। मैं चाहता था कि हमारे जाने के बाद हमारी ये सफलताएँ बेकार न जाने पायें। मैं यह सुनिश्चित कर लेना चाहता था कि हमारे बाद भी ठोस और वास्तविक काम होता रहेगा।

मैंने मंत्री महोदय के सामने तीन बातें रखीं। पहली यह कि हमारे अस्पताल को क़ानूनी स्वीकृति मिले। यह हो जाने से अस्पताल में भर्ती किये जाने वाले और साधारण रोगियों की संख्या के आधार पर अस्पताल के लिए अभी एक निश्चित धनराशि की व्यवस्था हो जाती। इसका अर्थ होता कि अस्पताल की इमारतों की देख-भाल के लिए भी कुछ पैसा मिलने लगता। उनके लिए लकड़ी, रंग-रोगन वगैरा अब तक तो मैंने अपने पैसे से खरीदा था, परन्तु इसकी जगह

अब अस्पताल का प्रशासन और उसके लिए धन की व्यवस्था लाओस की सरकार करती और उसके लिए औषधियाँ आदि भी सरकार से ही मिलतीं।

दूसरी माँग मैंने यह पेश की कि मेरे दोनो साथियों का स्थान लेने के लिए बैंकाक में प्रशिक्षित दो नर्सों को नाम-था भेजा जाय। इन नर्सों को थाईलैंड के नर्सिंग स्कूल में बहुत अच्छी तरह शिक्षा मिली थी; परन्तु सारे लाओस में इनकी संख्या बहुत कम थी। फिर भी नाम-था के लिए मैंने दो की माँग की।

तीसरी माँग यह की थी मेरे स्थान पर एक स्थानीय प्रशिक्षित डाक्टर (मेडिसिन इंडोचिनोइस) नियुक्त किया जाय। सारे लाओस में स्वयं मंत्री महोदय को छोड़ कर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के अनुसार एक भी डाक्टर न था। स्थानीय डाक्टर (मेडिसिन इंडोचिनोइस) भी केवल पन्द्रह हैं। उन्होंने हमारे हिसाब से बहुत थोड़ी डाक्टरी प्रशिक्षा पायी है; किन्तु लाओस में ये लोग डाक्टरी कर सकते हैं।

मैंने डा. औदोम से प्रस्ताव किया कि यदि वे मेरी ये माँगें स्वीकार कर लें, तो जितना सामान मैं लाओस लाया था वह सब-का-सब मैं नाम-था के अस्पताल को दे दूँगा, अर्थात् अपनी हर चीज — बिस्तर, मच्छरदानियाँ, कपड़े, मरहम-पट्टी का सामान, शल्य-चिकित्सा के उपकरण, स्टेथोस्कोप, ओटोस्कोप, वार्ड की और घरेलू चीजें तथा लगभग पच्चीस हजार डालर के मूल्य की एंटिबायोटिक औषधियाँ। ये सब वस्तुएँ मैं स्थानीय डाक्टर को सौंप कर अमरीका लौट जाऊँगा।

मंत्री महोदय ने तुरन्त स्वीकृति दे, दी परन्तु इस बात पर आश्चर्य प्रकट किया कि मैं स्वयं चले जाने को तैयार था। मैंने उनसे कहा कि मेरे विचार के अनुसार अमरीका को विदेश में अपना प्रभुत्व स्थापित करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए। हमें ऐसी कोई कोशिश नहीं करनी चाहिए कि कोई देश अपने जीवन की आवश्यकताओं के लिए हम पर निर्भर हो जाये।

डा. औदोम इस दृष्टिकोण से बहुत प्रसन्न हुए। मुझे यह याद था कि राजकुमार फेटसेराथ से मेरे यह कहने पर कि मैंने अपना काम ही समाप्त कर लिया था कितनी शीघ्रता के साथ उन्होंने जवाब दिया था—" बहुत अच्छी बात है।" मंत्री महोदय ने पूछा—" क्या आपको इससे सन्तोष है कि आपका स्थान ऐसा व्यक्ति लेगा जो डाक्टर की हैसियत से योग्यता में आपकी बराबरी नहीं कर सकता?" मैंने उत्तर दिया कि लाओ सरकार की डाक्टरी सहायता की योजनाओं में ये स्थानीय डाक्टर सर्वश्रेष्ठ थे और मुझे इसकी बड़ी खुशी थी कि जो चीज हमने खड़ी की थी उसे अब उनमें से ही एक व्यक्ति सम्हालने वाला था। मेरा विचार था कि अपने प्रस्थान

अपने घर की रुई के तार से उसने उस तौलिये पर चीनी लिपि में अभिवादन के कुछ शब्द काढ़ कर वह तौलिया मुझे भेंट किया था।

"फीस" के बारे में लाओ डाक्टर ने मेरे विचार को स्वीकार कर लिया और कहा कि वह यह रीति जारी रखेगा। सबसे पहले उसने गाँववालों से अस्पताल के अहाते के चारों ओर बड़ी-सी बाड़ बनवानी शुरू की, ताकि भैंसें आदि शल्य-रोगियों के वार्ड के सामने-वाले 'लान' को खराब न कर सकें। मैं सोचने लगा कि मुझे क्यों इस बात का खयाल नहीं आया।

यह डाक्टर वियंतियेन के लाइसेई का स्नातक था। इसके बाद दो साल तक कम्बोदिया के एक "डाक्टरी स्कूल" में शिक्षा पा कर वह "डाक्टर" बना था। वह अभी युवक ही था, परन्तु बहुत बुद्धिमान था और अपने आस-पास के सभी व्यक्तियों को अपने से प्रसन्न तथा प्रभावित करने को उत्सुक था। एशिया की नयी पीढ़ी का उदाहरण था वह—हाथ में घड़ी, पैरों में कीमती जूते और उच्च आदर्श। परन्तु अपने बुजुर्गों की आज्ञा का अब भी बिल्कुल बच्चों की तरह नम्रतापूर्वक पालन करता था।

औषधियों और उपकरणों के समझने-समझाने में कई घंटे हमें लगे। मैंने उसे "स्टेरिलाइजर" (कीटाणु-विरहित करने का यंत्र) चलाना सिखाया, शल्य-क्रिया की मरहम-पट्टी आदि की बातें बतायीं, उपकरणों की देख-भाल के तरीके समझाये। शल्य-क्रिया में वह मेरी सहायता करने लगा। लाओ नर्स और दाइयाँ दूसरे आवश्यक काम करती थीं। वह अपने नये काम के प्रति जागरूक था और उसे बहुत गम्भीर मानता था। रोज रोगियों को वह स्वयं देखता था और जिन रोगियों के बारे में उसे मुझसे परामर्श करना होता था, उन्हें हम दोनों दोपहर से कुछ पहले देखते थे। फिर अपराह्न में हम शल्य-क्रिया करते थे।

सभी गाँव-वालों को मालूम था कि नया लाओ डाक्टर मेरा स्थान लेने वाला है और दोनों नर्सों ने जान और बाब की जगह ली है। जब कभी गाँव-वाले किसी प्रकार शंकित होते, तो एक साल में हमने इस देश में अपने प्रति जो श्रद्धा और विश्वास पैदा किया था, उसे मैं लाओ डाक्टर के प्रति मोड़ने का प्रयत्न करता था। इसकी आवश्यकता भी थी।

गवर्नर ने मेरी विदाई के लिए पार्टी दी, जिसमें सारा गाँव उपस्थित था। लाओस के राष्ट्रीय नृत्य, लाम वोंग का भी आयोजन किया गया। हम अक्सर इसमें भाग लिया करते थे। वास्तव में जान और पीट यह नृत्य करने में प्रवीण हो गये थे। मुझे दुख हो रहा था कि सितम्बर की उस रात को वे मेरे साथ नहीं थे।

गाँव के चौक में मंच बनाया गया और हमारी सिनेमा की मशीन का ध्वनि-प्रसारक यंत्र स्थानीय वाद्य-वृन्द के वाद्यों की ध्वनि के प्रसारण के लिए लगाया गया। इस नृत्य में नर्तक सब एक पंक्ति में एकत्र हो जाते हैं, परन्तु आपस में स्पर्श नहीं करते। एक घेरे में वे संगीत की लय पर गोल-गोल घूमते हैं। बड़ी सुन्दरता से वे अपनी बाँहों और हाथों को घुमा-घुमा कर मुद्राएँ बनाते हैं। नाच के दौरान में नर्तक अपने चेहरों पर किसी प्रकार का भाव प्रकट नहीं करते। पिछले एक वर्ष में लाम वोंग के जितने भी आयोजन हुए थे उन सब में डूली दल का कोई-न-कोई सदस्य अवश्य उपस्थित हुआ था। आज रात मैं अकेला था।

हर रोज गाँववाले और पहाड़ी कबायली लोग मेरे घर आ कर मुझे विदाई के उपहार दे रहे थे। वे मेरे पास बैठ कर इधर-उधर की बातें करते थे, पूछते थे कि अमरीका में मेरा गाँव यहाँ से कितनी दूर था और क्या मैं फिर लौट कर नाम-था आऊँगा। मैं समझता था कि मेरे जाने पर उन्हें अफसोस था। बच्चे थोड़ा-बहुत हँसते थे और मैं भी मुस्कराने की कोशिश करता था। अपनी गहन पीड़ा में भी बच्चे किसी तरह हँस ही लेते थे।

एशिया में मुस्कान और सब देशों से कहीं अधिक व्यापक और प्रभावशाली होती है। एशिया के लोग अपने मन पर पर्दा डालने अथवा मन को प्रतिबिम्बित करने के लिए मुस्कान का प्रयोग करते हैं। क्रोध, भय, ठेस, शंका—सभी भाव मुस्कान से वे प्रकट कर देते हैं। मैंने एशिया के लोगों को मुस्कान के द्वारा अपनी तकलीफ प्रकट करते देखा है, और यह जानते हुए कि जरा सी देर में उनका आपरेशन होने वाला है, वे मुस्कराते हैं। 'आत्माओं' या डाक्टर की कार्रवाई से शंकित होने पर भी इन लोगों के मुख पर मुस्कान थिरकती है।

प्रेम और शोक की प्राचीन गाथाएँ सुनाने वाले चारण ने भी आ कर मेरे लिए सुखी और समृद्ध जीवन की कामना की। उसने कहा कि वह मना रहा था कि मेरे कंधे पर तितली आ कर बैठे; इस शुभ शकुन से मुझे सुख की प्राप्ति होगी। एक बूढ़ी प्रेत-साधिका मेरे पास आ कर बैठी और सुगंधित बत्तियों को उनकी गोल डिबिया में बजाने लगी। फिर उसने अर्द्ध चन्द्राकार पासा जैसा जमीन पर डाला और कहने लगी कि मेरा भविष्य उज्ज्वल जान पड़ता था और उसे लगता था कि मैं लौट कर लाओस आऊँगा। जाते समय उसके जोर की खाँसी उठी; तपेदिक का शिकार हो रही थी वह।

मेरे साथी जा चुके थे और मेरा जीवन अत्यंत एकाकी हो गया था। मैं दर्पण के सामने खड़ा हो कर अपने प्रतिबिम्ब से ही बातें करता था ताकि अपनी भाषा

के दो शब्द सुन सकूँ। सी और चई मेरे अकेलेपन को महसूस करते थे इसलिए भोजन के समय मेरे पास आ बैठते थे। हम अपनी योजनाओं की बातें करते थे। वियंतियेन के अमरीकी समाज में मैंने उनके लिए नौकर की व्यवस्था कर दी थी। मेरे लौटने तक वे वहाँ काम करने वाले थे। और, मेरी योजना तो बहुत सीधी-सादी थी।

मैं अमरीका को लाओस की बातें बताना चाहता था और यह बताना चाहता था कि दया और प्रेम के ताने-बाने से विभिन्न देशों के बीच की खाई को पाटा जा सकता है। किसी ने मुझे एक बार लिखा था कि लाओस में मुझे अपना काम अत्यंत सीमित लगता होगा, यातायात और संचार-साधनों के अभाव, विचित्र रीति-रिवाज तथा दुनिया से अलगाव ने उसे सीमित कर दिया होगा। उसने लिखा था—"मुझे इससे विशालतर क्षेत्र चाहिए।" मैं बताना चाहता था कि आत्मा का क्षेत्र कितना विशाल हो सकता है। विशेष रूप से मैं यह बताना चाहता था कि अमरीका के पास एक साधन है जो हर तरह के बमों से अधिक शक्तिशाली है, परन्तु हमने उसका विकास नहीं किया है। कुरूपता और दुखों से राहत देने वाली शक्ति है वह! वह शक्ति दया और प्रेम की है।

सुबह के समय मैं नाम-था से प्रस्थान करने वाला था। जिस समय मैं सी और चई के साथ उड़नपट्टी पर पहुँचा, सैकड़ों गाँववाले वहाँ उपस्थित थे। जब फरवरी में हम पहली बार उड़नपट्टी से इसी रास्ते आये थे, तब से ये लोग कितने बदल गये थे। अब मैं इनमें से प्रत्येक को जानता था, अंशतः उनका रहन सहन मैंने अपनाया था, उनके जीवन के एक भाग से मैं सम्बंधित हो गया था। मैं भीड़ को पार करता हुआ बढ़ रहा था और वे लोग हाथ बढ़ा कर स्पर्श की मूक भाषा में मुझे धन्यवाद दे रहे थे।

मुझे लग रहा था जैसे यहाँ से जा कर मै कोई अपराध कर रहा था परन्तु इस बात पर मुझे कुछ गर्व भी था कि अब नाम-था में एक अस्पताल बन गया था और उसका सारा काम सुचारु रूप से चलता रहेगा। आश्चर्यजनक बात यह थी कि ये लोग मेरे लिए एक नया महत्त्व धारण कर चुके थे। इनसे मुझे लगाव हो गया था।

विमान उड़ चला। वह फ्रांसीसी चालक जिसका ध्यान आम तौर से इन देहातियों की तरफ जाता भी न था, मुझसे बोला—"ये लोग तुम्हें बहुत चाहते हैं।" मेरा विश्वास है कि उन्हें भी मुझसे लगाव हो गया था।

अध्याय १२

प्रभात की प्रथम किरण

विमान शान्ति से दक्षिण में वियंतियेन की ओर उड़ा जा रहा था। मुझे वे हजारों घड़ियाँ याद आ रही थीं जो मैंने इन गाँवों में बितायी थीं। ओजिसान, बूढ़े जो, मैगी, चाओ खुओंग और काविन जैसे प्राचीन युग के वृद्ध व्यक्तियों से, जिनमें प्राचीन एशिया मूर्तिमान हुआ जान पड़ता था, अपने लम्बे-लम्बे वार्तालाप याद आ रहे थे। मैंने चई और सी को देखा जो सिमटे–सिकुड़े पिछली सीट पर बैठे थे, और जेम्स मिचनर के शब्द मुझे याद आ गये। कभी बहुत पहले मैंने उन्हें पढ़ा था। इस समय वे वाक्य मूर्त्त रूप ले कर, एक नया रूप और अर्थ ले कर मेरे सामने उपस्थित थे। यहाँ के लिए उनकी यथार्थता आश्चर्यजनक थी। मिचनर ने लिखा है:

"एशिया के अधिकांश व्यक्ति आज रात भूखे सोयेंगे।

"एशिया के अधिकांश व्यक्ति गरीबी में पिस रहे हैं।

"एशिया के अधिकांश व्यक्तियों ने डाक्टर की कभी शक्ल तक नहीं देखी है।

"एशिया के अधिकांश व्यक्तियों का विश्वास है कि आज जो कुछ भी उन्हें उपलब्ध है, कोई भी चीज उससे श्रेयस्कर है, तथा वे उसे प्राप्त करने को कृत-संकल्प हैं।

"एशिया के अधिकांश व्यक्तियों को नागरिक स्वतंत्रताएँ कभी प्राप्त नहीं हुई हैं।

"एशिया के अधिकांश व्यक्तियों का विश्वास है कि उनका शोषण करने के पश्चिमी औपनिवेशिक सत्ताओं के अधिकार का ही नाम व्यापार-धन्धों की स्वतंत्रता है।

"एशिया के अधिकांश व्यक्ति सफेद चमड़ी वालों पर अविश्वास करते हैं।

"एशिया के अधिकांश व्यक्ति कृतसंकल्प हैं कि अब कभी वे विदेशियों को अपने पर शासन नहीं करने देंगे।"

बहुतों का कहना है कि जब तक गाँवों के लोग पढ़ना और लिखना नहीं सीख लेते तब तक एशिया में जनतंत्र का अस्तित्व नहीं हो सकता। उनका कहना है कि जनसाधारण, धरती पर जीने वाली जनता की एशिया में कोई शक्ति नहीं है।

देहात के लोग राजनीतिक मामलों पर चतुराई के साथ कदाचित् बातें नहीं करते, परन्तु यदि उनके व्यक्तिगत जीवन में कोई ऐसे तत्त्व आने लगें जिन्हें वे पसन्द नहीं करते तो उनका विरोध सामूहिक कार्रवाई के रूप में प्रकट होता है। केवल एक कारण से उत्तरी वियतनाम के लगभग दस लाख व्यक्तियों का दक्षिण में चला जाना इस बात का उदाहरण है। वे लोग उस राजनीतिक प्रशासन के अधीन जीवन नहीं बिताना नहीं चाहते थे जो अनीश्वरवादी था। शायद उनकी अपनी निष्क्रियता और गोरे महाप्रभुओं की गलतियों ने इस राक्षस को उनके देश में कदम रखने में सहायता दी थी। परन्तु अब वे सक्रिय हो उठे है। अब जबर्दस्त संघर्ष चल रहा है, बहुत सी गलतियाँ भी हो रही हैं। सम्भव है कि भविष्य और भी मुसीबतें लाये। परन्तु यह स्वतंत्रता की प्रसव-पीड़ा है।

अचानक विमान उतरने लगा और वियंतियेन की उड़न-पट्टी पर मंडराने लगा। वह नीचे, और नीचे आता गया। हम उड़न-पट्टी पर जा लगे। विमान के उतरने के सब पहिये अब धरती पर थे। कुछ दूर वह उड़न-पट्टी पर भागता गया, फिर मुड़ा और ठहरने के स्थल पर जा पहुँचा। मैं विदा लेने वियंतियेन आ पहुँचा था।

मैंने राजदूत पार्सन्स से औपचारिक भेंट की। उन्होंने लाओस को लौटने की मेरी इच्छा के फलीभूत होने की शुभ कामनाओं के साथ मुझे विदा किया। आर्थिक सहायता कार्यक्रम के अधिकारियों से मैंने मुलाकात की। मैं जानता था कि परिस्थिति के प्रति मेरी दृष्टि अब पहले से ज्यादा पैनी हो गयी थी। यह दोहराना तो व्यर्थ है कि लाओस के लिए आर्थिक सहायता अत्यावश्यक है। परन्तु बदले में हम किस चीज़ की आशा करें? उनसे गठबंधन की, मैत्री की, हमारी अपनी नीतियों के पालन की? यदि लाओ सरकार सदैव ही "अमरीकी रीति-नीति" का अनुसरण नहीं करती तो हमें तुरन्त उसे आड़े हाथों नहीं लेना चाहिए। एशियाई राष्ट्रों ने हाल में स्वतंत्रता पायी है और उनको स्वाभिमान की भावना अत्यंत तीव्र है। हमारी नीयत चाहे जितनी साफ और पाक हो फिर भी वे किसी भी प्रकार की अमरीकी प्रभुता स्वीकार नहीं कर सकते।

बुद्धिमानों का कथन है कि इस दुनिया में जब कोई आदमी किसी का भी भला करने का बीड़ा उठाता है तो उसे यह आशा नहीं रखनी चाहिए कि और लोग उसकी राह से रोड़े हटायेंगे; उल्टे यही उम्मीद करनी चाहिए कि वे नये-नये रोड़े खड़े करेंगे।

अविकसित एशिया में अभी बहुत तीव्र परस्पर-विरोधी चीजें दिखायी देती है। सौन्दर्य के साथ क्षय के दर्शन होते हैं। साथ ही एक नवीन और अनुप्राणित

जीवन के लिए महान और व्यापक शक्तियाँ व सम्भावनाएँ दृष्टिगोचर होती हैं। सौंदर्य में भयावह तत्त्व भी हैं; और साम्यवाद की विजय होने का परोक्ष संकट बराबर पीछे लगा हुआ है।

अनेक अमरीकी एशिया में इस विजय की रोक-थाम के लिए कार्यरत हैं। अधिकांश अमरीकी बहुत श्रेष्ठ कार्य कर रहे हैं तथापि बड़ी-बड़ी गलतियाँ भी हो रही हैं जो सहज ही दृष्टिगोचर होती हैं। कुछ लोगों की धारणा है कि चूँकि लाओस में लोग धरती के अधिक निकट हैं और भीड़-भरी बस्तियों, धुँए और गन्दगी, कारखाने की बस्तियों और आधुनिक नशीले पदार्थों से दूर हैं, इसलिए वे स्वस्थ और सुखी स्वाभाविकतया हैं। यह धारणा सर्वाधिक घातक है। "उन्हें बदलने की कोशिश मत करो; वे अपने अज्ञान में ही सुखी हैं।" "जो चीज़ वे स्वयं प्राप्त नहीं कर सकते उससे उन्हें परिचित ही मत कराओ।" "वे प्रगति करना ही नहीं चाहते; वे पूर्णतया संतुष्ट और सुखी हैं।" मिथ्या-श्रेष्ठता की यह भावना न केवल भ्रमपूर्ण है अपितु अत्यन्त हानिकर भी है।

हमें चाहिए कि जनतंत्र की अच्छाइयों का बखान करना और ढोल पीटना बन्द करें। हमें चाहिए कि हम स्थल पर पहुँचें और सहज स्वाभाविक तथा प्रेमपूर्ण उपाय से दिखा दें कि जिन लोगों की हम सहायता करना चाहते हैं, उनके साथ मिल कर काम भी कर सकते हैं। हमें चाहिए कि हम अपने को संसार के लिए आदर्श बताना बन्द करें। संयुक्त राष्ट्र अमरीका की जनतंत्र प्रणाली लाओस के लिए शत प्रतिशत उचित नहीं उतरती। कम से कम अभी नहीं। १७७६ से १९५८ तक की अवधि में हमने उसका विकास किया है। एशिया के प्रति हमें धीरज रखना होगा। लाओ राष्ट्र को समय, शिक्षा और प्रोत्साहन की आवश्यकता है।

मेरा विश्वास है कि देश-देश के लोगों के बीच आपसी सम्बंधों पर बल दे कर हम अपने देश को अधिक लाभान्वित कर सकते हैं। (हमारी विदेश सहायता नीति के पीछे निस्सन्देह एक उद्देश्य यह भी है।) हमें बताना चाहिए कि हम इस आपसी सम्बंध को मतभेदों से महान और व्यापक मानते हैं। संसार में फैली हुई मानव जाति को एक बंधन में बाँधने वाले तार राष्ट्रीय ईर्ष्या-द्वेषों से अधिक शक्तिशाली हैं। मानव जाति का एक परिवार है— अपने इस विश्वास को हमें दोहराना चाहिए और अपने कार्यों में मूर्त करना चाहिए। हमें एक बार फिर अपनी यह मान्यता प्रमाणित करनी चाहिए कि "ईश्वर ने इस पृथ्वी पर बसने के लिए एक रक्त से सब मनुष्यों की सृष्टि की है।"

मैंने मंत्रियों से विदा ली और लौट कर आने की अपनी इच्छा उनके सामने दोहरायी। उन्होंने कहा कि राजनीतिक परिस्थितियाँ कुछ भी रहें, मेरे दल का सदैव स्वागत होगा। चई और सी को उनकी सहायता और आत्मीयता के लिए मैंने हृदय से धन्यवाद दिया। तीसरे दिन बैंकाक को प्रस्थान करने के लिए चुपचाप हवाई अड्डे पर जा पहुँचा। बैंकाक से मैं विशालकाय विमान में सवार हुआ। प्रस्थान करने के कुछ घंटों बाद ही पान-अमेरिकन-एअरवेज़ की परिचारिका की शुद्ध अंग्रेज़ी भाषा मेरे कानों में पड़ने लगी। उसके शब्द मेरे कानों को कुछ अनजान से प्रतीत हो रहे थे।

विमान रात का अंधकार चीरता हुआ चला जा रहा था। हलचल-भरे इन पन्द्रह महीनों में जो कुछ गुज़रा था वह मेरे विचारों में घूम रहा था। एकाएक प्रभात की एक छोटी-सी किरण आसमान में प्रकट हुई और आनेवाले कल के किनारे पर मुझे सूर्य का थोड़ा-सा प्रकाश दीखने लगा। मैंने धन्यवाद-स्वरूप भगवान की प्रार्थना की। यह प्रार्थना साधारण प्रार्थनाओं से भिन्न थी, क्योंकि इसमें मैंने अपने लिए कुछ नहीं माँगा था। मैं अब अच्छी तरह जान गया हूँ कि मैं ईश्वर का कितना आभारी हूँ।

जब पिछले नवम्बर में समाचार मिला कि उत्तरी लाओस के अपने "विपक्षी भाइयों" के साथ शाही सरकार ने अपने मतभेद निबटा दिये हैं, तब मैं अमरीका पहुँच चुका था। नयी संयुक्त सरकार बनी जिसमें दो मंत्री पाथेत लाओ के लिए गये। इनमें एक थे राजकुमार सूफ़ानूवोंग। ये पुनर्निर्माण और नगर-आयोजन मंत्री बने। उन्होंने कहा कि साम्यवाद के प्रति उन्हें कभी निष्ठा नहीं थी और न पश्चिम से विरोध। फिर भी कुछ संदेहशील व्यक्तिओं का मत था कि यह साम्यवादियों के अप्रकट प्रवेश का श्रीगणेश था। निश्चयपूर्वक कौन कह सकता है? मैं तो इसे हर्गिज़ नहीं मानता।

लाओस के अपने काम को मैं बिल्कुल अपूर्ण मानता था। वाशिंगटन में पहली बार मेरी उस व्यक्ति से भेंट हुई जिसके पत्र लगभग एक वर्ष से मेरे लिए प्रेरणा का सबसे बड़ा साधन थे। वे व्यक्ति थे डा. पीटर कमांडूरास, वाशिंगटन के प्रख्यात डाक्टर और जार्ज वाशिंगटन यूनिवर्सिटी मेडिकल स्कूल में क्लिनिकल मेडिसिन के एसोसिएट प्रोफ़ेसर।

मेल्फ़ावर होटल में हमारी भेंट हुई और हमने साथ-साथ भोजन किया। डा. कमांडूरास का व्यक्तित्व सुन्दर और भव्य था। पचास से कुछ ऊपर उनकी आयु थी। उनका चेहरा युवकों जैसा था और सर के बाल पक रहे थे। भोजन के

दौरान में मुझे अपने काम के प्रति उनकी दिलचस्पी समझ में आने लगी। सरकारी नियंत्रण से मुक्त रह कर स्वयं डाक्टरों द्वारा विदेशों को अमरीकी डाक्टरी सहायता प्रदान करने की उनकी योजना मेरे विचारों से बहुत आगे बढ़ी हुई थी।

डा. कमांडयूरास ने विदेश सहायता अधिकारियों को अपना सरल-सहज दृष्टिकोण बताया था; परन्तु वे तो केवल लाखों और करोड़ों डालरों की योजनाओं पर ध्यान देते हैं, सो डा. कमांडयूरास अपनी योजना को उनसे स्वीकृत कराने में असमर्थ रहे। मेरी तरह उनका भी खयाल था कि योजना सीधी-सादी होनी चाहिए, मामूली पैमाने पर वह शुरू की जाय और धीरे-धीरे उसे बढ़ाया जाय। मैंने जब आँकड़े पेश करके उन्हें बताया कि मेरे सोलह महीने के काम पर उपहार में मिली हुई औषधियों और उपकरणों के अतिरिक्त पचास हजार डालर से भी कम धनराशि लगी थी तो वे बहुत प्रसन्न हुए।

उनके पास वह अनुभव, प्रकृति और काम का आयोजन तथा निर्देशन करने की योग्यता भी थी, जिसका मुझमें अभाव था। मैं तो इस लम्बे-चौड़े क्षेत्र में अपने को एक मजदूर ही मानता हूँ। अतः उनकी एक बात से मैं चकित रह गया।

उन्होंने कहा – "मैं गम्भीरतापूर्वक विचार कर रहा हूँ कि मैं स्वयं भी इस कार्य का व्रत लूँ। मेरे बच्चों की शिक्षा-दीक्षा लगभग पूरी हो चुकी है, परिवार के लिए पर्याप्त व्यवस्था हो गयी है, और मेरी पत्नी मेरे विचारों से पूर्णतया सहमत है।" वे क्षण भर रुके। उन्होंने एक नजर मुझे देखा। उनकी आँखों में एक चमक थी। फिर वे बोले – "डूली, मुझे भी बहुत-कुछ वैसा ही अनुभव होता है जैसा तुम्हें। जब तक हम स्वयं अपने विचारों पर आचरण न करें तब तक दूसरों को उनका उपदेश कैसे दे सकते हैं?"

एक सप्ताह बाद मैं अन्तर्राष्ट्रीय परित्राण समिति के सुविदित डाइरेक्टरों के समक्ष उपस्थित था। सभापति लिओ चर्न ने मेरा परिचय उनसे कराया और मुझे अपनी कहानी सुनाने का आदेश दिया। "लाओस कार्रवाई" की अपनी रिपोर्ट पेश करके मैं बैठ गया और निर्णय की प्रतीक्षा करने लगा।

एक ने प्रश्न किया – "डाक्टर, अब तुम्हारा प्रस्ताव क्या है?"

मैंने कहा – "मेरा प्रस्ताव है कि छोटे पैमाने पर मैंने जो काम शुरू किया है उसे हम एक कदम और आगे बढ़ायें। यह मैंने सिद्ध कर दिया है कि जैसा दल मेरा था वैसा दल पचास हजार डालर के बजट से सोलह महीने काम कर सकता है। डा. कमांड्यूरास के साथ मिलकर मैंने वैसे छः दल भेजने की योजना तैयार

की है। मेरा दल वापस लाओस जाये ; शेष पाँच दल दूसरे संकट-ग्रस्त क्षेत्रों में भेजे जायें। मेरा प्रस्ताव है कि अन्तर्राष्ट्रीय परित्राण समिति हमारी योजना स्वीकार करे और उसे कार्यरूप में परिणत करे।"

सब चुप थे। मैं बैठ कर विचार-विनिमय शुरू होने की प्रतीक्षा करने लगा।

अन्तर्राष्ट्रीय परित्राण समिति के अध्यक्ष एँजीयर बिडल ड्यूक ने कहा—"समिति पहले एकतंत्रवादी अत्याचारों से भाग कर आये हुए शरणार्थियों की सहायता कर चुकी है। प्रस्तावित डाक्टरी सहायता कार्यक्रम के अन्तर्गत हम एक अन्य प्रकार के शरणार्थियों की सहायता करेंगे—तकलीफों, दुख-दर्द, बेहाली से त्राण चाहने वाले शरणार्थियों की, जो अपने देश में ही शरणार्थी हैं।"

बोर्ड के अधिकांश सदस्यों ने स्वीकार किया कि उपदेश देने और नीति-प्रचार के दोष से मुक्त यह मानवीय कार्य सचमुच उत्तम था। परन्तु प्रत्यक्षतया यह कार्यक्रम अन्तर्राष्ट्रीय परित्राण समिति की परम्परा से मेल नहीं खाता था। एक सदस्य ने कहा—"हमें अपने संविधान में संशोधन करना होगा; परन्तु यह काम आसान नहीं है।"

मैंने सोचा, 'बाउ पिन्ह यान्ह', जैसा कि लाओ लोग कहा करते हैं, और निस्संकोच हो कर पूछा—"क्यों नहीं है?"

मेरी इस ढिठाई और भोलेपन पर सब के सब आनन्दपूर्वक हँस पड़े और फिर समस्या पर विचार करने लगे। एकाएक किसी ने संविधान के संशोधन का प्रस्ताव पेश किया जिसके अंतर्गत हम "संसार के संकट-ग्रस्त भागों को मानवीय डाक्टरी सहायता पहुँचाने का कार्य अंगीकार" कर सकते थे। प्रस्ताव का किसी ने अनुमोदन किया और वह सर्व-सम्मति से स्वीकार कर लिया गया।

यों "मेडिको"—मेडिकल इंटरनेशनल को-आपरेशन (अन्तर्राष्ट्रीय डाक्टरी सहकार)—का अन्तर्राष्ट्रीय परित्राण समिति के एक अंग के रूप में जन्म हुआ। बर्मा के जगत्-विख्यात सर्जन, डा. गोर्डन सीग्रेव बर्मा में इस काम के अध्यक्ष होंगे। इस ग्रीष्म के प्रारम्भ में मैं वापस लाओस को प्रस्थान करूँगा। शेष चार दल डा. कमांड्यूरास के निर्देशन में संगठित किये जा रहे हैं। हमें वालंटियर अनेक मिल गये हैं—डाक्टर, दाँतों के डाक्टर जो अपनी प्रैक्टिस का बलिदान करने को तैयार हैं; नर्सें, टेक्निशियन, समाज-सेवक और जान डीविट्री तथा बाब वाटर्स जैसे कालेज के छात्र जो इन दलों में सम्मिलित होने को उत्सुक हैं।

डाक्टरी के पेशे से सम्बंधित तमाम लोग हमें सहायता प्रदान कर रहे हैं। विशेषज्ञों का एक घूमने-फिरने वाला दल बनाने की योजना तैयार की जा रही है।

एक नेत्र-विशेषज्ञ, एक प्रसूति विशेषज्ञ, एक हड्डी-विशेषज्ञ, एक उष्ण कटिबन्ध भूभाग के रोगों का विशेषज्ञ, आदि लेकर यह दल बनाया जायगा जो 'मेडिको' केन्द्रों का दौरा करेगा, वहाँ रोगियों का उपचार करेगा और स्थानीय डाक्टरों व नर्सों को प्रशिक्षा देगा।

'मेडिको' केन्द्र बहुत बड़े और दर्शनीय नहीं होंगे। (विश्व-व्यापी पैमाने की योजनाएँ बनाने वाले शायद हमें नाचीज़ मान कर हम पर हँसेंगे।) परन्तु डाक्टरों की हैसियत से हम वही काम करेंगे जो ईश्वर ने हमारे लिए नियत किया है—हम रोगियों का और शायद संसार के कुछ सर्वाधिक पीड़ित रोगियों का, इलाज करेंगे।

जहाँ भी जायेंगे वहाँ, और जो भी थोड़े-बहुत साधन हमारे पास हैं, उनसे हम संसार के भोले-भाले लोगों को यह बताने का भरसक प्रयत्न करेंगे कि अमरीकी जनता को वास्तव में उनकी चिन्ता है।

इस मौके पर मुझे डा. स्वित्ज़र का ख़याल आया। मैंने तुरन्त एक पत्र लिखा कर उन्हें हमारे कार्यक्रम और हमारी आशाओं की सूचना दी और यह विश्वास प्रकट किया कि अमरीकी जनता हमें आवश्यक सहायता दे कर हमारा समर्थन करेगी। 'मेडिको' के दल इस महान कार्य में केवल सहायक बन सकते हैं; हृदय तो हमेशा अमरीका में ही रहेगा। मैंने लिखा कि 'मेडिको' के द्वारा अमरीकी लोग दुनिया को दिखा सकते हैं कि वे दूसरे देशों के लोगों की चिन्ता और सहायता तो करेंगे ही, साथ ही यह भी बतायेंगे कि किस तरह इन्सान इन्सान की चिन्ता और सहायता कर सकता है।

मैंने उनसे प्रार्थना भी कि वे हमारे इस संगठन में वह पद स्वीकार करें जो अपने चौरासी वर्ष के जीवन में उन्होंने अब तक स्वीकार नहीं किया था, और यह कहते हुए हमें अत्यधिक आनंद और गर्व अनुभव होता है कि डा. स्वित्ज़र ने मेडिको के सम्मानित संरक्षक का पद स्वीकार कर लिया है।

जिन लोगों ने अतीत में हमारी सहायता की है और जो लोग भविष्य में मेडिको दलों में काम करेंगे तथा उन्हें सहायता देंगे उनके सामने मैं डा. स्वित्ज़र के ये शब्द प्रस्तुत करना चाहता हूँ जो उन्होंने एक पत्र में मुझे लिखे हैं :

"मैं यह नहीं जानता कि आपका भविष्य क्या होगा, परन्तु इतना जानता हूँ कि ..सेवा का मार्ग खोजने और पा लेने से आपको सदैव सुख की प्राप्ति होगी।"

एकमात्र वितरक

इन्डिया बुक हाउस

एरक्सा बिल्डिंग,
२४६, डा. दादाभाई
नवरोजी रोड, बम्बई, १.

३४१८-एच, किंग्सवे,
सिकन्द्राबाद

१, लिन्डसे स्ट्रीट,
कलकत्ता, १६

राउंड वेस्ट,
त्रिचूर

पुरषोत्तम बिल्डिंग,
१६३, माउंट रोड,
मद्रास, २

१, आंध्र देवंग संगम बिल्डिंग,
गांधी नगर,
बेंगलोर, ६

युनाइटेड इन्डिया
अस्युएरेंस बिल्डिंग,
एफ-ब्लाक, कनाट प्लेस,
नयी दिल्ली, १

पर्ल पब्लिकेशन्स प्राइवेट लिमिटेड

१२, वाटरलू मेन्शन्स,
१७०, महात्मा गांधी रोड,
बम्बई, १